CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ज्ञान लोक

४

अनोखे पेड़-पौधे

कृष्ण वल्लभ द्विवेदी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ज्ञानलोक

नई पीढ़ी का ज्ञानकोश

४

अनोखे पेड़-पौधे

: वनस्पति-विज्ञान : पेड़-पौधों की कहानी :

: लेखक :
कृष्ण वल्लभ द्विवेदी

4643

State Museum Library Lucknow

प्रकाशन-गृह
ज्ञानवर्द्धक साहित्य के प्रकाशक
पानदरीबा,
ल ख न ऊ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकाशकीय वक्तव्य

नए भारत के उदय के साथ हमारे ऊपर अनेक नवीन उत्तर-दायित्वों का भार आ गया है ! इनमें से एक है—देश के भावी नागरिकों का स्थान ग्रहण करनेवाली नई पीढ़ी की उचित शिक्षा-दीक्षा का !

उक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्कूलों में पढ़ाई जानेवाली पाठ्य-पुस्तकों के साथ-साथ ज्ञान-विज्ञान की सामान्य जानकारी करानेवाली अन्य सहायक पुस्तक-पुस्तिकाओं की कितनी अधिक आवश्यकता है, यह बताने की जरूरत नहीं है ।

आज यह निर्विवाद स्वीकार किया जा रहा है कि केवल भाषा, गणित या इतिहास-भूगोल की टकसाली जानकारी कराकर ही शिक्षा की लक्ष्य-पूर्ति नहीं की जा सकती ।

आज का युग 'विज्ञान-युग' है ! 'विज्ञान' ही इस युग का मेरुदण्ड है । आज आदमी रेडियो-टेलिविजन, जेट-वायुयान और रॉकेट-भूउपग्रह आदि चमत्कारों के द्वारा तो पृथ्वी को मानो एक तिलिस्म बना ही रहा है, साथ ही परमाणु-शक्ति की कुंजी पाकर, आज वह अन्य लोकों की सैर करने के लिए अंतरिक्ष में छलाँग मारने को भी तैयार खड़ा है !

अतः आज की शिक्षा की पुकार है—नई पीढ़ी को ज्ञान-विज्ञान से सुसज्जित कर वैज्ञानिक दृष्टि से अभिभूत कर देना !

यही है 'ज्ञानलोक' के आविर्भाव की पृष्ठभूमि और यही इस प्रकाशन का बीड़ा उठाने के लिए सन्नद्ध करनेवाली मुख्य प्रेरणा है !

हिन्दी के प्रकाशन-क्षेत्र में ज्ञानवर्द्धक साहित्य का नवीन कीर्तिमान स्थापित करनेवाली इस ग्रंथमाला की विशेषता यह है कि इसका प्रत्येक भाग अपने विषय की एक स्वतंत्र और परिपूर्ण पुस्तक है । ये पुस्तकें अपने-अपने विषयों के शुष्क टकसाली संकलन जैसी नहीं, वरन् पाठकों की मानसिक पृष्ठभूमि के अनुरूप विशेष रूप से लिखी गई ज्ञान-विज्ञान के विविध अंगों की रोचक कहानियाँ हैं !

प्रथम संस्करण

१९७० ई०

: सर्वाधिकार स्वरक्षित :

मूल्य

प्रति भाग दस रुपए

मुद्रक : लखनऊ पब्लिशिंग हाउस, ३७ कैन्टूनमेन्ट रोड, लखनऊ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्या और क्यों ?

ज्ञा न लो क

उगती हुई पीढ़ी के पाठको ! ० ० ०

'ज्ञानलोक' के नाम से तुम्हें भेंट की जा रही यह सचित्र पुस्तकमाला आसमान, धरती, पेड़-पौधे, जीव-जन्तु और मनुष्य की अचरज से भरी हुई उस दुनिया का एक मनोरंजक चित्रपट है, जिसके रहस्यभरे परदे के उस ओर ताकने-झाँकने को शायद तुम्हारा जी हर घड़ी ललका करता होगा। भला, तुममें से कौन होगा, जो उस दुनिया की सैर करना पसन्द न करेगा ? किसका मन उसकी रंग-बिरंगी झाँकियाँ देखने को एकबारगी ही न उमग पड़ेगा ? शायद तुम्हें खेल-तमाशा देखना सबसे ज्यादा पसंद है ! भला, इससे अधिक रोचक और बढ़िया खेल-तमाशा दूसरा क्या होगा, जिसे कि प्रकृति ने हमारे चारों ओर रच रक्खा है ?

तो फिर आओ, इस चित्रपट के द्वारा प्रकृति की उस अनूठी दुनिया की ओर तुम्हें ले चलें ! और सबसे पहले तुम्हें दिखाएँ उस अद्भुत आकाश के कौतुकों की एक झलक, जोकि अपने अनंत पसार में अनगिनत लट्टुओं की तरह सूरज, चाँद, पृथ्वी, ग्रह, नक्षत्र, नीहारिकाओं आदि को लगातार नचाता हुआ न जाने कब से कौन-सा खेल किसके लिए रचाए हुए है !

तब दिखाएँ उस हरी-भरी प्यारभरी धरती माता के अनोखे रूप की भी कुछ झाँकियाँ, जिसकी कि गोद में पलकर हम सब अपने जीवन का खेल खेलते, हँसते-रोते, लड़ते-झगड़ते और भाँति-भाँति के खेल-खिलौनों की रचना करते हुए आसमान में सूर्य के आसपास लगातार चक्कर लगा रहे हैं !

और इसी तरह बारी-बारी से देखें पेड़-पौधों, जीव-जंतुओं और मनुष्य की उस चहलपहल से भरी अनोखी दुनिया को भी, जिसकी कि बदौलत यह धरती इतनी रंगीन और सजीव है और मनुष्य होने के नाते जिससे हमारा इतना ज्यादा लगाव है !

यह सब तुम्हारे लिए बड़ा आवश्यक कर्त्तव्य है—केवल इसीलिए नहीं कि इससे तुम्हारा जी बहले, बल्कि इसलिए भी कि तुम्हारे ज्ञान का भंडार भरता चला जाय और सच्चे अर्थ में तुम इस 'धरती के लाल' बन सको !

यह है तुम्हारे लिए अँधेरे से उजाले की ओर बढ़ने का पहला पाठ—इस दुनिया के बाहरी रूप की झाँकी पाकर, अंत में उसके भीतरी रहस्य की खोज करने और इसी प्रयत्न में अपने आपको भी पहचानने की पहली तैयारी ! ० ० ०

कृष्णवल्लभ द्विवेदी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विषय-सूची

प्रकृति का अनोखा बगीचा :

इसे वनस्पतियों की नुमाइश कहें या पेड़-पौधों का अजायबघर—जब मनुष्य द्वारा लगाए गए बगीचे की थाह नहीं, तो प्रकृति के विराट उद्यान की कौन कहे—देखने में शान्त और निश्चल जान पड़ने पर भी वनस्पति-जगत् हलचल से रहित नहीं—जीवधारियों की तरह वनस्पतियों के विकास का भी बड़ा लंबा इतिहास है—कार्बोनिफैरस (कोयला-उत्पादक) युग के दलदली जंगलों की महान् देन—वनस्पति-संसार की वर्ण-व्यवस्था :: पौधों के प्रमुख परिवार और उपपरिवार—१. थैलोफायटा : (क) बैक्टीरिया; (ख) सायनोफायसी; (ग) फ्लैजेलेटा; (घ) डायटोमेसी; (ङ) क्लोरोफाइसी; (च) केरेसी; (छ) फिओफाइसी; (ज) रोडोफाइसी; (झ) मिक्सोमाइसिटीज; (ञ) फायकोमाइसिटीज; (ट) यूमाइसिटीज; (ठ) लाइकेन (शैवाक)—२. ब्रायोफ़ायटा:: (क) लिवरवर्ट; (ख) मॉस; (ग) हार्नवर्ट—३. टेरीडोफायटा—४. स्पर्मेटोफायटा (फेनेरोगेमिया) :: (क) 'जिम्नोस्पर्म्स' (विवृतबीज पौधे); (ख) 'एंजियोस्पर्म्स' (आवृतबीज पौधे) : राई-सरसों परिवार; शिव-परिवार; गुलाब-परिवार; मिंट-परिवार; आलू-परिवार; पिक-परिवार; स्नेपड्रेगन-परिवार; गाजर-परिवार; सूरजमूखी-परिवार; बाँज-परिवार; अखरोट-परिवार; भोजपत्र-परिवार; कैक्टस-परिवार; तृण-परिवार; लिली-परिवार; ऑर्किड-परिवार; ताड़-परिवार—प्रकृति का यह अनोखा बगीचा निश्चय ही हमारे लिए एक महान् वरदान है। (पृ० ७-२२)

विशाल वृक्ष :

'कुतुब मीनार' से भी अधिक ऊँचा, साढ़े तीन हजार वर्ष पुराना वृक्षराज—यह वृक्ष अकेला नहीं है, वह एक विशाल बिरादरी का सरदार है—इन वृक्षों में पहली बार पुष्प खिलते हैं पौने दो सौ वर्ष की आयु में—वनस्पति-जगत् का भीष्म-पितामह :: ४,६०० वर्ष पुराना धराशायी बुजुर्ग—गगनचुंबी वृक्षों के अन्य कई उदाहरण भी मिलते हैं—मोटाई के लिहाज से चुनौती देनेवाले उल्लेखनीय वृक्ष—वृक्षों की आयु जानवरों से कहीं अधिक होती है:: कुछ उल्लेखनीय उदाहरण ये हैं—विस्तार के लिहाज से सबको मात करनेवाला वृक्ष:: बरगद—नर्मदा-तट का महान् वटवृक्ष, जिसके नीचे बीस हजार व्यक्ति बसेरा ले सकते थे—असाधारण फैलाववाले अन्य बरगद। (पृ० २३-३२)

विचित्र पेड़-पौधे :

इसे वृक्ष कहें या बटोहियों की प्यास बुझानेवाला पौसरा——प्यास के साथ-साथ भूख की पूर्ति करने का भी सामर्थ्य रखनेवाला वृक्ष—नरबलि लेनेवाला राक्षसी वृक्ष—मोमबत्तियों का पेड़—तोप के गोले उपजानेवाला वृक्ष—पचास मीटर ऊँची घास :: 'तृण-वर्ग' के सरदार बाँस की अद्भुत कहानी—कल्पवृक्ष की भाँति आवश्यकता-पूर्ति करनेवाला महिमामय ताड़-परिवार—ताड़-कुटुंब के गौरव :: नारियल और खजूर के वृक्ष—ऑस्ट्रेलिया का एक अनोखा पेड़, जो जान पड़ता है ताड़ जैसा, परन्तु है नहीं—'कैक्टस-परिवार' के विचित्र वनस्पति :: नागफनी, थूहड़ आदि—अमेरिका के गगनस्पर्शी दैत्याकार थूहड़ और कैक्टस-परिवार के कुछ भयावने शूलधारी—साढ़े तीन मीटर व्यास की थालीनुमा बृहदाकार पत्तियोंवाली अद्भुत कुमुदिनी—सवा मीटर परिधि के विशालकाय सुरभित पुष्प—दुनिया का सबसे बड़ा फूल, जिसकी चौड़ान लगभग एक मीटर होती है—दो सौ मीटर लम्बी शाखायें—वनस्पति-अजायबघर के अन्य कुछ चमत्कार—वे विचित्र पौधे जो बर्फ में दबकर भी पनपते हैं तथा वे जो चहलकदमी करते हुए पाये जाते हैं—दूसरों का माल हड़पकर गुजर-बसर करनेवाले गिरहकट पौधे। (पृ० ३३-५२)।

शिकारी और मांसाहारी पौधे :

नाइट्रोजन-पूर्ति की समस्या और उसके समाधान के सामान्य उपाय—नाइट्रोजन की आवश्यकता-पूर्ति के असाधारण तरीके :: कीटाशी पौधों का विकास—लसलसे रोमों द्वारा शिकार को फंसानेवाला सरल कीटाशी :: 'ओसपर्णी'—'कनकपर्णी', 'कपाटपर्णी' आदि समुन्नत कीटाशी, जो शिकार को फाँसने के लिए अपनी पत्तियों आदि द्वारा विशेष हरकत करते हैं :: कनकपर्णी; कपाटपर्णी; नवनीतपर्णी; बड़ा झंगी—वे कीटाशी पौधे, जिनमें शिकार को फँसाने के लिए भाँति-भाँति के कपट-पात्र होते हैं :: घटपर्णी; पुटकी; कुम्भपर्णी; पर्याणपर्णी—इन मांसाहारी पौधों की पाचन-क्रिया बहुत-कुछ जानवरों जैसी ही है। (पृ० ५३-६२)

समुद्री पौधे :

सागर के अंचल में भरे पड़े सूक्ष्मातिसूक्ष्म वनस्पति :: 'डायटोम'—कतिपय खतरनाक समुद्री शैवाल—विशालकाय बभ्रु शैवाल, जिनकी एक जाति तीन सौ मीटर तक लम्बी पाई गई है—'रोडोफायटा' समूह के लाल, पीले, नारंगी और बैंजनी रंग के चित्र-विचित्र पौधे। (पृ० ६३-६६)

फूलों की दुनिया :

क्या तुम जानते हो कि प्रकृति ने पुष्पों को किस आशय से सजाया और महकाया है—फूलवाले पौधों की दो लाख से भी अधिक बिरादरियाँ हैं—फूलों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का राजा 'गुलाब', जिसकी सुन्दरता और सुगंध का कोई सानी नहीं––गौरवशाली जलपुष्प 'कमल', जो भारतीय संस्कृति का प्रतीक माना जाता है––सूरजमुखी, गेंदा, गुलदाउदी, डहलिया आदि दर्शनीय उद्यान-पुष्प––मोतिया बेला, चमेली, जूही, हरसिंगार, मौलसरी, चम्पा आदि के सुगंधित पुष्प––पुष्प-समाज के कुछ अनोखे सदस्य :: 'आर्किड'––हमारे देश के कुछ दर्शनीय फूलदार वृक्ष :: कदम्ब; कचनार; अमलतास; अशोक; पलाश या ढाक; सेमल या शाल्मलि; गोरख-इमली; गुलमोहर; जंबुल मेड़क। (पृ० ६७-७८)

अनोखे फल :

सभी फल प्रकृति की कारीगरी के अनूठे चमत्कार हैं––फलों को उपजाने में प्रकृति का वास्तविक प्रयोजन क्या है––जातीय गुणभेदानुसार फलों का वर्गीकरण :: १. एकिफल या सरल फल; २. पुंजफल; ३. अनेकिफल––ताड़-परिवार के विलक्षण फल :: 'रोटी के वृक्ष' और 'तैलवाले ताड़'; ताड़-परिवार का सरदार 'नारियल'; खजूर; सुपारी––रसीले गूदेवाले स्वादिष्ट फल; केला; अंगूर; आम; नीबू, नारंगी, सन्तरा आदि; सेब, नाशपाती आदि; अनन्नास, शहतूत, अंजीर और कटहल; शरीफा, स्ट्रॉबेरी, रास्पबेरी आदि समूह-फल; आड़ू, आलूचा, चेरी, खूबानी, अनार आदि; लीची, फालसा, पपीता और टमाटर; तरबूज, खरबूजा, ककड़ी, फूट, आदि––फलों की दुनिया के अन्य चमत्कारपूर्ण उपहार :: बादाम, पिस्ता, काजू, अखरोट आदि गिरीदार सूखे मेवे; काली मिर्च, इलायची, जायफल आदि मसाले भी फलों की दुनिया की ही देन हैं––वह अनोखा फल जो हमारा तन ढकने में मदद देता है। (पृ० ७९-९४)

जन्म से मृत्यु तक पौधे की जीवन-कहानी :

पौधे का शरीर-विधान :: उसके विभिन्न अंग और उनके कार्य––जड़ें :: क्या और क्यों––'मूलछद' और 'मूलरोम'––जड़ों के अनियमित एवं निराले रूप––पौधे का धड़ या आधारस्तम्भ :: 'तना'––तने की आन्तरिक बनावट––पौधे के कलेवर का वृद्धि-विकास किस प्रकार से हुआ करता है :: 'जीव-द्रव्य' की रहस्यलीला––कोशिका-विभाजन का चमत्कार––तने का काष्ठ-भाग दृढ़ और कठीला कैसे बनता है––असाधारण तने :: १. लिपटने तथा बाँडनेवाले तने; २. जड़ का काम करनेवाले तने; ३. खाद्य-भंडार का तथा बीज का काम देनेवाले तने; ४. पर्णायित तने––पौधों की महान् रसायनशाला :: पत्ती––पत्ती का बाह्य रूप :: 'पर्णवृन्त,' 'पत्रदल', 'पत्र-संगठन' और 'पत्रवेष्ठन'––पत्ती का शिराजाल तथा उसके फैलने का ढंग––पत्ती की आंतरिक बनावट––पत्तीरूपी रसायनशाला की अद्भुत क्रिया-प्रक्रियाएँ :: १. जलसंचार एवं वाष्पत्याग; २. प्रकाश-संश्लेषण (फोटोसिंथेसिस) एवं स्टार्च-निर्माण; ३. नाइट्रोजन-एसिमिलेशन या प्रोटीन-संश्लेषण; ४. श्वसन-क्रिया (रेस्पिरेशन)––पत्तियों के असाधारण काम––फूल :: पौधे की अद्भुत जननेन्द्रिय :: रचना और अंग-विधान––'परागण' और 'संसेचन' :: फूल के दो मुख्य कार्य––बीजों की सृष्टि एवं फलों का उत्पादन––अपनी जीवन-लीला समाप्त करके भी पौधा मिटता नहीं, वह पुनः-पुनः नई-नई पीढ़ियों का प्रादुर्भाव करके फिर से मानो नया जन्म धारण करता रहता है––विज्ञान की करामात से आज के दिन पौधों की एकदम नई नस्लें पैदा की जा रही हैं। (पृ० ९५-१२०)

शुद्धि-पत्र

छापते समय रह जानेवाली निम्न अशुद्धियों को कृपया सूचित पृष्ठों पर शुद्ध कर लें :

पृष्ठ	स्थल	अशुद्धि	शुद्ध रूप	पृष्ठ	स्थल	अशुद्धि	शुद्ध रूप
९	पंक्ति १	है	हैं	३३	पंक्ति ४	ह	हैं
१०	,, ४	तूषार	तुषार	४३	,, ७	मीजोफाइट्स	जीरोफाइट्स
१६	,, ३३	क	के	४४	,, ३२	,,	,,
,,	,, ३६	है	हैं	५४	,, १	जव	जैव
१८	,, ७	प्रवश	प्रवेश	६०	,, २५	ह	हैं
,,	,, १७	ह	हैं	६१	,, ८	मँह	मुँह
२०	,, १८	सुस्वाद	सुस्वादु	६६	,, १	स	से
२२	,, २२	ह	हैं	८४	,, २४	ह	हैं
२४	,, ३६	ह	हैं	९३	,, ५	खुशबदार	खुशबूदार
२५	,, १३	अस्बेटॉस	अस्बेस्टॉस	१०३	,, २८	प्रतिक्रयाएँ	प्रतिक्रियाएँ
२७	,, ७	क	के	,,	,, ३१	किया-प्रक्रियाओं	क्रिया-प्रक्रियाओं
,,	,, ३१	वृक्ष	वृक्षों	११२	,, १९	बसे	बजे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वनस्पति-जगत् के सम्राट्——संसार के सबसे बड़े वृक्ष

संयुक्त राज्य (अमेरिका) के केलिफोर्निया प्रदेश के राष्ट्रीय उद्यान में स्थित 'सिक्वोइया' नामक इन वृक्षराजों में से एक तो सौ मीटर से भी अधिक ऊँचा है और उसकी आयु लगभग साढ़े तीन हजार वर्ष कूती जाती है ! यदि इसके समीप दिल्ली की प्रसिद्ध कुतुब मीनार या बंबई-कलकत्ता की कोई बीस-मंजिली इमारत खड़ी की जाय, तो वे भी इसके आगे बौनी ही जान पड़ेंगी ! (विशेष विवरण पृ० २३-२६ पर पढ़िए ।)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हमारे नगर में एक मशहूर बाग है । उसकी गिनती देश के प्रमुख उद्यानों में की जाती है । वैसे तो लखनऊ में बाग-बगीचों की कमी नहीं । यह शहर एक जमाने से 'उद्यानों की नगरी' के नाम से प्रसिद्ध है । परन्तु जिसका हवाला हम यहाँ दे रहे हैं, वह है इस नगर के सभी बागों का सिरताज ! जो पेड़-पौधे दूसरे बाग-बगीचों में शायद ढूंढे न मिलें, उन्हें यहाँ एक ही ठौर जमा देख लीजिए । क्या देशी, क्या विदेशी; क्या ठंडे मुल्कों के, क्या गरम इलाकों के; क्या पहाड़ों के, क्या मैदानों के; यहाँ तक कि रेगिस्तानों के पौधों का भी खासा अच्छा जमघट यहाँ देखने को मिल सकता है !

इसे वनस्पतियों की नुमाइश कहें या पेड़-पौधों का अजायबघर ?

इस जगह को केवल उद्यान या बगीचा कहकर नहीं बखाना जा सकता । यह तो पेड़-पौधों का एक जीता-जागता अजायबघर है ! यहाँ वनस्पतियों की एक खासी नुमाइश-सी लगी है ! लो, एक ओर आसमान से बातें करते हुए विशाल वृक्षों का मेला लगा है ! दूसरी ओर भाँति-भाँति की नन्हीं-नन्हीं अजनबी बूटियों की भी छटा छहरी है ! कहीं चित्र-विचित्र आकार की पत्तियों की झाँकी निखरी है ! कहीं अनोखे चेहरे के फूलों की रंग-बिरंगी बहार बरबस आँखों को अटका लेती है ! इधर हरी-भरी दूब के कालीन बिछे हैं । उधर लताओं, बाँसों अथवा सघन झाड़ियों से घिरे रमणीक निकुंज फैले हैं । इन नाजुक बूटों को देखो ! ये कड़ी धूप में नहीं रह सकते, इसी से छायादार ठंडे वितानों के नीचे पाले-पोसे जा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहे हैं ! इसी तरह उन गमलों और क्यारियों के पौधों पर भी गौर करो ! उनकी टहनियों पर वे जो खपचियाँ-सी बँधी हैं, सो केवल इसीलिए हैं कि उनकी कलमें तैयार की जा रही हैं, ताकि उनकी नई नस्लें पैदा हों !

यहाँ के कितने ही पौधे तो ऐसे हैं कि देखे बिना उनकी कल्पना भी नहीं की जा सकती ! उदाहरण के लिए, कुछ में तना ही नदारद है ! दूसरों में पत्तियों का अता-पता नहीं ! कोई फूलने से वास्ता नहीं रखते ! कुछ में जड़ें ही नहीं हैं ! इधर ये गिरहकट पौधे अपने भोले पड़ोसियों का माल चुराकर गुजारा करते हैं। उधर त्रिशंकु की तरह अधर में लटके हुए वे विचित्र वनस्पति, मिट्टी आदि का भरोसा छोड़, केवल हवा से ही अपनी रसद ले रहे हैं ! फिर सबसे अद्‌भुत तो वे पौधे हैं, जो 'हिंसक' कहलाते हैं ! वनस्पति-जगत् के ये विद्रोही, सारा शील-व्यवहार ताक पर रखकर, शिकारी जानवरों जैसे खूंख्वार बन बैठे हैं ! इन बगुलाभगतों की तिकड़म देखकर जन्तु-जगत् के चालाक शिकारी भी अचंभे से दाँतों तले उँगली दबाने लगेंगे ! ये ठग जाल-फरेब से भोले कीट-पतिंगों को अपने चंगुल में फँसा लेते तथा उनके रक्त-मांस को हड़पकर अपनी उदर-ज्वाला शान्त किया करते हैं !

जब मनुष्य द्वारा लगाए गए बगीचे की थाह नहीं, तो प्रकृति के विराट उद्यान की कौन कहे !

प्रश्न उठता है कि जब मनुष्य के हाथों रोपे गए, कुछ एकड़ जमीन पर फैले, इस कृत्रिम बगीचे की महिमा और अचंभे का पारावार नहीं, तो फिर लाखों-करोड़ों वर्ग-किलोमीटर के दायरे में सारे भूमण्डल पर छाए हुए प्रकृति के विराट् उद्यान की थाह पाना किसके बूते की बात है ? किसी भी समय खुले आसमान के नीचे खड़े होकर, अपने चारों ओर तनिक निगाह दौड़ा देखो ! क्या धरती का कोई भी कोना ऐसा है, जहाँ किसी न किसी रूप में कुदरत की इस बगिया का अंचल न पसरा हो ? क्या मैदान, क्या पहाड़; क्या दलदल, क्या रेगिस्तान; क्या ताप से तमतमाते हुए विषुवत्क्षेत्रीय मरुदेश, और क्या बारहों महीने बर्फ से ढके रहनेवाले उत्तरी-दक्षिणी ध्रुवप्रदेश—यहाँ तक कि नदियों, झीलों और सागरों की गहराई का अलख पट भी कुदरत की इस वाटिका की लपेट से तुम्हें रीता नहीं मिलने का !

फिर सबसे बड़ा अचम्भा तो यह है कि प्रकृति ने अपनी इस बगिया के आसपास न तो कभी कोई बाड़ खड़ी की, न चहारदीवारी बनाई; बल्कि उसका आँगन सबके लिए सदा-सर्वदा देखने-भालने को खुला रहा, तथापि उसके रहस्य के सभी परदे आज तक नहीं उघड़ पाए ! सच तो यह है कि ज्यों-ज्यों हमारी उत्सुक आँखें उसकी गहराई में पैठने लगती हैं, त्यों-त्यों उसके छिपे हुए अंचल में से नए-नए अनजान कोने हमें चुनौती देने लगते हैं ! तो फिर किसका बलबूता है कि इस विराट् उद्यान का संपूर्ण खाका खींचने का दावा करे ? कौन उसकी रहस्यभरी हलचलों का पूरा लेखा-जोखा पेश करने की हामी भरे ? हम ज्यादा से ज्यादा इतना ही करने के अधिकारी हैं कि हजारों बरस से जारी इस बगिया की छानबीन का पल्ला कभी छोड़ें नहीं ! हम उसकी सुषमा के प्रति ललकते हुए कभी भी न अघाएँ और उसके रहस्यों के सागर में लगातार डुबकी लगाते चले जाएँ ! यही रुख वैज्ञानिकों ने प्रकृति की इस महान् वाटिका के प्रति अपनाए रक्खा है, यद्यपि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आज इसके बारे में जितनी बातें उन्हें मालूम है, उतनी इससे पहले किसी को भी ज्ञात नहीं थीं ! वे इस अद्‌भुत उद्यान के एक के बाद एक नित नए परदे उघाड़ते जा रहे हैं, फिर भी इस बात की डींग कभी नहीं हाँकते कि इसका सारा रहस्य ज्ञात हो चुका है और अब इसके बारे में जानने को कुछ भी शेष नहीं रहा !

देखने में शान्त और निश्चल जान पड़ने पर भी वनस्पति-जगत् हलचल से रहित नहीं

अपने घिरौंदों से बाहर निकलकर जब हम प्रकृति के आँगन में आ खड़े होते हैं, तो कुछ समय के निरीक्षण से ही हमें यह ज्ञात हुए बिना नहीं रहता कि बाहर से अचल और शान्त जान पड़ने पर भी कुदरत का यह अनोखा बगीचा आठों पहर तरह-तरह की क्रियाओं में तल्लीन है—वह निरन्तर कर्म में रत है ! इसका स्पष्ट प्रमाण उसकी लगातार बदलती हुई झाँकियों से हमें मिलता है ! लो, कल तक जहाँ धूल उड़ा करती थी, वहीं वर्षाकाल के आते ही हरी घास के ये कालीन कैसे बिछ गए ? कैसे वसन्तागम के साथ ही नन्हें बूटों से लेकर बड़े वृक्षों तक सब कोई फूलों की रंगबिरंगी बहार से सज गए तथा जहाँ सूखी झाड़ियाँ अपनी कँटीली बाँहें पसारकर दहशत पैदा कर रही थीं, वहीं हरियाली की छटा छाकर हम सबका मन लुभाने लगी ? फिर पतझड़ का दौर शुरू होते ही इनमें से बहुतेरे पेड़ पत्ते गिराकर एकदम नंगे-से क्यों हो गए ? साथ ही कुछ पौधे जहाँ एकबारगी गायब हो गए, वहाँ जो बचे रहे,

लो, वसन्त ऋतु के आते ही ये वृक्ष, जो अब तक केवल हरे पत्तों की पोशाक पहने हुए थे, इन सुन्दर रंग-बिरंगे फूलों की राशि से क्योंकर सुशोभित हो गए ? अचानक यह पट-परिवर्तन कैसे हो गया ?

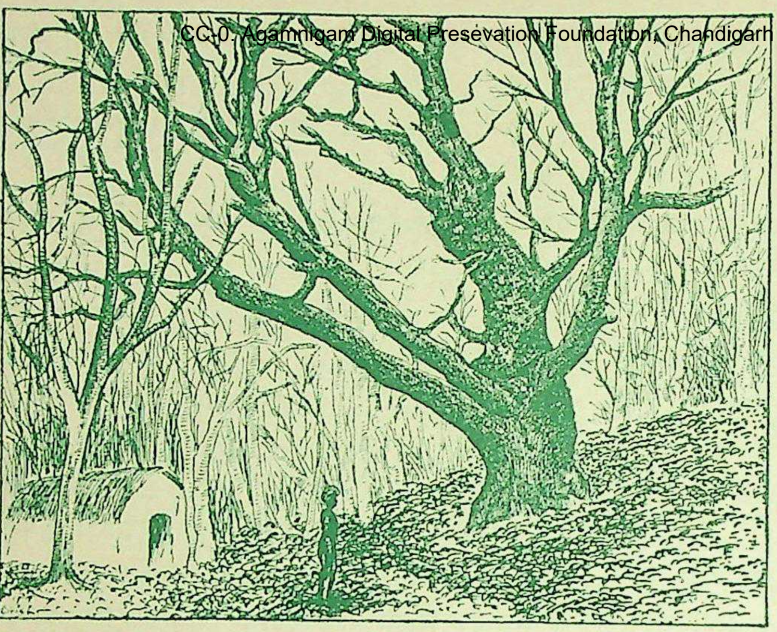

पतझड़ का मौसम आते ही बहुतेरे वृक्षों की पत्तियाँ झड़ जाती हैं ! यह क्यों होता है ? फिर उनके नंगे कलेवर जाड़ा, आँधी-तूफान आदि सहते हुए भी कैसे टिके रहते हैं ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वे तप में लीन योगियों की तरह दिन-रात सरदी-गरमी, आँधी-तूफान, तुषार-हिमपात आदि की चपेट सहते हुए, इन दुर्दिनों में भी क्योंकर अपने कंकालवत् नंगे बदन को जीवित रख सके ?

अगर काफी लंबे अरसे तक इसी तरह किसी स्थान विशेष के पेड़-पौधों को हम गौर से निहारते रहें, तो देर-सबेर हमें यह बात भी ज्ञात हुए बिना नहीं रहने की कि दरअसल कुछ नन्हें-से बीजांकुरों ने ही बढ़ते-बढ़ते कालान्तर में इन छोटे-बड़े पेड़-पौधों का रूप ग्रहण कर लिया है ! इसी चमत्कार के फलस्वरूप ही तो जहाँ कभी छोटे-छोटे बूट मात्र उगे हुए देख पड़ते थे, वहीं एक अरसे के बाद मोटे-मोटे तने वाले वृक्षों का जमघट लगा हुआ हमें देखने को मिला करता है ! पर इन वृक्षों के ये तने इस तरह उत्तरोत्तर मोटे और मजबूत कैसे होते चले गए ? क्योंकर उन पर नई-नई डालियाँ एवं पत्तों से लदी हुई टहनियाँ लगातार छाती चली गईं ? फिर एक अवधि तक तो ये अपना निर्वाह करते हुए मजे से फलते-फूलते रहे और तब उनकी बाढ़ एकाएक रुक क्यों गई ? क्यों वे बूढ़े होने लगे ? क्यों उनकी डालियाँ सूख गईं, तना भी ठूंठ हो गया तथा आखिर को एक दिन उनका कलेवर सड़गलकर फिर से मिट्टी में जा मिला ?

भला, प्रकृति की कितनी विचित्र लीला है यह ? क्या इससे यह बात साफ-साफ नहीं झलकती कि बाहरी दिखावे में अकर्मण्य जान पड़ने पर भी वनस्पति-जगत् भी हमारी तरह ही भाँति-भाँति की क्रियाओं में सतत संलग्न है--वह भी हम सबकी तरह जीवन-मरण के चक्र में बँधकर घोर संघर्ष में रत है ? हमें इस भ्रम में कदापि नहीं पड़ना चाहिए कि एक ही जगह पैर गड़ाये खड़े ये पेड़-पौधे विरक्त योगियों जैसे उदासीन हैं ! वास्तविकता तो यह है कि ये बेचारे भी दुनिया के तख्ते पर अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए घोर कशमकश कर रहे हैं ! हमारी तरह वे भी जनमते और मरते हैं ! छोटे से बड़े होते हैं ! संतान उपजाकर वंशविस्तार करते हैं ! प्रकृति के रसद-भण्डार से खाद्य, पानी, हवा, रोशनी आदि प्राप्त करने के लिए लगातार ललकते हैं ! साथ ही कुदरत की बदलती हुई परिस्थितियों के अनुकूल अपने आप को बनाने के लिए निरन्तर जूझते हैं ! सारांश यह है कि वे भी, आत्मरक्षा के हेतु भाँति-भाँति के उपाय करते हुए, हमारी तरह ही काल की गति के साथ लय में लय मिलाकर, इतिहास की डगर पर बढ़ने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को आतुर हैं! फिर, उन्हें निश्चेष्ट कैसे माना जाय?

जीवधारियों की तरह वनस्पतियों के विकास का भी बड़ा लंबा इतिहास है

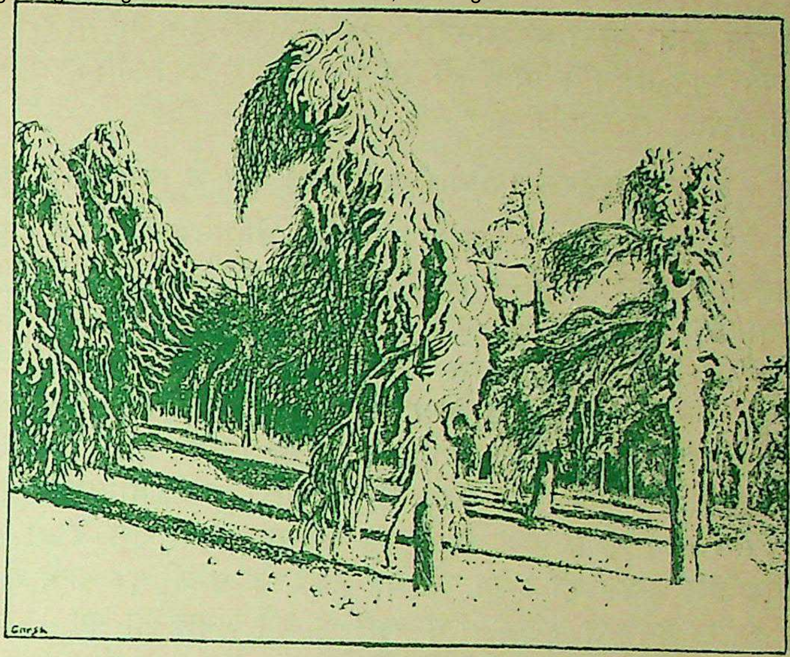

ऋतुओं के फेरबदल के साथ वनस्पति-जगत् की झाँकी कैसे नए-नए दृश्य प्रस्तुत करती है, इसका एक नमूना हिमपात होने पर ठंडे मुल्कों के वृक्षों द्वारा पेश की जानेवाली इस छवि में मिलता है!

इस ग्रंथमाला के पिछले एक खंड में हम तुम्हें बता चुके हैं कि आज से कई अरब या खरब वर्ष पूर्व किस प्रकार आदियुग की अपनी तमतमाती हुई पिघली दशा से छुटकारा पाने पर पृथ्वी पहले-पहल माता बनी थी—उसकी कोख में जीवन का संचार हुआ था! इस संबंध में यह बात विशेष तौर से याद रखने की है कि पृथ्वी पर प्रकट होनेवाले जीवन के आदि बीज वनस्पति-रूप थे—जन्तु-वर्ग के प्राणी नहीं! वे जलीय चट्टानों के पृष्ठ पर जमनेवाली एक प्रकार की हरी काई का रूप धारण कर अंकुरित हुए थे! तब तक वास्तविक जानवरों की श्रेणी में रक्खे जाने योग्य किसी प्राणि-रूप का उद्भव या विकास वस्तुतः हुआ ही नहीं था!

इस प्रकार हम देखते हैं कि वनस्पति प्रकृति की ऐतिहासिक परंपरा में जानवरों के अग्रज या बड़े भाई हैं और उनका इतिहास भी कहीं अधिक पुराना है। जैसा कि तुम जान चुके हो, विकास की पगडंडी पर आगे बढ़ते हुए पृथ्वी पर जीवन का काफिला क्रमशः दो वृहत् धाराओं में विभाजित हो गया था। इनमें से एक धारा थी वनस्पति की तथा दूसरी जानवरों की। कहना न होगा कि आरंभ में वनस्पतियों के रूप-आकार ऐसे नहीं थे, जैसे कि हम उन्हें आज पाते हैं। जानवरों की तरह उनके भी सरल नमूने ही पहले सामने आए थे। तब परिस्थितियों के फेरबदल के साथ-साथ वे अपने आप को नए-नए साँचों में ढालने लगे। इस तरह वे अधिकाधिक जटिल बनते चले गए। यह सिलसिला करोड़ों वर्षों तक जारी रहा, तब कहीं आज का यह वनस्पति-समाज जुट पाया!

तुम्हें याद होगा कि जन्तुओं की तरह वनस्पतियों के विकास की यह गाथा भी धरती माता की आत्मकथा की उस पाषाण-पोथी में बड़े जतन के साथ सुरक्षित है, जिसका हवाला विगत खण्डों में हम दे चुके हैं। ठेठ 'प्री-कैम्ब्रियन युग' की प्रारम्भिक (प्रोटिरोजोइक) चट्टानों में पहलेपहल प्रकट होनेवाले एल्जी-वर्ग के काई जैसे आदि वनस्पति-रूपों से लेकर 'कैम्ब्रियन', 'आर्डोविशियन', 'सिलूरियन', 'डेवोनियन' आदि बाद के युगों के अधिक उन्नत पौधों तक, करोड़ों वर्ष पूर्व के वनस्पति-रूपों की एक तरतीबवार चित्रमाला-सी वैज्ञानिकों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ने उस प्रस्तर-पोथी की छानबीन द्वारा जुटा ली है। यह यों संभव हो सका है कि हर युग अपने-अपने समय के पौधों की स्पष्ट यादगार प्रस्तर-विकल्पों के निशान की शक्ल में शिला-पर्तों पर अंकित छोड़ गया है।

कार्बोनिफैरस (कोयला-उत्पादक) युग के दलदली जंगलों की महान् देन

'आर्डोविशियन', 'सिलूरियन' और 'डेवोनियन' युग में प्रकृति ने पृथ्वी-पृष्ठ को––विशेषकर सागरतल को––तरह-तरह के शैवालों तथा काई और फर्न की जाति के प्रारंभिक पौधों की वाटिकाओं से सजा दिया था। उसके इस पुराकालीन वनस्पति-विकास के अनुष्ठान ने आज से अट्ठाईस से तीस करोड़ वर्ष पूर्व के 'कार्बोनिफैरस' (कोयला-उत्पादक) नामक युग में आकर बड़ा भव्य और व्यापक रूप धारण कर लिया! इन दिनों विशेष प्रकार की भूभौतिक परिस्थितियों के कारण, धरातल पर छिछले जल और कीचड़ के विशाल दलदलीय क्षेत्रों की भरमार-सी हो गई थी। उधर वायुमंडल में भी नमी और उमस का ही बोलबाला छाया हुआ था। इस वातावरण ने कुछ पौधों को पनपने की अभूतपूर्व अनुकूलता प्रदान की। नतीजा यह हुआ कि धरती पर फर्न, सेमर, ताड़ आदि की शक्ल के कँटीले तनेवाले पुराकालीन वृक्षों के घने जंगल छा गए। इन दलदली वनों में गोहों, छिपकलियों जैसे रेंगनेवाले प्राणियों के साथ-साथ तत्कालीन कीट-पतिंगों, शलभों, मकड़ियों, कनखजूरों, झींगुरों आदि के मेले लगे रहते थे।

यह स्थिति लाखों वर्ष तक बनी रही। इस दौरान उक्त जंगलों के वृक्ष अपनी-अपनी आयु पूरी करके सूखकर गिरते चले गए। इस प्रकार जमीन पर उनकी तह पर तह जमती रही। कालान्तर में भौगर्भिक उथल-पुथल के फलस्वरूप उन पर अन्य चट्टानी स्तर लद गए। अन्त में भीषण दबाव से उत्पन्न ताप तथा रासायनिक प्रक्रिया के प्रभाव से इन वृक्षावशेषों में संचित कार्बन तत्व ने जलकर कोयले का रूप धारण कर लिया। यही कोयला प्रस्तरीभूत होकर हमारा सुपरिचित ईंधन 'पत्थर का कोयला' बन गया। यह खनिज आज के दिन प्रचुर मात्रा में चट्टानों की तहों में उपलब्ध है और खानें खोदकर कसरत से भूगर्भ से निकाला जा रहा है। यह हमारे लिए वनस्पति-जगत् से प्राप्त एक बेशकीमती देन है। कारण, उसी के बूते पर पिछले कुछ सौ वर्षों में यंत्र-युग की औद्योगिक सभ्यता का विकास संभव हुआ है। जरा कल्पना करो कि यदि कार्बोनिफैरस युग के पेड़-पौधे अपने अवशेषों का वह कीमती अंबार न रच जाते, तो कैसे रेलगाड़ियों तथा भाप से चलनेवाले जहाजों का युग आरंभ होता और कैसे इस्पात आदि के वे बड़े कल-कारखाने स्थापित होते, जिन्होंने मानव-इतिहास में नया दौर लाकर उसका चेहरा ही बदल दिया है!

वनस्पति-संसार की वर्ण-व्यवस्था—पौधों के प्रमुख परिवार और उपपरिवार

जब हम कल्पना द्वारा किसी वनस्पति की तस्वीर मन में खड़ी करते हैं, तो प्राय: ऐसी रचना की धारणा करते हैं, जो पत्तियों, टहनियों, डालियों एवं फूल, फल, जड़ों आदि से युक्त हो। परन्तु वनस्पति-संसार की सभी रचनाएँ वास्तव में इसी एक साँचे में ढली हुई नहीं; न सबके रूप-आकार और गुण-धर्म ही एक जैसे हैं। उदाहरण के लिए, एक ओर यदि ऐसे विशालकाय वृक्ष धरती पर मौजूद हैं, जो ऊँचाई में ठेठ आसमान से बातें

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
करते हैं, तो दूसरी ओर इस प्रकार के नन्हें वनस्पति भी मिलते हैं, जिन्हें बिना सूक्ष्मदर्शी यंत्र की मदद के कोरी आँखों से देखना असंभव है ! इन अत्यंत सरल एवं सर्वाधिक जटिल वनस्पति-रूपों के बीच के अंचल में, विकास की विभिन्न श्रेणियों का प्रतिनिधित्व करनेवाले, तरह-तरह की विशेषताओं से युक्त, अगणित वनस्पतियों का जमघट लगा है ! भला, इस बृहत् समाज के सभी सदस्यों को एक ही कोटि में रखना क्योंकर संभव हो सकता है ?

अतः जीव-जन्तुओं की तरह, वनस्पति भी आधुनिक विज्ञान के पंडितों द्वारा गुण-धर्मानुसार विभिन्न वर्गों, परिवारों और उपपरिवारों में बाँट दिए गए हैं। चूंकि आधुनिक रूप में वनस्पति-विज्ञान का विकास अन्य अनेक विज्ञानों की भाँति पश्चिमी देशों में ही हुआ है, इसलिए वहाँ के प्रचलन के अनुसार इन परिवारों-उपपरिवारों आदि का नामकरण लैटिन भाषा में ही किया गया है। यही नाम अंतर्राष्ट्रीय प्रचलन में भी स्वीकार कर लिए गए हैं। सुविधा के लिए हम भी उन्हीं सर्वसम्मत नामों का प्रयोग यहाँ करेंगे। तुम्हें यह जानकर अचम्भा होगा कि इस समय वैज्ञानिकों को वनस्पतियों की जितनी जातियों का पता है, उनकी संख्या कुल मिलाकर ३,४०,००० है ! इन विविध बिरादरियों के पौधों को, उनके महत्वपूर्ण सामान्य गुणों और लक्षणों के अनुसार निम्न चार प्रधान समूहों में विभाजित कर दिया गया है, जिनके अन्तर्गत अपनी-अपनी विशेषताएँ लिए हुए वनस्पतियों के सभी परिवार और उपपरिवार सम्मिलित हैं।

१. थैलोफायटा

वनस्पति-जगत् की सबसे निचली श्रेणी के इस महासमूह के पौधों की रचना अत्यंत सरल होती है। इनमें न तो जड़ें होती हैं, न तना; न पत्तियाँ और न फूल या फल ही। यद्यपि भरण-पोषणार्थ ये भी आहार-पूर्ति आदि की क्रियाएँ करते हैं, फिर भी इनमें तत्संबंधी कोई स्पष्ट अंग नहीं होते। इस विभाग के अन्तर्गत अनेक प्रकार की एककोशिक रचनाएँ सम्मिलित हैं, जैसे कि तरह-तरह के हानिप्रद और उपयोगी बैक्टीरिया, भाँति-भाँति के शैवाल (एल्जी) तथा फफूंद-वर्ग के विविध क्षुद्र वनस्पति। वैज्ञानिकों ने इस महासमूह को तदनुसार निम्नलिखित बारह उप-समूहों में बाँट रक्खा है:—

वनस्पतियों का इतिहास कितना पुराना है, इसका किंचित् अनुमान करोड़ों वर्ष पूर्व के वृक्षों के तनों के इन प्रस्तर-विकल्पों से किया जा सकता है ! ये पाषाण बन गए हैं, पर कभी सचमुच पेड़ का रूप धारण किये हुए थे !

(क) बैक्टीरिया— ये एककोशिक रचनाएँ इतनी सूक्ष्म होती हैं कि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

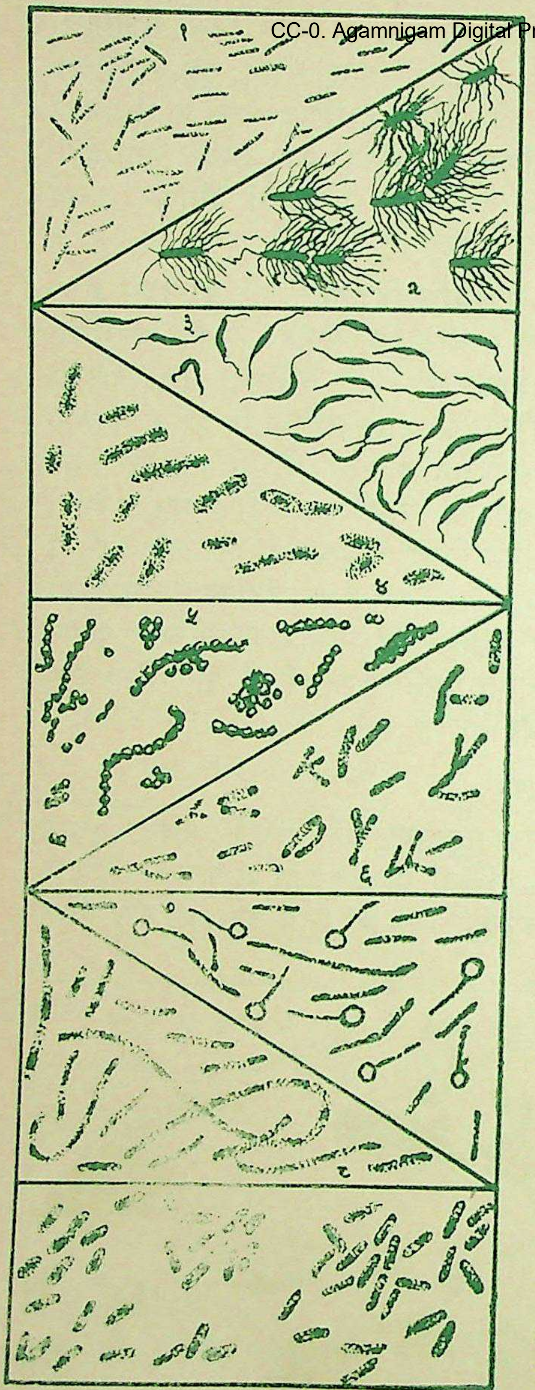

सबसे निचली श्रेणी की एककोशिक रचनाएँ 'बैक्टीरिया'–(१) क्षय के रोगाणु; (२) टायफायड ज्वर के; (३) हैजे के; (४) न्यूमोनिया के; (५) स्ट्रेप्टोकोकस और स्टैफिलोकोकस; (६) डिफ्थेरिया के; (७) टिटैनस के; (८) एन्थ्रैक्स रोग के तथा (९) कोलाइ बेसिली नामक रोगाणु।

कोरी आँखों से उन्हें देखना असम्भव है। उनका पता सूक्ष्मदर्शी यन्त्र द्वारा ही लग पाता है। बैक्टीरिया कई प्रकार की शक्लों के पाये जाते हैं। कोई गोलाकार होते हैं, कोई शलाका जैसे; कोई सर्पिल आकार के, कोई बाटी की शक्ल के! इनके एककोशिक कलेवर की लघुता का किंचित् अनुमान तुम्हें इन आँकड़ों से हो जायगा कि पानी की एक बूँद के आयतन में पाँच सौ खरब बैक्टीरिया समा सकते हैं! फिर, उन्हें तौला जाय, तो पाँच खरब बैक्टीरिया का कुल वजन केवल एक ग्राम होगा! ये वनस्पति हमारे आसपास के वातावरण में––हवा में, पानी में, मिट्टी में, यहाँ तक कि धरती के भीतर भी तीन-साढ़े तीन मीटर की गहराई तक––भरे पड़े हैं! इनमें अपने शरीर के विभाजन द्वारा संख्यावृद्धि करते रहने का अद्भुत सामर्थ्य होता है! इसी कारण, इनमें से कई तेजी से फैलकर मनुष्य एवं अन्य जीवधारियों को घातक बीमारियों की महामारियों का शिकार बना देते हैं। परन्तु बहुत-से बैक्टीरिया हमारे लिए उपयोगी भी हैं––जैसे कि दही, पनीर, सिरका, अल्कोहाल, आदि बनाने में योग देनेवाले अथवा जड़ों के लिए खाद्य तत्त्वों के संचय में सहायक कीटाणु। कुछ जाति के बैक्टीरिया एक तरह की कोड़ेनुमा रचना से सुसज्जित होते हैं, जिसे 'फ्लैजेला' (या कशाभ) कहते हैं। इसकी मदद से वे बड़ी तेजी से इधर-उधर घूम-फिर सकते हैं।

वनस्पति-जगत् एवं जीव-जगत् के सबसे निचले स्तर की संधि-रेखा पर स्थित होने के कारण, इन विचित्र एककोशिक रचनाओं पर वनस्पति-विज्ञान और जन्तु-विज्ञान दोनों ही अपना-अपना दावा करते हैं तथा दोनों के लिए उनका बड़ा महत्व है (दे० इसी पृष्ठ का चित्र)।

(ख) सायनोफायसी (नील हरित शैवाल) ये भी एक प्रकार की अति सरल एककोशिक रचनाएँ हैं, जिन्हें 'एल्जी' (या शैवाल) के नाम से पुकारा जाता है। परन्तु बैक्टीरिया से ये अधिक उन्नत वनस्पति हैं। नील हरित वर्ण के ये सूक्ष्म

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वनस्पति छिछले पानी, नम मिट्टी, पुराने वृक्षों की छाल आदि पर हर कहीं देखने को मिल सकते हैं। वर्षाकाल में प्रायः मकानों की दीवारों पर भी ये अपनी बस्तियाँ बसा लेते हैं। इस वर्ग में कोई १४०० उपपरिवार सम्मिलित हैं।

(ग) फ्लैजेलेटा——इस एककोशिक पौधे को प्रायः 'वनस्पति-जन्तु' की संज्ञा प्रदान की जाती है। कारण, अपनी कोड़ेनुमा कशाभ (फ्लैजेला) की बदौलत यह पोखरों, तालाबों आदि के छिछले जल में तेजी से इधर-उधर घूमते-फिरते देखा जाता है, जिससे उसके बारे में जन्तु होने का भ्रम पैदा होता है। इसके जमघट से पानी पर हरी झाँई छायी रहती है।

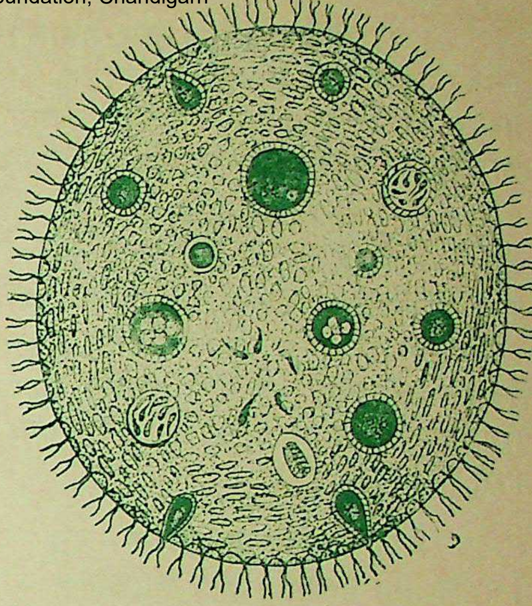

थैलोफायटा समूह के क्लोरोफाइसी वर्ग के एक प्रसिद्ध हरित शैवाल 'वोल्वोक्स' की झाँकी! यह वस्तुतः इस सूक्ष्म वनस्पति के एक समूचे उपनिवेश का परिवर्द्धित चित्र है!

(घ) डायटोमेसी——अपनी चक्राकार आकृतियों की कलात्मक रचना के लिए प्रख्यात ये सूक्ष्म एककोशिक वनस्पति मीठे और खारे पानी के जलाशयों के अलावा नम मिट्टी में भी अपना आवास बना लेते हैं। सूक्ष्मदर्शी यन्त्र में इनके कलेवरों की सुन्दर झाँकी देखते ही बनती है। इनकी दो हजार जातियाँ मिलती हैं।

(ङ) क्लोरोफाइसी (हरित शैवाल)—ये पौधे पूर्वोल्लिखित शैवालों से आकार में अधिक बड़े तथा समुन्नत श्रेणी के हैं। इनकी प्रजनन-क्रिया अधिक विकसित कही जा सकती है। वह नर और मादा के तुल्य दो विभिन्न कोशिकाओं के संयोग से सम्पन्न हुआ करती है। इनकी 'स्पायरोगायरा', 'यूलोथ्रिक्स', 'वोल्वोक्स' (दे० इसी पृष्ठ का चित्र), आदि कई जातियाँ बड़ी दर्शनीय होती हैं। चटकीले हरे रंग के विविध आकृतियों के ये शैवाल मीठे पानी के जलाशयों के अलावा सागरतट की गीली चट्टानों पर भी अपनी बस्तियाँ बसा लेते हैं।

(च) करेसी——ये थैलोफायटा-समूह के अत्यधिक उन्नत हरित शैवाल हैं। बँधे हुए पोखरों तथा नालियों आदि में जमकर ये पौधे पिछली पीढ़ियों के अवशेषों पर ही अपने अम्बार चढ़ाते चले जाते हैं। इससे कभी-कभी इनके उपनिवेश धरातल से तीस-बत्तीस सेंटीमीटर तक ऊँचे उठ जाते हैं! इन्हें 'स्टोनवर्ट' के नाम से भी पुकारा जाता है।

(छ) फिओफाइसी (भूरे शैवाल)——ये हरित शैवालों से डीलडौल और बनावट दोनों के ही लिहाज से काफी बड़े तथा जटिल वनस्पति हैं। ललौंह भूरे रंग के ये पौधे अपनी ऊपरी रंगीन पर्त से पर्णहरिम (क्लोरोफिल) की हरीतिमा को ढके रहते हैं, इसी से लाल-भूरे दिखायी देते हैं। इस जाति के शैवाल प्रायः समुद्र जल में ही पाये जाते हैं। तुम्हें यह जान कर कुतूहल होगा कि अटलांटिक महासागर के 'सारगासा समुद्र' नामक चिर शान्त क्षेत्र में सागरजल पर जमघट जमाये रहनेवाला 'सारगासम' नामक सुप्रसिद्ध शैवाल इसी वर्ग का एक वनस्पति है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(ज) रोडोफाइसी (लाल शैवाल)––ये भी अधिकतर समुद्रों में ही पाये जाते हैं। इनमें से कुछ के कलेवर में, कैल्शियम कार्बोनेट नामक द्रव्य के जमाव के फलस्वरूप, एक प्रकार का पथरीलापन-सा झलकने लगता है। कहते हैं, इन रक्तवर्ण वनस्पतियों ने मूँगे की चट्टानों के निर्माण में महत्वपूर्ण हाथ बँटाया है।

(झ) मिक्सोमाइसिटीज––इस वर्ग के वनस्पतियों को लौकिक बोली में 'स्लाइम फंजाई' (श्लेष्म फफूँद) के नाम से पुकारा जाता है। वनस्पतियों को हरा रंग प्रदान करनेवाले अति महत्वपूर्ण द्रव्य 'पर्णहरिम' (क्लोरोफिल) का सर्वथा अभाव 'फफूँद वर्ग' के सभी वनस्पतियों की प्रमुख विशेषता होती है। अतः इन आदिम श्रेणी के फफूँदों में भी हरेपन का लवलेश नहीं होता। इनकी लगभग चार सौ उपजातियाँ मिलती हैं। ये प्रायः जंगलों में पौधों की सड़ती हुई पत्तियों के ढेर अथवा सड़ी-गली लकड़ी पर उगे हुए देखने को मिला करते हैं।

(ञ) फायकोमाइसिटीज––इन्हें 'एल्जी फंजाई' (शैवाल फफूँद) भी कहते हैं। ये परोपजीवी वनस्पति कृषि की फसलों को हानि पहुँचानेवाले अनेक रोगों के उत्पादक हैं। बासी रोटी, अचार, मुरब्बे आदि पर उग आनेवाली सुप्रसिद्ध फफूँद इसी वर्ग की होती है। इसकी एक जाति से आलू की फसल में 'अंगमारी' रोग लग जाता है।

(ट) यूमाइसिटीज––यही है हमारे उन बहुत-से जाने-पहचाने हुए समुन्नत फफूँद-वर्गीय पौधों का वर्ग, जिन्हें हम छत्राक, कुकुरमुत्ते, धरती के फूल, गुच्छी आदि लौकिक नामों से पुकारते हैं। इन पौधों की शक्लें कभी-कभी बड़ी ही अद्भुत आकृतियों का प्रदर्शन करती हैं, जिन्हें देखकर कलाकार प्रकृति की कारीगरी की भूरि-भूरि प्रशंसा करना पड़ता है। पृ० ४७ पर इन विचित्र पौधों के कुछ सुन्दर नमूने दिग्दर्शित हैं। कैसे लुभावने हैं ये! कोई छत्रियों का रूप लिये हुए है, तो कोई पुष्पों का! किसी को देखकर ऐसा भ्रम होने लगता है, मानो कोई छोटा सा सुहावना वृक्ष खड़ा हो! कोई फूस से छायी हुई झोपड़ी की याद हमें दिलाने लगता है! परन्तु इन्हें इन लुभावनी आकृतियों की नुमाइश लगाये देखकर, कहीं तुम यह न समझ बैठना कि ये सर्वथा निरापद हैं! दरअसल इनमें से कई बड़े जहरीले होते हैं और प्रति वर्ष इन्हें गलती से खा लेने के कारण कई लोग मरते पाये जाते हैं। हाँ, उनकी 'गुच्छी' जैसी कुछ जातियाँ अवश्य खाने योग्य हैं। उनकी बड़ी स्वादिष्ट तरकारी बनती है।

फफूँद-वर्ग के इस महत्वपूर्ण उपसमूह को वैज्ञानिकों ने दो विभागों में बाँट रक्खा है–– १. 'एक्सोमाइसिटीज', जिसके अन्तर्गत 'खमीर' (यीस्ट) और 'फफूँदी' (मोल्ड) नामक उन अति उपयोगी द्रव्यों का समावेश है, जिनमें से प्रथम के द्वारा हमारी डबल रोटियाँ फूलती हैं एवं शराब या अल्कोहाल बनाया जाता है तथा दूसरे की मदद से 'पेनिसिलिन' जैसी महत्वपूर्ण औषधि का निर्माण किया जाता है; २. 'बैसीडियोमाइसिटीज', जिसमें पूर्वोल्लिखित छत्राक, कुकुरमुत्ते आदि सम्मिलित हैं। ये परोपजीवी पौधे प्रायः वर्षाकाल में सड़ी हुई लकड़ी, गोबर आदि के ढेर तथा पुराने वृक्षों के तनों पर झुंड क झुंड उगे हुए देख पड़ते हैं। इनके कलेवर अत्यन्त नाजुक होते हैं। तनिक जोर पड़ने पर ही वे टूट जाते एवं पिचककर बिखर पड़ते हैं। पर्णहरिम के अभाव के कारण, ये सफेद पोशाक पहने हुए ही देख पड़ते है, जिस पर पीली, गुलाबी और सलेटी रंग की बड़ी सुन्दर झाँइयाँ प्रदर्शित रहती

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हैं । इनकी चितकबरी वेशभूषा कभी-कभी समुद्र में मिलनेवाली कौड़ियों के ऊपर की छींट-नुमा चित्रकारी को भी मात करती-सी जान पड़ती है !

(ठ) लाइकेन (शैवाक)—शैवालों और फफूँद-वर्गीय वनस्पतियों, दोनों ही वर्गों की कुछ विशेषताओं के संयोग से निर्मित ये पौधे शीत प्रदेशों के वृक्षों की छाल पर अथवा चट्टानों के पृष्ठों एवं पत्थर से बनी पुरानी दीवारों पर उगा करते हैं । ध्रुव-प्रदेशों के रेनडियर नामक बारहसिंवों के लिए इनकी कुछ किस्में प्रिय भोजन-सामग्री है ।

२. ब्रायोफायटा

वनस्पति-संसार के इस द्वितीय महाविभाग के पौधे वैज्ञानिकों की बोली में 'सेल्यूलर क्रिप्टोगम' के नाम से भी पुकारे जाते हैं । ये वनस्पति शैवाल-वर्ग के पौधों से ही विकसित हुए हैं, परन्तु उनमें 'थैलोफायटा' समूह के उद्भिजों से कहीं अधिक समुन्नत प्रजनन-व्यवस्था पायी जाती है । इनकी कोई तेईस हजार उप-जातियाँ हैं । इन सबको निम्न तीन वर्गों में बाँट दिया गया है :—

(क) लिवरवर्ट—अधिकतर नम वातावरण में ही पाये जानेवाले इन पौधों का कलेवर यद्यपि पत्तियों जैसी रचनाओं से आच्छादित देख पड़ता है, तथापि उनकी पत्रावली को वास्तविक पत्तियों की संज्ञा नहीं प्रदान की जा सकती । इसी तरह इनके नीचे की बाजू में एक प्रकार के महीन रोएँ होते हैं, जो इन्हें मिट्टी में टिकाये रहने में मददगार होते हैं । परन्तु ये भी वास्तविक जड़ नहीं होते ।

(ख) मॉस—इस जाति के पौधों में भी एक प्रकार की पत्रावली तथा जड़ के स्थान में 'लिवर-वर्टों' जैसे महीन डोरों की छटा छायी रहती है । परन्तु वनस्पति-विज्ञान की दृष्टि से ये रचनायें सच्ची पत्तियाँ या जड़ें नहीं कही जा सकतीं । 'ब्रायोफायटा' समूह के पौधों की प्रधान विशेषता इनकी प्रजनन-क्रिया है, जिसकी पूर्ति के लिए उनमें बहुकोशिक विशेष अंग होते हैं । इनके नर-बीजाणु 'ऐंथेरिडियम' (पुंधानी) नामक कोष्ठ में पैदा होकर संगृहीत होते रहते हैं । उधर मादा अंडा पौधे की 'आर्किगोनियम' (अंडधानी) नामक एक रचना में उपजता है, जिसकी शक्ल फ्लास्क-बोतल जैसी होती है । जब पुंधानी और अंडधानी दोनों पूर्णतया परिपक्व हो जाती हैं, तो

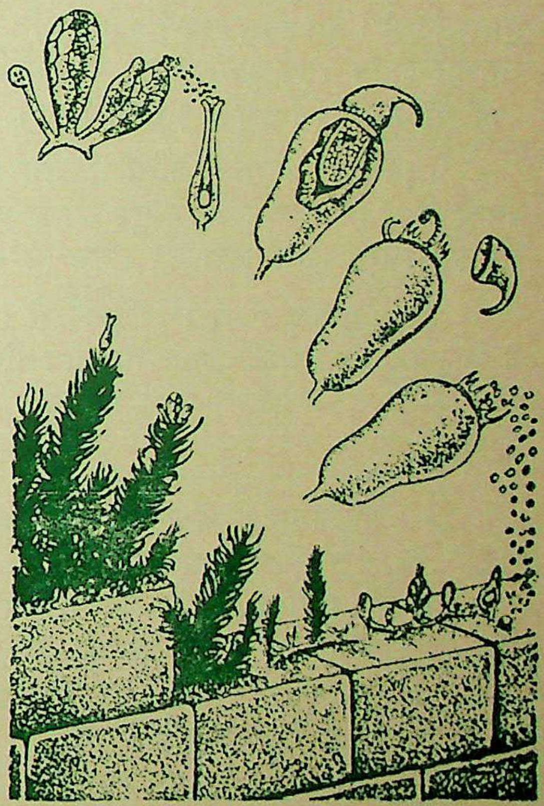

'ब्रायोफायटा' समूह के मॉस नामक लघु पौधे किस प्रकार अपने स्पोर पैदा करके उन्हें बखेरकर नये पौधे उपजाते हैं, यही प्रक्रिया इस चित्र में दरशाई गई है । ऊपर परिवर्द्धित आकार में बायें से दाहिनी ओर को क्रमशः 'ऐंथेरिडियम' में संगृहीत नर-बीजाणुओं द्वारा 'आर्कि-गोनियम' के अंडे के संसेचन, इस प्रकार विकसित 'स्पोर' के एक विशेष कोष्ठ में संचय तथा उचित अवसर पर उक्त कोष्ठ के विस्फोट से उन स्पोरों के बिखरकर किसी पुरानी दीवार की दरज में जा जमने की क्रियाएँ प्रदर्शित हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
पुंधानी या 'ऐंथेरिडियम' विस्फुटित होकर खुल जाती है और उसमें संगृहीत 'नर बीजाणु' मुक्त होकर पानी में तैरने लगते हैं। यहाँ हम तुम्हें बता दें कि हरित शैवालों की तरह 'मॉस' भी अपने बीजाणुओं को अंडे तक पहुँचाने की क्रिया सम्पन्न करने के लिए पानी की मदद पर अनिवार्य रूप से निर्भर होते हैं। यहाँ तक कि निपट स्थलवासी मॉस को भी इस कार्य के लिए वर्षाजल अथवा ओसबिन्दुओं से मदद लेना पड़ती है। पानी में तैरते-तैरते बीजाणु किसी तरह अंडधानी (आर्किगोनियम) की ग्रीवा तक जा पहुँचते हैं। तब उनमें से कोई साहसी वीर अंडधानी के भीतर प्रवश कर जाता है। वहाँ पहुँचकर वह अंडे को संसेचित कर देता है! तदनन्तर उक्त अंडा कोशिकाओं के बार-बार विभाजन के फलस्वरूप एक ऐसी भ्रूणतुल्य रचना में बदल जाता है, जो पौधे की भावी संतान के कलेवर की सारी सामग्री सूक्ष्म रूप में अपने में लिये रहती है। यह रचना 'स्पोर' कहलाती है। ऐसे अगणित स्पोर पौधे के संग्रहालय में इकट्ठा रहते हैं। अवसर पाकर वे मुक्त हो जाते हैं और हवा की मदद से उड़कर किसी उपयुक्त स्थान में जा जमते हैं, जिससे पुनः एक नया मॉस का पौधा विकसित हो जाता है। इस दिलचस्प क्रिया को विस्तार के साथ हमने इसलिए बताया है ताकि तुम समझ सको कि इतने सूक्ष्म और क्षुद्र पौधे के वंश-विस्तार के लिए भी कुदरत ने कैसी कारगर व्यवस्था की है (दे० पृ० १७ का चित्र)।

लिवरवर्टों की तरह मॉस भी नम और छायादार जगहों में ही अपनी बस्ती बसाना पसन्द करते ह। अपने चटक हरे रंग के कारण ये पौधे वृक्षों के गीले तनों, पुरानी दीवारों की दरजों एवं शिलापृष्ठों पर सहज ही पहचाने जा सकते हैं।

(ग) हार्नवर्ट––ये लिवरवर्टों से मिलते-जुलते पौधे होते हैं, केवल कुछ रचना-भेद के कारण उनका एक अलग वर्ग मान लिया गया है।

३. टेरीडोफायटा

इस महासमूह के वनस्पतियों में सबसे मशहूर 'फर्न' (पर्णाङ्ग) नामक वे सुन्दर पौधे हैं, जिन्हें शोभा के लिए प्रायः बगीचों में लगाया जाता है। इस प्रकार के पौधों में जड़ें, तना और पत्तियाँ तो होती हैं (जो वास्तविक हैं), परन्तु फूल, फल या बीज नहीं पाये जाते। बीज का काम ये पौधे 'स्पोर' नामक रजकणों से ही लेते हैं, जो कि इनकी पत्तियों पर जमा रहते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में इस वर्ग के पौधों की हरियाली प्रायः छायी रहती है। हम बता चुके हैं कि आज से लगभग पचीस-तीस करोड़ वर्ष पूर्व, कार्बोनिफेरस युग में इस जाति के पर्णाङ्गों के घने जंगल छा गये थे और उन्हीं की बदौलत आज हमें पृथ्वी पर कोयले का अमित भंडार प्राप्त है। फर्न की जाति के पौधों की कोई ८,००० उपजातियाँ अभी भी धरती पर मौजूद हैं, जो गमलों में उगाए जाने योग्य लघु पौधों से लेकर बीस-पचीस मीटर ऊँचे वृक्षों तक विविध नमूने अपने अंचल में बसाये हुए हैं। 'मार्सीलिया' जैसे कुछ फर्न पानी में भी पनपते हैं––वे तालाबों के किनारे की नम भूमि में अपनी बस्ती कायम किये रहते हैं। फर्न के अलावा 'टेरीडोफायटा' विभाग में 'इक्वीजीटम,' 'सिलैजिनेला,' 'लायकोपाड' नामक अन्य कुछ वनस्पति भी हैं, जो पर्वतीय क्षेत्रों के नम भागों में अक्सर देखने को मिलते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

४. स्पर्मेटोफायटा (फनेरोगैमिया)

वनस्पति-जगत् का यह चतुर्थ महाविभाग इस दृष्टि से सबसे अधिक गौरवपूर्ण है कि इसी के अंचल में सर्वाधिक उन्नत तथा उपयोगी पौधों का जमघट लगा है । इस महासमूह के पौधों की प्रधान विशेषता यह है कि इन सबमें किसी न किसी प्रकार के पुष्प खिलते तथा बीज उपजते हैं । इसीलिए इन्हें 'सपुष्पक पौधे' कहा जाता है । इन पौधों की रचना सारे वनस्पति-संसार में सबसे जटिल होती है । इनमें न केवल वास्तविक जड़ें, तना, पत्तियाँ, पुष्प आदि सभी कुछ होते हैं, प्रत्युत इनकी प्रजनन-क्रिया पुष्पों द्वारा अपने अंचल में ही सम्पन्न हो जाती है । आगे चलकर पौधे की रचना तथा जीवन-क्रियाओं की विस्तार से जानकारी पाने का प्रयास करते समय हमें इसी महावर्ग के वनस्पतियों का अध्ययन करना होगा । यह समूह दो प्रधान वर्गों में विभाजित माना जाता है :—

(क) 'जिम्नोस्पर्म्स' (विवृतबीज पौधे)—इस वर्ग के पौधों की विशेषता यह है कि उनके बीज खुले हुए या नग्न रहते हैं । फल प्रायः शंकु (या 'कोन') जैसे होते हैं । इस प्रकार के पेड़-पौधों पर पत्तियाँ सदैव बनी रहती तथा काठ बड़ा मजबूत होता है । इनकी आयु भी प्रायः अधिक पायी जाती है । लगभग पाँच सौ जातियों के इसी वनस्पति-वर्ग में 'सिक्वोइया', 'चीड़', 'देवदार', 'सरो' जैसे वृक्षराजों की भी गणना है, जिनमें से कुछ संसार के सबसे ऊँचे तथा सबसे अधिक उम्रवाले पेड़ हैं । इन सदापत्री वृक्षों की प्रवृत्ति उत्तरोत्तर सँकड़े होते हुए मीनार की तरह आसमान में सीधे बढ़ते चले जाने की होती है (दे० इसी पृष्ठ का चित्र) ।

(ख) 'एंजियोस्पर्म्स' (आवृतबीज पौधे)—इस वर्ग के पौधे अपने बीजों को किसी न किसी प्रकार के गर्भकोष्ठ में बन्द करके विकसित करते हैं । कोई दो लाख जातियों के वनस्पतियों का यह वर्ग वनस्पति-संसार का सबसे महत्वपूर्ण वर्ग है । कारण, इसी के अंचल में भाँति-भाँति के अनाज, फल, तरकारियाँ, कन्द-मूल, आदि का उपहार देनेवाले उपयोगी पेड़-पौधों का समावेश है । जिस प्रकार जीव-विकास की योजना में प्रकृति ने आखिर में मनुष्य एवं अन्य उन्नत जीवधारियों का निर्माण करके अपनी कला-कारीगरी की चरम उपलब्धि का कीर्तिमान स्थापित किया है, उसी प्रकार वनस्पतियों के विकास का अनुष्ठान रचते समय उसने इन आवृतबीज पौधों की सृष्टि करके अपनी सर्जन-प्रतिभा की पराकाष्ठा दरशायी है !

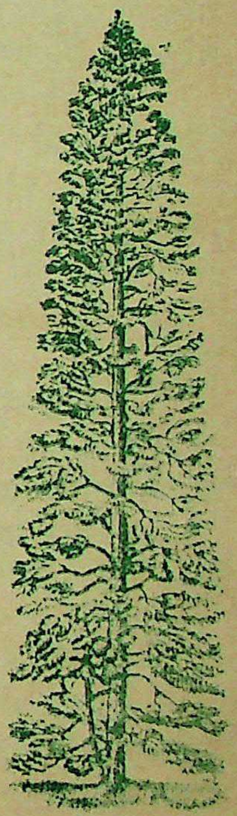

विवृतबीज पौधे का एक उदाहरण—चीड़ की जाति का एक वृक्ष । इसके फल 'कोन' जैसे होते हैं ।

इन आवृतबीज वनस्पतियों के आकार-प्रकार तथा रहन-सहन के तरीकों में काफी विविधताएँ हैं तथा उनकी उपजातियों की तादाद भी बहुत अधिक है, अतः अध्ययन की सुविधा के लिए वैज्ञानिकों ने उनको पुनः 'मानोकोटाइलेडान' (एकबीजपत्री) तथा 'डाइकोटाइलेडान' (द्विबीजपत्री), इन दो उपविभागों में बाँट दिया है । एकबीजपत्री पौधे वे हैं, जिनके प्रत्येक बीज में एक 'बीजपत्र' (कोटाइडेलान) होता है और द्विबीजपत्री वे, जिनमें दो बीजपत्र होते हैं । इस सम्बन्ध में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विशेष जानकारी तुम आगे चलकर पौधे की रचना का अध्ययन करते समय पा सकोगे। नीचे हम आवृतबीज पौधों के इन दोनों वर्गों के अन्तर्गत सम्मिलित कतिपय प्रमुख वनस्पति-परिवारों का परिचय दे रहे हैं। पहले द्विबीजपत्री समूह के पौधों को ही लें। इस समूह के निम्न परिवार विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं:––

१. राई-सरसों परिवार––इस परिवार के पौधों के पुष्पों में चार बाह्यदल, चार पंखुड़ियाँ, छः पुंकेसर (दो छोटे और चार लम्बे) तथा एक स्त्री-केसर होता है। राई, सरसों के अतिरिक्त मूली, शलजम, गोभी तथा करमकल्ला जैसी प्रसिद्ध तरकारियों के भी पौधे इसी वर्ग में शरीक हैं।

२. शिब-परिवार––इस महत्वपूर्ण परिवार के अन्तर्गत मटर, सेम, अरहर, चना, मूंग, उड़द, सोयाबीन, मूंगफली जैसे फलियों से उत्पन्न प्रसिद्ध द्विदली बीजों के पौधे सम्मिलित हैं। मटर की फली इस परिवार की पुष्प-रचना का प्रतिनिधि उदाहरण है। उसकी पाँचों पंखुड़ियाँ एक जैसी नहीं होतीं––बीचवाली बहुत बड़ी और आसपास की दो तितली के पंख-सी होती हैं। शेष दो पंखुड़ियाँ मिलकर पुष्प के दस पुंकेसरों तथा एकमात्र स्त्री-केसर को घेरे रहती हैं।

३. गुलाब-परिवार––न केवल सुन्दर पुष्पों के लिहाज से, बल्कि महत्वपूर्ण फलों की पैदावार की दृष्टि से भी इस परिवार को वनस्पति-संसार में गौरव का स्थान प्राप्त है। फूलों का राजा गुलाब तो इस कुटुम्ब का है ही, साथ ही सेब, नाशपाती, आलूबुखारा, स्ट्राबेरी, ब्लैकबेरी, आदि अनेक सुस्वाद फलवाले वृक्ष भी इसी खानदान में स्थान पाये हुए हैं। इस परिवार के पौधों के पुष्पों में पाँच बाह्यदल, पाँच अतिरिक्त पंखुड़ियाँ और अनेक पुंकेसर होते हैं। कुछ सदस्यों में इस नियम के अपवादस्वरूप कुछ विविधताएँ भी हैं, पर प्रधान गुण सामान्य हैं।

४. मिंट-परिवार––इस कुटुम्ब के पौधों के पुष्प नलिकाकार और लघु होते हैं तथा तने चौकोर होते हैं। पुदीना और पिपरमिंट इसी खानदान के सदस्य हैं। तीव्र चरपरी सुगन्ध इस परिवार के पौधों की विशेषता है।

५. आलू-परिवार––इस परिवार में आलू, टमाटर, बैंगन, तम्बाकू, जैसी उपयोगी फसलें पैदा करनेवाले कई पौधे सम्मिलित हैं। पिटूनिया नामक पौधे का पुष्प इस परिवार का प्रतिनिधि फूल है। उसमें पाँच बाह्यदल तथा पाँच पंखुड़ियाँ होती हैं, जो संयुक्त होती हैं। उसके पाँच पुंकेसर दलपुंज की नली से जुड़े रहते हैं।

६. पिंक-परिवार––इस समूह में 'पिंक', 'कार्नेशन', 'चिकवुड' नामक अनेक सुन्दर फूलवाले पौधे सम्मिलित हैं। इनके फूलों में पाँच बाह्यदल, पाँच पंखुड़ियाँ, दस पुंकेसर और दो से पाँच अंडपों द्वारा निर्मित स्त्री-केसर होता है।

७. स्नेपड्रेगन-परिवार––इस कुटुम्ब के सुन्दर पुष्पवाले पौधे (जिनमें स्नेपड्रेगन, फाक्सग्लव आदि प्रमुख हैं) आम तौर पर बगीचों एवं वनों में देखने को मिलते हैं। इनके अनियमित पुष्पसमूह की रचना चार-पाँच बाह्यदलों, उतनी ही पंखुड़ियों तथा दो से पाँच पुंकेसरों द्वारा होती है। स्त्री-केसर में दो अंडप होते हैं।

८. गाजर-परिवार––इस परिवार के अन्तर्गत गाजर के अतिरिक्त सौंफ, अजमोद, पार्सनिप, आदि हमारे अनेक जाने-पहचाने हुए पौधे हैं। इनके पुष्पों के बाह्यदलों, पंखुड़ियों,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुंकेसरों आदि सभी की संख्या पाँच-पाँच होती है। स्त्री-केसर दो अंडपों से युक्त होता है। हेमलॉक नामक जहरीला पौधा भी इसी परिवार का सदस्य है।

९. सूरजमुखी-परिवार––इस बड़े परिवार में सूरजमुखी, गेंदा, गुलदावदी, डैलिया, डेजी और एस्टर जैसे अनेक सुपरिचित फूलों के पौधों के अलावा लेटूस (सलाद), हाथीचक जैसे प्रसिद्ध साग भी सम्मिलित हैं। इनके पुष्प यद्यपि देखने में एक बँधे हुए फूल जैसे जान पड़ते हैं, परन्तु वे होते हैं दरअसल अनेक विलग पुष्पों के समूह।

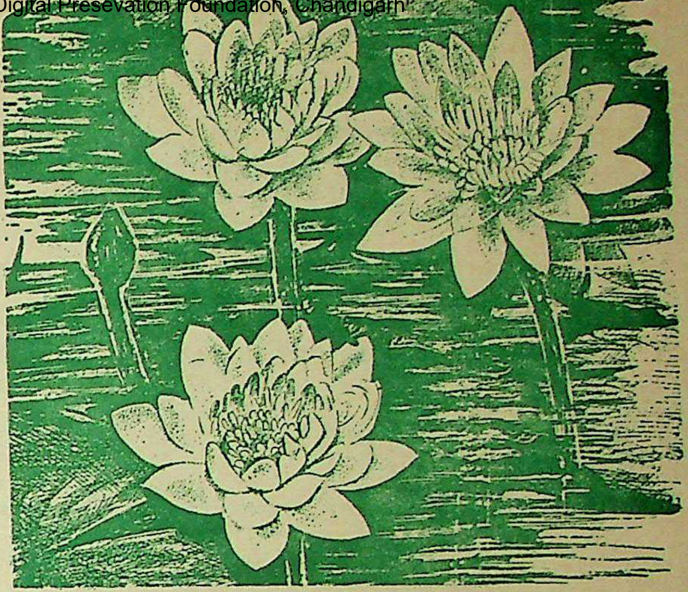

स्पर्मेटोफायटा समूह के आवृतबीज पौधों का एक सुन्दर नमूना––यह हमारी पुष्करिणियों में खिलनेवाली कुमुदिनी (कोकाबेली) की मनमोहक छटा है।

१०. बाँज-परिवार––इस कुटुम्ब में बाँज (बलूत), चेस्टनट (पांगुर), आदि कई छायादार, मजबूत लकड़ीवाले, शीत प्रदेश के वृक्ष हैं। इनके पुष्प बहुत छोटे होते हैं और उनमें पंखुड़ियाँ होती ही नहीं।

4643

११. अखरोट-परिवार––यह भी शीत प्रदेश में पाये जानेवाले अनेक सुपरिचित वृक्षों का परिवार है, जिसके अन्तर्गत अखरोट, पेकान और हिकोरी जैसे पेड़ों का समावेश है। इनमें भी पुष्प सर्वथा पंखुड़ियों से रहित तथा अत्यन्त छोटे होते हैं।

१२. भोजपत्र-परिवार––इस परिवार के मुख्य प्रतिनिधि आल्डर, हेजलनट तथा भोजपत्र जैसे ठंढे मुल्कों के कई एक वृक्ष हैं, जिनके पुष्प दलरहित, ऊर्ध्वस्थ और एकलिंगी होते हैं।

१३. कैक्टस-परिवार––इस परिवार के अन्तर्गत नागफनी, थूहड़ आदि की बिरादरियों के सूखे रेगिस्तानी क्षेत्रों के अनेक विचित्रवेशधारी पौधे सम्मिलित हैं, जिनमें से कई तीखे शूल और काँटों से सज्जित हैं। इनकी अधिकतर जातियाँ केवल अमेरिका में पायी जाती हैं। इनमें से कई में सुन्दर पुष्प खिलते हैं।

आओ, अब आवृतबीज पौधों के एकबीजपत्री वर्ग के भी कुछ चुने हुए महत्वपूर्ण परिवारों की जानकारी तुम्हें करा दें! ये हैं––

१. तृण-परिवार––पौधों के इस अत्यन्त महत्वपूर्ण कुटुम्ब के अन्तर्गत न केवल पशुओं का भरण-पोषण करनेवाली अनेक घासों का ही समावेश है, बल्कि गेहूँ, जौ, बाजरा, मकई, ज्वार, धान (चावल) आदि अनाजों के मूल्यवान् पौधे भी इसी कुटुम्ब में सम्मिलित हैं, जिन पर मनुष्य-जाति का जीवन निर्भर है। इनके पुष्प 'राकिला' नामक एक विशेष प्रकार की संयुक्त शाख पर लगा करते हैं और प्रत्येक पुष्प दो निपत्रों (ब्रेक्ट्स) के पुट में बन्द रहता है। तुम्हें यह जानकर कुतूहल होगा कि गन्ना और बाँस भी इसी कुटुम्ब के सदस्य हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

२. लिली-परिवार—इस परिवार में 'लिली' के नाम से सुपरिचित ग्रनेक प्रकार के सुन्दर पुष्पवाले पौधों के ग्रतिरिक्त 'हायसिन्थ', 'टयूलिप', 'यक्का' तथा 'एस्पेरेगस' (शतावरी) जैसे वे ग्रनेक पौधे हैं, जिनकी प्रवृति भूमि के नीचे 'बल्ब' (एक प्रकार की गाँठ) के रूप में ग्रपनी खाद्य सामग्री संचय करने की होती है। तुम्हें यह जानकर कुतूहल होगा कि हमारे सुपरिचित 'प्याज' ग्रौर 'लहसुन' भी इसी सुन्दर पुष्पोंवाले खानदान के सदस्य हैं। इनके पुष्पों में तीन बाह्यदल, तीन पंखुड़ियाँ तथा छः पुंकेसर होते हैं।

३. ग्रॉकिड-परिवार——इस समूह में ग्रनेक प्रकार के तड़कीले-भड़कीले पुष्पों के पौधे सम्मिलित हैं, जिन्हें शोभा के लिए उद्यानों में लगाया जाता है। इनमें से ग्रनेकों पौधे वृक्षों की डालियों पर उगकर सीधे हवा में से ही ग्रपनी जलपूर्ति कर लिया करते ह।

४. ताड़-परिवार——इस समूह में ताड़, नारियल, खजूर जैसे ग्रनेक वृक्ष शरीक हैं, जिनके बारे में ग्रागे चलकर इसी पुस्तक में विशेष हाल तुम पढ़ोगे।

प्रकृति का यह ग्रनोखा बगीचा निश्चय ही हमारे लिए एक महान् वरदान है

लाखों प्रकार के वनस्पतियों से भरपूर प्रकृति का यह विराट् उद्यान निश्चय ही हमारे लिए सृष्टिकर्ता की एक ग्रमूल्य देन है। हमें इस वरदान के लिए कुदरत का हृदय से ग्राभारी होना चाहिये, क्योंकि वही हमारे ग्राहार का प्रधान साधन है। इस नियामत के ग्रभाव में, न तो हम ग्रधिक समय तक इस धरती पर टिके रह सकते हैं, न हमारी सभ्यता की यह इमारत ही ग्रधिक काल तक बनी रह सकती है।

तुम सोचते होगे कि मनुष्य-जाति तथा जानवरों में से कई प्राणी तो मांस पर भी जीवित रह सकते हैं, ग्रतः वनस्पतियों के हम शायद इतने मोहताज नहीं ! परन्तु यह एक भ्रान्त धारणा है। कारण, जिन पशु-पक्षियों या मछलियों ग्रादि को खाकर मनुष्य ग्रथवा जानवर गुजारा कर सकते हैं, वे स्वयं तो घास-पात, पत्तियाँ, कन्द-मूल एवं ग्रनाज ग्रादि को ही खाकर पृथ्वी पर बने हुए हैं ! ग्रतः यदि वनस्पति न हों, तो मांसाहारियों के ग्राहार के साधन भी सर्वथा सूख जायेंगे। हमें याद रखना चाहिये कि सहारा, ग्ररब ग्रौर गोबी की मरुभूमियों से जीवधारियों ने जो किनारा कस रक्खा है, उसका प्रमुख कारण वहाँ वनस्पतियों का ग्रभाव ही है।

ये उदारमना पेड़-पौधे केवल फल-तरकारी, कन्द-मूल, ग्रनाज ग्रौर घास-पात ग्रादि देकर ही नहीं रह जाते, उनसे हमें रुई, रबड़, लाख, लकड़ी, तेल, शकर, मिर्च-मसाले, रंग, कागज, ग्रौषधियाँ, ग्रादि दैनिक व्यवहार के ग्रन्य ग्रनेक मूल्यवान् पदार्थ भी मिलते हैं, जिन के बिना एक दिन के लिए भी हमारा काम नहीं चलने का ! इन्हीं की बदौलत तो यह पृथ्वी इतनी हरी-भरी है ! इन्हीं के बूते पर सुबह-शाम हमें पक्षियों की मधुर चहकार सुनायी देती है। वसन्त में फूलों की रंगीन बहार ग्राती है। वर्षा-काल में हरी घास के कालीन बिछते हैं। ग्रीष्म में बटोहियों को तपन मिटाने का ग्रासरा मिलता है ! भला, इनके वरदानों का मूल्य कोई ग्राँके, तो कैसे ग्राँके ? इनकी निष्काम सेवा-भावना का मुकाबला कौन कर सकता है, जब कि हम उनके फल झपट लेते, फिर भी वे फूलों की मुस्कान से ही हमारा स्वागत करते ग्रौर लौट-लौटकर उन्हीं फलों, ग्रनाजों ग्रादि की फिर से हमें भेंट चढ़ाते रहते हैं ! इनके ऋण से हम सचमुच ही कभी उऋण नहीं हो सकते !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वनस्पति-जगत् के चमत्कारों पर निगाह दौड़ाते समय, जिन अचंभों पर सबसे पहले हमारी आँखें जा अटकती हैं, वे हैं निस्सन्देह आसमान से बातें करते हुए-से वे विशाल-काय वृक्ष, जिनके डीलडौल, कद अथवा दीर्घ आयु का मुकाबला अतीत या वर्तमान का कोई भी प्राणी नहीं कर सकता ! पृ० २५ पर दिये गये तुलनात्मक मानचित्र पर तनिक अपनी नजर दौड़ा देखो ! इस रेखा-चित्र में बीते युगों के तथा वर्तमान काल के अपने-अपने वर्ग के कतिपय सबसे बड़े जन्तुओं के एक ही पैमाने पर तुलनात्मक आकार प्रदर्शित किये गये हैं । साथ ही मिलान के लिए संसार के मौजूदा सबसे बड़े पेड़ (कैलिफोर्निया के सिक्वोइया जाति के एक वृक्षराज) के तने का थोड़ा-सा अंश भी पृष्ठभूमि में दे दिया गया है । अब अनुमान करो कि हाथी, जिराफ, घोड़ा, मगर, शुतुरमुर्ग और कमोडो ड्रेगन जैसे कुछ बड़े जानवर तो अलग रहे, इनसे कहीं अधिक बड़े डीलडौल के व्हेल (तिमि) और शार्क जैसे वर्तमान तथा जाएजेण्टोसारस या ब्रेकियोसारस जैसे बीते युगों के भीमकाय दैत्यों से भी ये वृक्ष कितने गुना अधिक बड़े हैं––न केवल तने की मोटाई में, बल्कि ऊँचे कद में भी !

'कुतुब मीनार' से भी अधिक ऊँचा, साढ़े तीन हजार वर्ष पुराना वृक्षराज !

संयुक्त राज्य (अमेरिका) के पश्चिमी भूभाग में, कैलिफोर्निया नामक प्रदेश में, समुद्र की सतह से दो-ढाई हजार मीटर की ऊँचाई पर एक रमणीक प्राकृतिक वन है । सिएरा नेवादा पर्वतमाला की प्रसिद्ध योसमिटी-घाटी के अंचल में स्थित इस दर्शनीय स्थल को 'संरक्षित राष्ट्रीय उद्यान' का गौरव प्रदान किया गया है और उसे देखने के लिए प्रति वर्ष साढ़े सात लाख यात्री वहाँ पहुँचा करते हैं ! भला, ऐसी कौन-सी आकर्षण की वस्तु वहाँ है,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
जो इतनी भारी भीड़ को संसार भर से इस स्थान तक खींच ले जाती है और जो भी वहाँ पहुँचता है, उसे आँखों में विस्मय बसाकर ही वापस लौटते देखा जाता है ?

इस प्रश्न के समाधान के लिए आवश्यकता है एक ऐसे वृक्ष की झाँकी अपने मन के परदे पर कल्पित करने की, जिसकी ऊँचाई दिल्ली की सुप्रसिद्ध 'कुतुब मीनार' (कद लगभग ७३ मीटर) से भी दस मीटर अधिक हो--जिसके तने का घेराव इकतीस मीटर से भी ज्यादा हो और जिसकी आयु कूती जाती हो साढ़े तीन हजार वर्ष के करीब ! हम तुम्हें विश्वास दिला देना चाहते हैं कि यह कल्पना शेखचिल्ली के सपने जैसी मनगढ़न्त नहीं है । ऐसा विशालकाय वृक्ष सचमुच ही इस धरती पर विद्यमान है । वह अमेरिका के पूर्वोल्लिखित राष्ट्रीय उद्यान में अपना मस्तक उठाये सदियों से आसमान के सितारों से बातचीत कर रहा है ! निस्सन्देह वह आज की दुनिया के सबसे बड़े प्राकृतिक चमत्कारों में से एक है । तभी तो उसे देखने के लिए यात्रियों के दल उमड़ते हुए थमते नहीं !

आओ, वनस्पति-जगत् के इस दिग्गज के बारे में कुछ और आश्चर्यजनक बातें तुम्हें बतायें । सबसे पहले तो उसके वजन का ही अन्दाज करो ! वैज्ञानिकों के अनुसार इस वृक्ष का तौल ६,१७६ टन है ! शायद तुम्हें मालूम होगा कि साधारण हाथी तौल में लगभग तीन टन का होता है । इस हिसाब से, यदि किसी काल्पनिक तराजू में एक ओर यह वृक्ष रक्खा जाय और दूसरी ओर उक्त वजन के दो हजार हाथी, तब भी इस वृक्षराज का ही पलड़ा भारी रहेगा--इतना भीमकाय है वह ! इसी तरह उसके आयतन का कुछ अनुमान इस बात से तुम लगा सकते हो कि यदि उसके काठ से दियासलाई की तीलियाँ बनायी जाएँ, तो तीस अरब तीलियाँ तैयार हो सकती हैं, जिन्हें संसार की आबादी के सभी नर-नारियों को बाँटने पर प्रत्येक व्यक्ति को हिस्से में दस तीलियाँ मिल सकती हैं ! भला, इस पेड़ के डीलडौल की समानता के स्तर तक पहुँचना वनस्पति-जगत् के अन्य सदस्यों के लिए कितनी नामुमकिन बात है, जब कि ८३ मीटर की उसकी ऊँचाई का लगभग आधा हिस्सा पाँच से आठ मीटर तक के व्यास की उसकी उस बुर्जनुमा तने की लाट में ही खप जाता है ? उसकी सर्वप्रथम डाली भी जमीन से करीब चालीस मीटर की ऊँचाई पर फूटी है ! स्वतः उक्त डाली की मोटाई भी दो मीटर से अधिक है तथा लम्बाई इक्कीस मीटर, जोकि किसी भी साधारण बड़े वृक्ष के डीलडौल से होड़ बद सकती है !

यह वृक्ष अकेला नहीं है--वह एक विशाल बिरादरी का सरदार है !

सबसे उल्लेखनीय बात तो यह है कि यह गगनचुम्बी वृक्ष प्रकृति की किसी एकान्त सनक की उपज न होकर, हजारों वर्षों से विद्यमान एक विशाल बिरादरी की वंश-परम्परा में जनमा है । फलतः पूर्वोल्लिखित प्राकृतिक उद्यान में वह अकेला ही नहीं खड़ा है, बल्कि उसके आसपास इसी बिरादरी के और भी कितने ही युवा तथा प्रौढ़ वृक्षों का जमघट लगा है । सच तो यह है कि 'सिक्वोइया' जाति के ये वृक्ष अकेले रहना पसन्द ही नहीं करते । वे पूर्वोक्त योसमिटी-घाटी में जहाँ भी मिलते हैं, वहाँ केवल विशाल झुंडों में ही विद्यमान हैं । इनका विशेष जमघट सिएरा नेवादा पर्वतों के ढलान पर है, जहाँ की जलवायु इनके विकास में विशेष रूप से सहायक हुई है । इनका 'सिक्वोइया' नाम अमेरिका के रेड इंडियनों के एक जातीय वीरपुरुष के नाम पर रक्खा गया है। अपनी रक्तवर्ण छाल के लाल रंग के कारण ये 'रेडवुड' के नाम से भी पुकारे जाते ह।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन वृक्षों की अनेक विशेषताएँ हैं। एक तो यह है कि ये रोग या जरा-वस्था के कारण मरना जानते ही नहीं ! इनकी मृत्यु प्राय: आकाश से बिजली के टूट पड़ने के फलस्वरूप ही होती पायी गयी है ! इस तरह इनके सदैव नीरोग एवं जराहीन बने रहने का रहस्य सम्भवत: इनके शरीर में प्रवाहित उस अद्भुत रस में निहित है, जो जबर्दस्त कीटाणुनाशक तथा फफूँद का घातक शत्रु है। उनके लिए बचाव का सबसे बड़ा साधन तो है वह रक्त-वर्ण छाल, जो अस्बेटॉस जैसी पूर्णतया अग्निशामक है ! बड़े पेड़ों में यह छाल लगभग तीस सेंटीमीटर (एक फुट) मोटी होती है। यदि तरुणावस्था में कुछ पौधे वन की दावानल के आतंक से क्षत भी हो जाते हैं, तो उनके जले हुए अंशों की आश्चर्यजनक रीति से अपने आप मरम्मत हो जाती है। इस छाल की एक विशेषता यह भी है कि वह स्पंज जैसी होती है। फलत: उस पर आघात का प्रभाव नहीं पड़ता। तुम उस पर कसकर घूँसा मारो, तो भी तुम्हारे हाथ पर चोट नहीं लगने की, इतनी लचीली होती है वह !

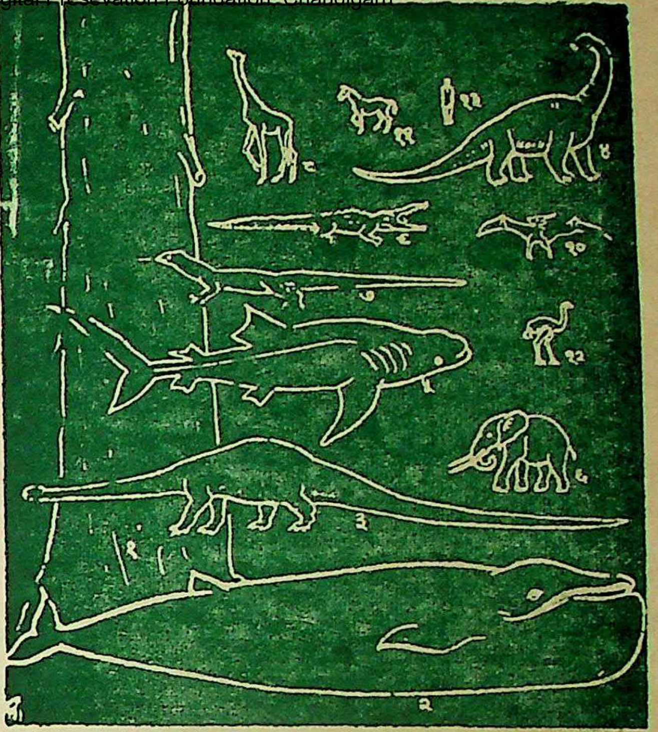

अतीत और वर्तमान काल के अपने-अपने वर्ग के सबसे बड़े प्राणियों के डीलडौल के साथ वृक्षराज सिक्वोइया के कलेवर की तुलना—१. सिक्वोइया वृक्ष (ऊँचाई ८३ मीटर; तने का व्यास ८ मीटर); २. तिमि या ह्वेल; ३. 'जाएजेण्टोसॉरस' नामक सबसे लंबा लुप्त डिनोसॉर; ४. 'ब्रेकियोसॉरस' नामक सबसे ऊँचा विलुप्त प्राणी; ५. सबसे बड़ी शार्क मछली; ६. हाथी; ७. कमोडो ड्रेगन नामक गोह; ८. सबसे ऊँचा वर्तमान पशु जिराफ; ९. मगर; १०. विलुप्त उरंगम पक्षी टेरानोडॉन; ११. घोड़ा; १२. शुतुर्मुर्ग; १३. मनुष्य।

इन वृक्षों में पहली बार पुष्प खिलते हैं पौने दो सौ वर्ष की आयु में !

तुम यह जानकर हक्का-बक्का रह जाओगे कि इन विशालकाय वृक्षों की उम्र जहाँ तीन-चार हजार वर्ष तक की होती है, वहाँ उनमें यौवन का आगमन लगभग पौने दो सौ वर्ष की आयु में पहुँचकर होता है ! तभी इनमें पहलेपहल फूल खिलते हैं, जिनके फलस्वरूप अन्त में इन महावृक्षों पर लाखों-करोड़ों की संख्या में 'कोन' (शंकु) जैसे उनके फल लद जाते हैं ! इन फलों के बीजों का डीलडौल कितना नन्हा होता है, इसका अन्दाज तुम्हें इस बात से हो जायगा कि यदि हमें एक औन्स (२८ ग्राम) वजन के ऐसे बीजों की आवश्यकता हो, तो इसके लिए तीन हजार बीज जुटाने होंगे ! उन बीजों को अपने कलेवर में सँजोये रहनेवाले कोन भी हास्यास्पद रूप से लघु होते हैं--उनका आकार हमारे कोट के चमड़े से मढ़े हुए बड़े बटन से अधिक बड़ा नहीं होता ! इन वृक्षों की पत्रावली बारहों महीने चमकीले हरे रंग की बनी रहती है। उनकी लकड़ी में रेशा नहीं होता--वह पेंसिलों में काम में लाए जानेवाले ग्रेफाइट की तरह भंगुर होती है। वह कभी सड़ती भी नहीं, अत: एक तरह से वह अजरामर कही जा सकती है !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

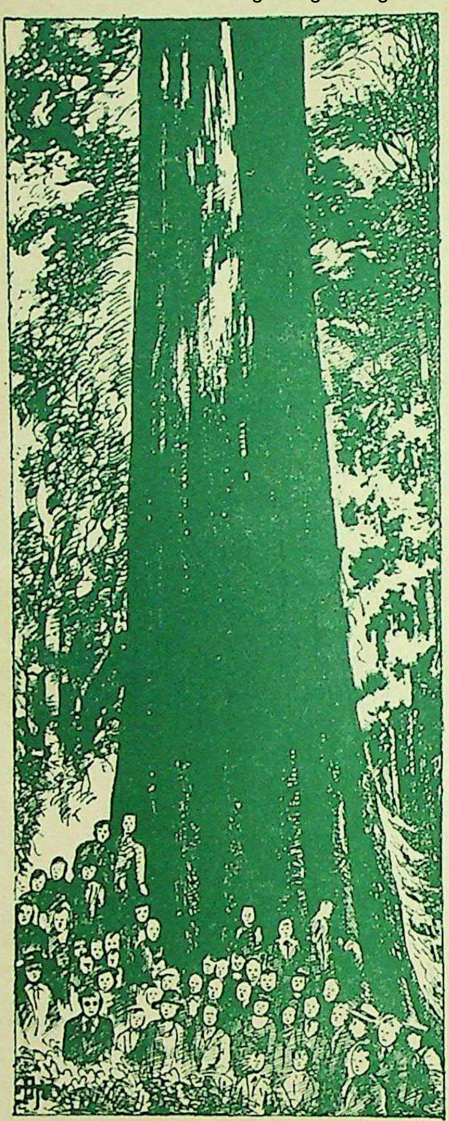

आॅस्ट्रेलिया के मेलबोर्न नगर से कुछ दूरी पर स्थित ८८ मीटर ऊँचे एक गगनचुंबी युकॅलिप्टस वृक्ष का १६ मीटर परिधिवाला विशाल तना (विवरण पृ० २७ पर)।

इन सिक्वोइया वृक्षों का पता पहलेपहल शायद सवा सौ वर्ष पूर्व एक शिकारी ने लगाया था। वह एक भूरे भालू का पीछा करते हुए उनके एक कुंज तक जा पहुँचा था। वहाँ पहुँचकर वह भालू को सर्वथा भूल गया और हक्का-बक्का होकर इन गगनचुम्बी वृक्षों को ही देखता रह गया! पता पाने पर लोगों ने इन वृक्षों को लकड़ी के लोभ में बेतरह काटना शुरू किया! कहते हैं, जब ये खोजे गये थे, तब 'जनरल शेरमेन' से होड़ बदनेवाले अनेक वृक्षराज वहाँ खड़े थे। अब राजाज्ञा द्वारा इन वृक्षों का संहार सर्वथा बन्द कर दिया गया है। साथ ही बीज बोकर अन्यत्र उनकी पौध उपजाने के भी प्रयत्न किये गये हैं!

तुम्हें यह जानकर कुतूहल होगा कि वर्षों पूर्व एक मनचले व्यक्ति ने राह में पड़नेवाले एक सिक्वोइया वृक्ष के तने को छेदकर, उसमें इस तरह का चौड़ा सुरंगनुमा मार्ग बना दिया था कि आज उससे होकर न केवल मोटरगाड़ियाँ बल्कि ऊँची घोड़ागाड़ियाँ तक निकलकर आ-जा सकती हैं! तथापि इससे उस वृक्ष की कोई हानि नहीं हुई है। वह ज्यों-का-त्यों हरा-भरा खड़ा है और उसके विकास का क्रम अभी भी जारी है। इस तथ्य से इन वृक्षों की असाधारण जीवनी-शक्ति की झलक मिलती है।

वनस्पति-जगत् का भीष्म पितामह—४,६०० वर्ष पुराना धराशायी बुजुर्ग!

सिक्वोइया वृक्षों के कुंजों से डेढ़ सौ किलोमीटर की दूरी पर अमेरिका का अन्य एक राष्ट्रीय प्राकृतिक उद्यान है, जो 'इन्यो राष्ट्रीय वन' के नाम से पुकारा जाता है। चूँकि यह वन सिएरा नेवादा पर्वतों की बर्फीली हवाओं से असुरक्षित पूर्वीय बाजू में अवस्थित है, अतः यहाँ वस्तुतः किसी भी जाति के वृक्षों के पनपने की कोई गुंजाइश ही न थी। फिर भी कुदरत ने अपनी एक अनूठी करामात यहाँ पेश की है! यह चमत्कार है धरती पर लेटे हुए, 'पाइनस एरिस्टाटा' वर्ग के चीड़-जाति के एक पुरातन वृक्षराज का महान् तना, जिसकी आयु ४,६०० वर्ष से भी अधिक आँकी जाती है। इस विशाल लट्ठे का व्यास कम से कम साढ़े चार मीटर तथा लम्बाई सौ मीटर है! चूँकि इस भीमकाय तने का सिरे पर का ऊपरी हिस्सा आज नदारद है, अतः यह अन्दाज किया जाता है कि जिन दिनों यह वृक्ष जीवित दशा में खड़ा रहा होगा, उस समय इसकी ऊँचाई कम से कम १२२ मीटर रही होगी! निश्चय ही उस समय यह संसार का सब से ऊँचा वृक्ष

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहा होगा। इस धराशायी लट्ठे का भीतरी हिस्सा खोखला हो गया है और उसमें किसी ने सुरंग बना दी है। कहते हैं कि एक बार एक व्यक्ति घोड़े पर सवार हो, बिना सिर झुकाए, उसमें चलता चला गया था! भीष्म पितामह की भाँति धरती पर लेटे इस बुजुर्ग को स्थानीय लोगों ने 'वन के लकड़दादा' का जो नाम दे रक्खा है, सो सर्वथा उचित ही है।

गगनचुम्बी वृक्षों के अन्य कई उदाहरण भी मिलते हैं

यह बात नहीं है कि आकाश को छूनेवाले विशालकाय वृक्षों का एकाधिकार अमेरिका के सिक्वोइया एवं चीड़-परिवार के पेड़ों ने ही ले रक्खा हो। वस्तुतः अन्यत्र भी, विशेषकर ऑस्ट्रेलिया में, बहुत अधिक ऊँचे वृक्षों की विद्यमानता के प्रमाण वैज्ञानिकों को मिले हैं। इन में सबसे ऊँचे पेड़ का सेहरा बाँधने का अधिकार युकैलिप्टस जाति के एक ऑस्ट्रेलियन वृक्षराज को ही दिया जा सकता है। यह पेड़ डा० फर्डिनैण्ड मूलर नामक अन्वेषक को लात्रोब नदी के किनारे खड़ा मिला था। नापने पर उन्होंने इसकी ऊँचाई १७० मीटर (लगभग ५५८ फीट) पायी थी! पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया में अभी भी ऐसे कई युकैलिप्टस मौजूद हैं, जो सौ-डेढ़ सौ मीटर तक की ऊँचाई तक आसमान में उठे हुए हैं। इन वृक्षों के तने की मोटाई भी कम नहीं होती। फ्राउद नामक एक विद्वान् ने एक युकैलिप्टस वृक्ष के तने की परिधि तेरह मीटर नापी थी। पृष्ठ २६ पर दिये गये चित्र पर गौर करो! इस तस्वीर में एक युकैलिप्टस वृक्ष का ही तना दिग्दर्शित है। इसका घेराव १९ मीटर है! ८८ मीटर ऊँचे इस वृक्ष के तने को चारों ओर से बाँह से बाँह मिलाकर घेरने के लिए पन्द्रह आदमियों की जरूरत पड़ती है। यह वृक्ष ऑस्ट्रेलिया के मेलबोर्न नगर से कुछ दूरी पर स्थित है।

ऊँचे कद के वृक्ष की अन्य कुछ बिरादरियाँ भी मिलती हैं, यद्यपि वे उस ऊँचाई तक पहुँचते नहीं पायी जातीं, जहाँ तक युकैलिप्टस, सिक्वोइया आदि को हमने उठते देखा है। उदाहरणार्थ, 'डगलस फर' जाति का

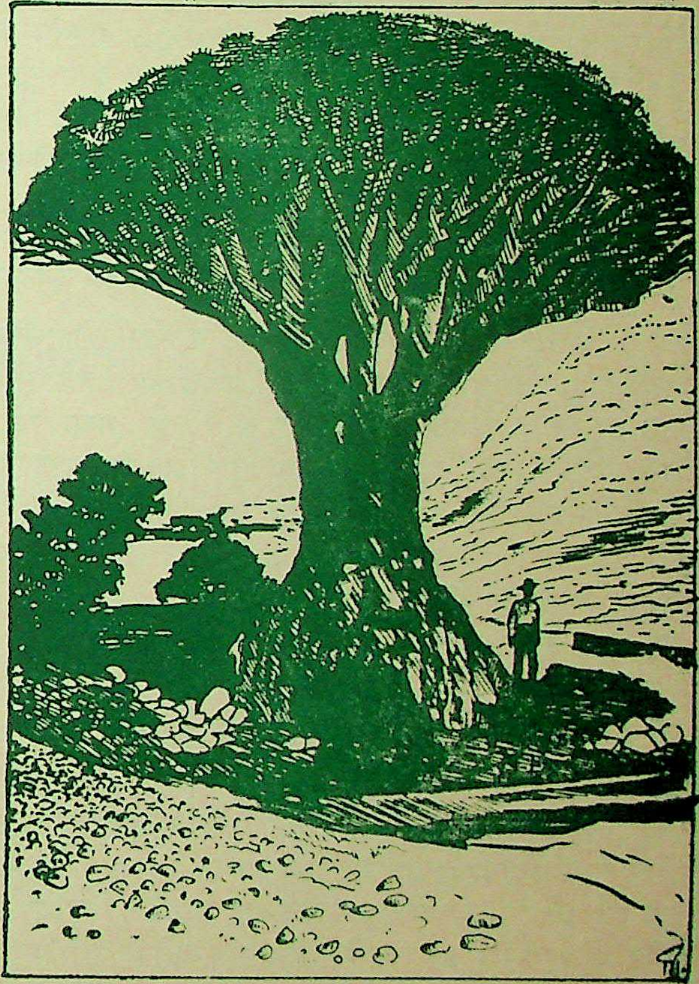

कनारी-द्वीप का प्रख्यात 'ड्रेगन वृक्ष', जिसकी आयु कम से कम आठ हजार वर्ष रही होगी, ऐसा वैज्ञानिकों का अनुमान है! यह पेड़ १८६८ ई० में एक तूफान में नष्ट हो गया था। यह अपने समय में निस्संदेह संसार का सबसे अधिक आयुवाला वृक्ष था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

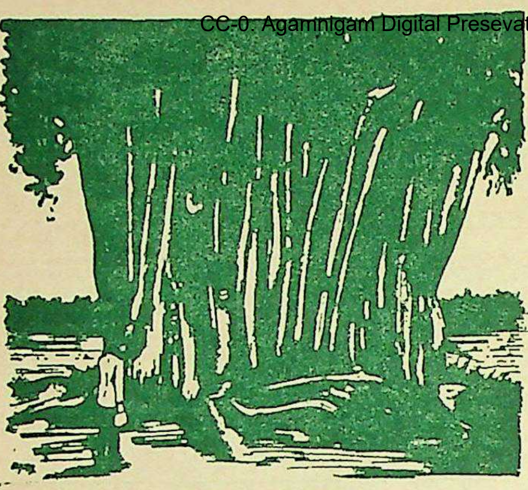

मैक्सिको के तूला नामक स्थान में विद्यमान १६ मीटर व्यास के तनेवाला प्रसिद्ध सायप्रस वृक्ष, जिसकी आयु वैज्ञानिकों ने कम से कम पाँच हजार वर्ष कूती है। आज संसार का सबसे पुराना वृक्ष यही माना जाता है! यह उस समय भी मौजूद रहा होगा जब कि भारत में महाभारत का युद्ध भी नहीं हुआ होगा!

पेड़ ५४ मीटर तथा 'पाप्लर' ४० मीटर तक की ऊँचाई तक पहुँचते देखा गया है। इनमें से प्रथम इंगलैण्ड में तथा दूसरा फ्रान्स में मौजूद है। जर्मनी में 'एल्म' जाति का एक वृक्ष ४५ मीटर ऊँचा तथा चीड़ की जाति के दो नमूने ५० मीटर तक ऊँचे मिले हैं। हमारे देश में भी देवदार, चीड़, सागौन, सेमर (शाल्मलि) जैसे वृक्षों की गणना ऊँचे कद के पेड़ों में ही होती है, परन्तु इनके कोई असाधारण कीर्तिमान स्थापित करने-वाले अद्भुत नमूने अभी तक सामने नहीं आये हैं। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि लकड़ी के लोभ में हमारे पुरातन वृक्ष बेतरह काट डाले गये हैं। संभव है कि हिमालय के दुर्गम क्षेत्रों में ऐसे कुछ पुराकालीन नमूने अभी भी मौजूद हों, जिनकी ऊँचाई वैज्ञानिकों को चकित कर सके!

मोटाई के लिहाज से चुनौती देनेवाले उल्लेखनीय वृक्ष

ऊँचाई की चर्चा समाप्त करके, जब हम मोटाई के लिहाज से कीर्तिमान स्थापित करने-वाले वृक्षों की तलाश करते हैं, तो सबसे पहले हमारा ध्यान सेमर (शाल्मलि) की जाति के उन अफ्रीकी पेड़ों पर जा अटकता है, जिन्हें 'बाओबाब' के नाम से पुकारा जाता है। इनके तने चौड़े नाँद की भाँति फूले हुए और चिकनी छाल से मढ़े हुए होते हैं। कई की मोटाई तो इतनी अधिक पाई गई है कि यदि पन्द्रह-बीस आदमी एक-दूसरे के साथ हाथ फैलाकर उन्हें घेरें, तो भी अपनी बाँहों में उन्हें नहीं समेट सकते! प्रयाग में गंगा नदी के उस पार झूसी की बस्ती के समीप संभवतः इसी परिवार का एक प्राचीन वृक्ष मौजूद है (पृ० ३२ का चित्र देखो)। इस वृक्ष के तने का घेराव साढ़े सोलह मीटर है! उसकी कुछ जड़ें भी (जो मिट्टी बह जाने से खुलकर तीस मीटर तक फैली दिखायी देती हैं) इतनी मोटी हैं कि एक आदमी की बाँह में वे नहीं आ पातीं! किसी डरावने प्रागैतिहासिक जन्तु-सा जान पड़नेवाला यह दैत्य आयु में एक हजार वर्ष से कम नहीं है, ऐसा जानकार लोगों का मत है!

मोटे तने के कुछ असाधारण नमूने शाह बलूत या बाँज (ओक), पाँगर (चेस्टनट), कैल (सायप्रस) तथा रौसला (स्प्रूस) परिवार के वृक्षों में भी मिले हैं। उदाहरणार्थ, डेढ़ सौ वर्ष पूर्व इंगलैण्ड में एक बलूत वृक्ष काटकर गिराया गया था, जिसके तने का व्यास लगभग तीन मीटर था। उधर जर्मनी में राइन नदी के तट पर खड़े दो पुराने लाइम वृक्षों के तनों का घेराव लगभग चौबीस मीटर नापा गया है! परन्तु इस प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार पाने के अधिकारी वस्तुतः पाँगर (चेस्टनट) और कैल (सायप्रस) परिवार के कतिपय वृक्ष हैं। इटली के दक्षिण में सिसली द्वीप के सुप्रसिद्ध माउण्ट एटना ज्वालामुखी के ढाल पर एक पुराना पाँगर (चेस्टनट) वृक्ष खड़ा है, जिसके तने का घेराव ५४ मीटर बताया जाता है! उधर,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मैक्सिको के तूला नामक स्थान में एक अत्यन्त पुरातन कैल (सायप्रस) वृक्ष मौजूद है, जिसका तना १६ मीटर व्यास का कीर्तिमान स्थापित किये हुए है। कहते हैं, ५० मीटर घेराव-वाले इस वृक्षराज को चारों ओर से यदि तीस व्यक्ति मिलकर बाँह फैलाये हुए घेरने की कोशिश करें, तो भी उनके आलिंगन में वह नहीं आ पायेगा। यह वृक्ष ऊँचाई में भी कदापि कम नहीं--उसका कद ५१ मीटर है! और आयु के लिहाज से तो वह दीर्घजीवी वृक्षों की प्रथम पंक्ति में प्रतिष्ठित है--उसकी उम्र पाँच हजार वर्ष से भी अधिक बतायी गयी है (पृ० २८ का चित्र देखो)।

वृक्षों की आयु जानवरों से कहीं अधिक होती है--कुछ उल्लेखनीय उदाहरण ये हैं!

वनस्पति-जगत् की यह उल्लेखनीय विशेषता है कि उसके सबसे बड़े सदस्यों की आयु जन्तु-जगत् के बड़े प्राणियों की अपेक्षा बहुत अधिक होती है। वैसे जानवरों में भी तिमि (व्हेल) लगभग चार-पाँच सौ वर्ष; कुछ स्थलवासी कछुए तीन-चार सौ वर्ष; कार्प नामक मछली दो सौ वर्ष; राजहंस डेढ़ सौ वर्ष; हाथी सवा सौ से डेढ़ सौ वर्ष; गरुड़, मगर और कौआ सौ वर्ष; तोता साठ से सौ वर्ष तथा बत्तख अस्सी वर्ष की आयु तक जीवित रहते बताए जाते हैं। इधर मनुष्यों द्वारा भी सौ से पौने दो सौ वर्ष तक की आयु प्राप्त करने के उदाहरण मौजूद हैं। परन्तु ये आँकड़े वनस्पति-जगत् के तत्सम्बन्धी कीर्तिमान के सामने वस्तुतः नगण्य ही जान पड़ते हैं। कारण, हम देख चुके हैं कि सिक्वोइया तथा पाइनस परि-

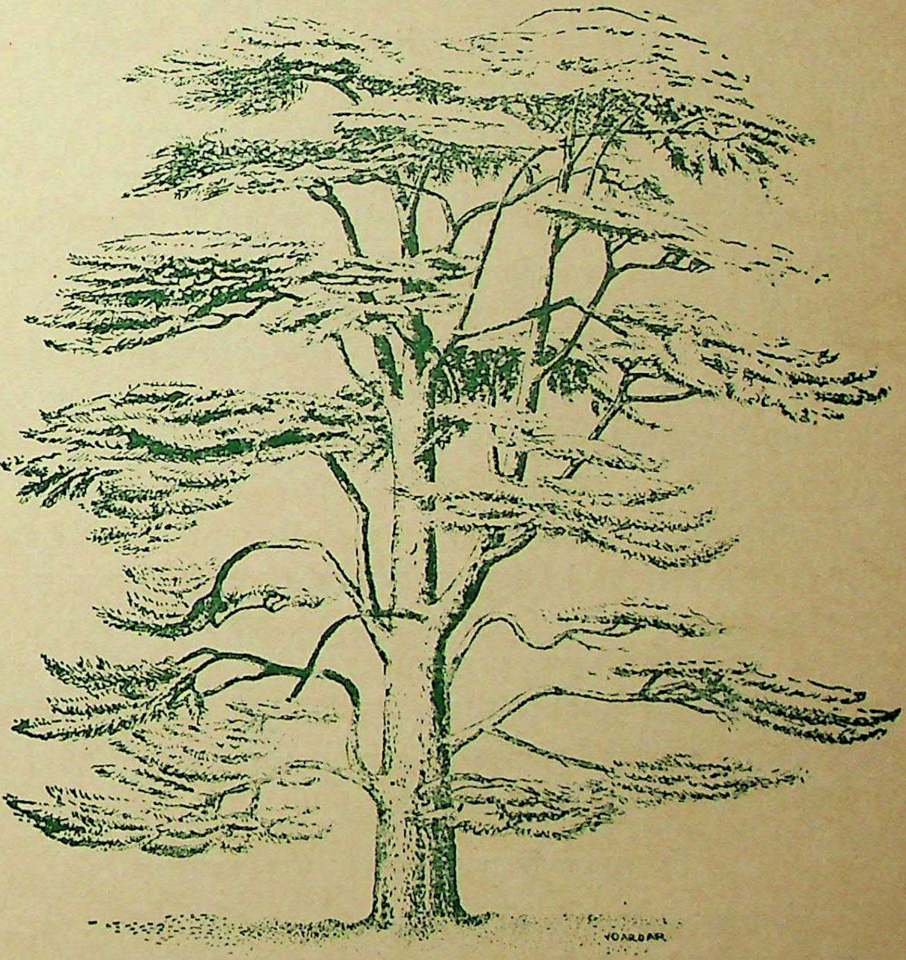

निर्द्वन्द्व भाव से आसमान की ओर अपनी शाखा-प्रशाखाएँ फैलाये रहनेवाले वृक्षों की छवि कितनी भव्य और प्रभावशाली होती है, इसका कुछ अनुमान तुम लेबनान के 'सिडार' जाति के इस विशाल वृक्ष की छटा द्वारा कर सकते हो।

वार के दिग्गज वृक्षों की उम्र तीन-चार हजार वर्ष से लेकर चार-पाँच हजार वर्ष तक की पायी गयी है ! फिर अचम्भा तो यह है कि वनस्पतियों की लम्बी आयु की यही अन्तिम सीमा नहीं है। क्योंकि समय-समय पर ऐसे दीर्घायुवाले वृक्षों की विद्यमानता के भी संकेत मिलते रहे हैं, जिनकी आयुष्य दस-बारह हजार वर्ष तक की होने का दावा लोगों ने किया है ! ऐसा एक अद्भुत पेड़ क्वीसलैंड (आँस्ट्रेलिया) में आज भी मौजूद बताया जाता है। वह मेक्रोजामिया जाति का वृक्ष है, जो उँचाई में केवल साढ़े छः मीटर के लगभग है। कनारी-द्वीपों के मशहूर 'ड्रेगन-वृक्ष' (देखो पृ० २७ का चित्र) के बारे में भी कहा जाता है कि उसकी उम्र आठ-नौ हजार वर्ष से कम नहीं रही होगी। यह वृक्ष १८६८ ई० तक तो उन द्वीपों में विद्यमान था, परन्तु तब एक तूफानी आँधी ने उसे उखाड़ फेंका था। मैक्सिको के प्रसिद्ध सायप्रस वृक्ष की भी उम्र पाँच हजार वर्ष से कम नहीं मानी जाती ! ये सभी प्राचीन वृक्ष उस समय भी इस पृथ्वी पर मौजूद थे, जब कि हमारे यहाँ महाभारत का युद्ध हो रहा था एवं योरप के अधिकांश लोग निपट जंगली दशा में ही विचर रहे थे !

पेड़ों की दीर्घ आयु की सूचना हमें अपने देश में भी 'अक्षय वट', 'बोधिवृक्ष' आदि हजारों वर्षों से पूजे जा रहे पुनीत वृक्षों से मिलती है। पुराणप्रसिद्ध 'अक्षय वट' प्रयाग के पुनीत त्रिवेणी-संगम पर स्थित एक विशाल बरगद का पेड़ था, जिसका अब एक अंश ही शेष रह गया है। वह अंश इलाहाबाद के किले में आज भी देखा जा सकता है। यह वृक्ष कितना पुराना है, कोई नहीं कह सकता ! उसका उल्लेख प्राचीनतम ग्रंथों में भी है और यह माना जाता है कि वह ठेठ प्रलय तक टिका रहेगा। इसी तरह गया में स्थित पुनीत अश्वत्थ वृक्ष के बारे में भी, जिसके नीचे समाधिस्थ हो भगवान् बुद्ध ने ढाई हजार वर्ष पूर्व 'संबोधि' प्राप्त की थी, तरह-तरह की दन्त-कथाएँ प्रचलित हैं। इधर हाल ही में उत्तर प्रदेश के बाराबंकी जिले में बड़ी अजीब शक्ल के लगभग १८ मीटर घेरावाले मोटे तने के एक प्राचीन वृक्ष का पता चला है, जिसे लोग महाभारतकालीन (अर्थात् पाँच हजार वर्ष पुराना) मानते हैं। इसे 'पारिजात', 'कल्पवृक्ष' आदि नामों से सम्बोधित किया जाता है और इसमें सुगंधित रक्तवर्ण पुष्प लगा करते हैं। संभवतः यह अफ्रीकी 'बाओबाब' वृक्ष की जाति का कोई पेड़ है।

इसी प्रसंग में, जानकारी के लिए कुछ प्रसिद्ध वृक्षों की प्रामाणिक आयु हम तुम्हें बता देना चाहते हैं। पाश्चात्य दुनिया का सबसे प्रसिद्ध और लोकप्रिय वृक्ष 'ओक' (शाहबलूत या बाँज) है। यह वृक्ष डेढ़ हजार वर्ष तक की आयु प्राप्त करते पाया गया है। इसी तरह 'यू' वृक्ष तीन हजार वर्ष तक, 'स्काट्स पाइन' (चीड़) एक हजार वर्ष तक तथा 'डगलस फर', 'लाइम', 'ओलिव' (जैतून) 'वाल्नट' (अखरोट) आदि वृक्ष पाँच सौ से नौ सौ वर्ष तक जीवित रहते देखे गये हैं। हमारे अपने देश के बरगद, इमली, सेमर, देवदार, चीड़, साल आदि बड़े पेड़ भी प्रसिद्ध दीर्घजीवी वृक्ष हैं।

विस्तार के लिहाज से सबको मात करनेवाला वृक्ष––बरगद

अब तक हमने वृक्षों की विशालता का दिग्दर्शन केवल उनकी ऊँचाई अथवा तने की मोटाई को लेकर किया है। किन्तु उनकी महत्ता का दरअसल एक और पैमाना भी है–– वह है उनका फैलाव ! इस लिहाज से संसार भर के पेड़ों को चुनौती देने की क्षमता यदि कोई वृक्ष रखता है, तो वह है बरगद ! इस पेड़ की सब से बड़ी खूबी इस बात में है कि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उससे एक तरह की जटाएँ फूटकर जमीन की ओर लटक आती हैं। ये जटाएँ समय पाकर धरती को छू लेतीं और उनमें से जड़ें निकलकर भूमि में प्रवेश कर जाती हैं! अब एक विचित्र क्रिया शुरू होती है—ये जटाएँ, जिन्हें बरोहियाँ भी कहते हैं, जमीन में से खाद्य तत्व खींचकर न केवल अपने आपको, बल्कि समूचे पेड़ को ही अतिरिक्त पोषण प्रदान करने लगती हैं। कालान्तर में काफी मोटी होकर ये बरोहियाँ तने का-सा रूप ग्रहण कर लेती हैं और उनसे नई शाखें फूट निकलती हैं। यह सिलसिला निरन्तर जारी रहता है। फलतः वृक्ष का फैलाव लगातार बढ़ता ही चला जाता है। इस प्रकार कुछ वर्षों में बीसियों उपतनों पर टिके हुए इस अद्भुत जटाजूटमय, बहुशाखायुक्त, वृक्षराज की झाँकी ऐसी दिखायी देने लगती है, जैसे कि प्राकृतिक स्तम्भों पर आधारित, हरित पत्रावली से ढका हुआ कोई विशाल पंडाल खड़ा हो! भला, कलाकार कुदरत की इंजीनियरी की इस करतूत के बारे में कोई क्या कहे!

नर्मदा-तट का महान् वटवृक्ष, जिसके नीचे बीस हजार व्यक्ति बसेरा ले सकते थे!

वैसे तो भारतवर्ष में सदियों से बरगदों का जमघट लगा है, तथापि इतिहास में जो ख्याति गुजरात के भड़ौंच (प्राचीन भृगुकच्छ) नगर के समीप नर्मदा नदी के एक टापू पर स्थित एक महाकाय वटवृक्ष को प्राप्त हुई है, वह सर्वथा अद्वितीय है! यद्यपि यह महान् वृक्ष नर्मदा की विनाशकारी बाढ़ के फलस्वरूप अब इस दुनिया से उठ चुका है, तथापि उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक लोगों ने इस प्राकृतिक चमत्कार की झाँकी पायी थी। फोर्बस नामक एक योरपीय विद्वान् ने इसे तेरह सौ मीटर व्यास के घेरे में फैला हुआ देखा था, यद्यपि तब तक उसका अधिकांश भाग नर्मदा की लपेट में आकर पूरी तरह नेस्तनाबूद हो चुका था! कहते हैं, उक्त जीर्णावस्था में भी इस वृक्षराज के साढ़े तीन सौ बड़े तने मौजूद थे और उसकी लघु बरोहियों की संख्या तो तीन हजार से भी अधिक थीं! यह वृक्ष क्या था, मानो एक सम्पूर्ण वन ही वह था! उसके साये में न जाने कितने छोटे पौधों और शरीफे जैसे लघु पेड़ों ने

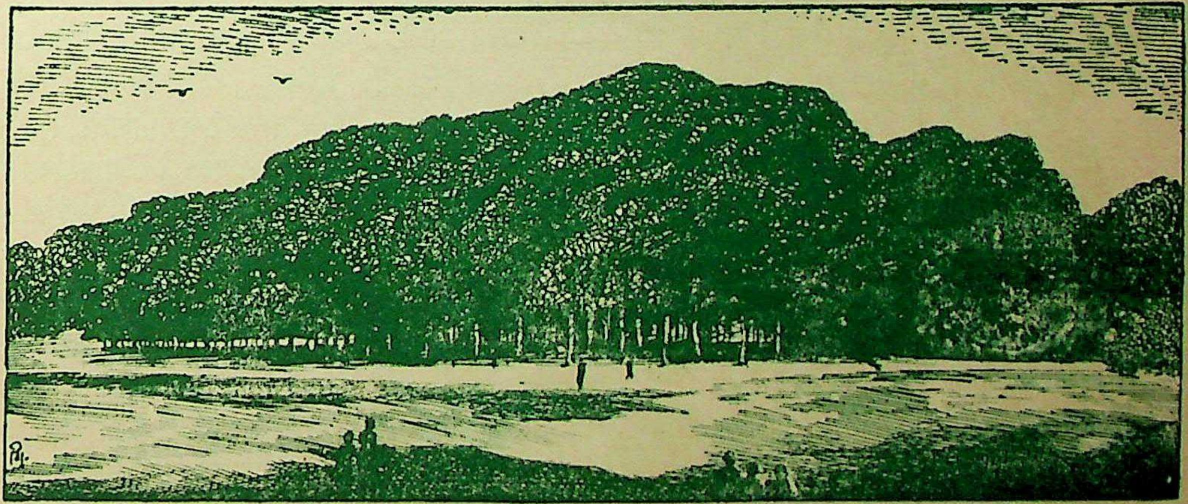

कलकत्ते के राष्ट्रीय वनस्पति-उद्यान में स्थित महान् वटवृक्ष की कुछ वर्ष पूर्व की भव्य झाँकी! इस विशाल फैलाववाले वृक्ष को प्रथम दृष्टि में भला कौन एक ही पेड़ का विस्तार मानने को तैयार होगा? कहते हैं, इस बरगद के साये में लगभग सात-आठ हजार आदमी मजे से बसेरा ले सकते हैं! उसकी बरोहियाँ तीन हजार से भी अधिक हैं!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शरण ले रक्खी थी ! कहा जाता है कि जब यह बरगद अपनी सम्पूर्ण अवस्था में फल-फूल रहा होगा, उस समय उसका फैलाव इतना विस्तृत रहा होगा कि बीस-पचीस हजार की आबादी के एक सामान्य नगर की समस्त जनसंख्या उसके नीचे अट सकती थी ! भला, ऐसे विलक्षण फैलाववाले वृक्ष को एक पेड़ कहकर पुकारा जाय या वन कहकर ? वटवृक्ष के लिए इतना विस्तार प्राप्त करना केवल इसी कारण से संभव हो पाता है कि उसकी बरोहियाँ निरंतर फूट-फूटकर नए-नए उपतनों की सृष्टि करती जाती हैं, जो मूल तने के नष्ट हो जाने पर भी वृक्ष को मिटने नहीं देतीं !

किंवदन्ती है कि जब सन्त कबीर नर्मदा-तट पर पहुँचे थे, तो एक दिन उन्होंने मौज में आकर अपने दातून की टहनी को उस स्थान में गाड़ दिया था । उसी टहनी ने जड़ पकड़कर अन्ततोगत्वा एक पेड़ का रूप ग्रहण कर लिया, जो समय पाकर बढ़ते-बढ़ते एक महान् वटवृक्ष में परिणत हो गया । इसीलिए उस वृक्ष का नाम 'कबीर-वट' पड़ गया था और लोग उसकी विधिवत् पूजा तक करने लगे थे !

असाधारण फैलाववाले अन्य प्रसिद्ध बरगद

हमारे देश के प्रख्यात बरगदों में एक उल्लेखनीय वृक्षराज किसी समय आन्ध्र प्रदेश में विद्यमान था, जो अब लुप्त हो चुका है । दूसरे दो महान् वटवृक्ष हैं––एक तो कलकत्ते के राष्ट्रीय वनस्पति-उद्यान का संसारप्रसिद्ध वटवृक्ष, दूसरा मद्रास के निकट अद्यार का विशाल बरगद । इन तीनों वृक्षों में आन्ध्र प्रदेशवाला वटवृक्ष निस्संदेह सबसे बड़ा था । वह करीब एक हजार मीटर व्यास की परिधि में फैला था । कोई तीन हजार से अधिक उपतनों और बरोहियों से सुसज्जित इस वृक्ष के नीचे पन्द्रह-बीस हजार सैनिकों की पूरी फौज अपना पड़ाव डाल सकती थी ! कलकत्ते का बरगद भी (अपने प्रधान तने के नष्ट हो जाने के बावजूद) अति विशाल क्षेत्र में फैला हुआ है । वह सैकड़ों वृक्षों के वन जैसा जान पड़ता है (दे० पृ० ३१ का चित्र) । अभी भी उसमें सैकड़ों उपतने तथा हजारों बरोहियाँ विद्यमान हैं, जिनकी बदौलत वह निरन्तर फैलता ही चला जा रहा है । अनुमान किया जाता है कि उसके साये में सात-आठ हजार आदमी मजे से विश्राम कर सकते हैं ! उधर मद्रास के निकट अद्यार में थियासाफिकल सोसाइटी के प्रांगण में स्थित बरगद भी छोटा नहीं । वह चार हजार वर्गमीटर भूमि पर विस्तृत है ।

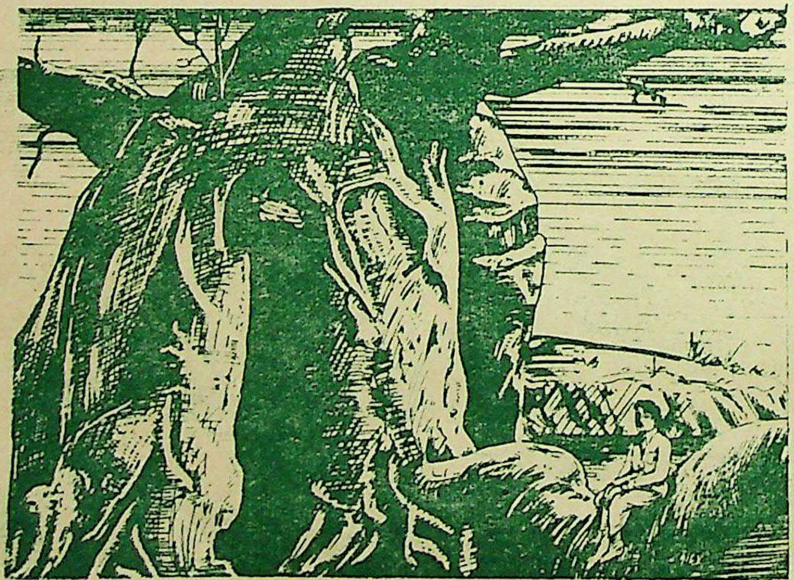

प्रयाग के समीप झूसी नामक स्थान के इस गंगातटवर्ती प्राचीन पेड़ के साढ़े सोलह मीटर परिधि के विचित्र तने और उसकी मोटी जड़ों का विवरण पृ० ३२ पर पढ़िए !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकृति की वनस्पतिशाला में एक से एक अद्भुत और अनोखे पेड़-पौधे भरे पड़े हैं। उनकी न केवल आकृतियाँ और सज-धज ही एक दूसरे से निराली हैं, जो देखनेवालों को चकित-थकित कर देती हैं, बल्कि उन सबके आचरण और रहन-सहन के ढंग भी इतने विचित्र ह कि कभी-कभी तो यही समझ में नहीं आता कि कलाकार कुदरत ने आखिर उन्हें इतनी चित्र-विचित्र शक्ल-सूरत प्रदान करने तथा ऐसे अनूठे रीति-व्यवहार का पाठ पढ़ाने की मेहनत क्यों की है ! इनकी इन अद्भुत अनोखी विशेषताओं का एकमात्र समाधान शायद विकासवाद के चिरशाश्वत नियमों में ही खोजा जा सकता है, जिनके अधीन सृष्टि के समस्त जड़-चेतन पदार्थों ने परिस्थितियों के अनुरूप अपने आपको गढ़ा है। आओ, इस प्रकरण में कुदरत के बगीचे के ऐसे ही असाधारण एवं अचम्भे में डालनेवाले कुछ चमत्कारों का परिचय प्राप्त करें !

इसे वृक्ष कहें या बटोहियों की प्यास बुझानेवाला पौसरा ?

अगले पृष्ठ के ऊपरी चित्र में दिग्दर्शित केले के वृक्ष जैसे पेड़ पर जरा ध्यान दो। वैसे तो सरसरी नजर दौड़ाने पर तुम्हें उसमें कोई असाधारण अनहोनी बात नहीं दिखायी देने की ! परन्तु जरा गौर से देखो——वह हँडिया या घड़े जैसा बरतन भला उन पत्तों के नीचे क्यों टँगा हुआ है और नीचे खड़ा वह आदमी वहाँ किस बात के इन्तजार में है ? लो, हम तुम्हें बता ही दें कि यह व्यक्ति इस पेड़ पर बरतन लगाकर अपनी प्यास बुझाने को उसमें से पानी निकाल रहा है ! इस लिहाज से यह वृक्ष निस्सन्देह मनुष्य के लिए एक अत्यन्त उपयोगी साधन है। कारण, वह अपने पत्तों के निचले भाग में सचमुच ही पानी का एक अच्छा खासा भंडार जरूरत-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

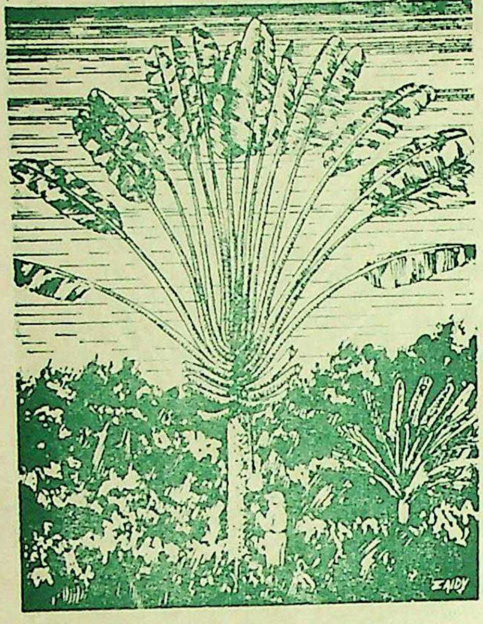

मैडेगास्कर द्वीप का अनोखा वृक्ष, जो प्यासे बटोहियों के लिए आड़े वक्त में काम आकर उनकी प्यास बुझाता है ! इसी कारण से यह वृक्ष 'मुसाफिरों का ताड़' कहलाता है । इसके पत्ते नाचते हुए मोर की-सी झाँकी प्रस्तुत करते हैं !

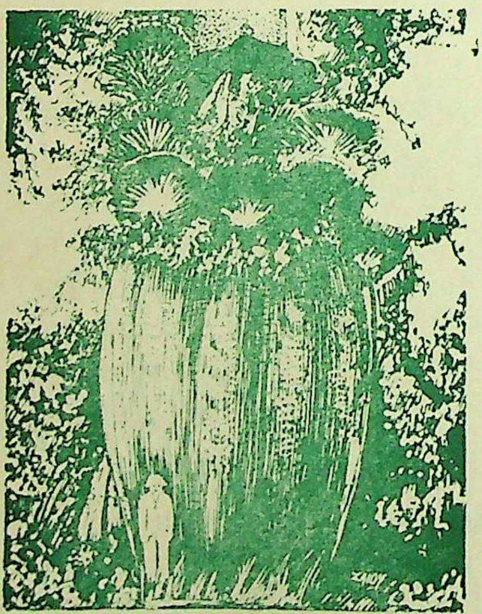

क्वीन्सलैण्ड (ऑस्ट्रेलिया) के बीहड़ वनों में पाया जानेवाला 'बोतल-वृक्ष' नाँद जैसे अपने फूले हुए तने में एक मधुर पेय द्रव संगृहीत किए रहता है, जिससे लोग न केवल अपनी प्यास बल्कि भूख भी मिटा सकते हैं !

मन्दों के लिए जमा किये रहता है ! बस, ठीक जगह पर जरा-सा छेद किया नहीं और वहाँ बरतन लटका दिया कि थोड़ी देर में ही सारा पात्र इस तरह स्वच्छ जल से भर जाता है, जैसे कि किसी नल की टोटी से ही वह भर लिया गया हो ! यह सही है कि इस जल का स्वाद उतना अच्छा नहीं होता, फिर भी वक्त जरूरत पर उससे बखूबी लोगों का काम चल जाता है ! यह जल हानिकर नहीं होता ।

यह विचित्र वृक्ष अफ्रीका के मैडेगास्कर द्वीप में पाया जाता है और पिछले दिनों वहाँ से ले जाकर वह मॉरीशश और जावा द्वीप में भी लगाया जा चुका है । इस पेड़ को 'मुसाफिरों का ताड़' कहते हैं । इसके पत्ते नाचते हुए मोर के फैलाये हुए पंखों की तरह बड़े तरतीबवार ऊपर उठे रहते हैं । और उनका रुख केवल सामने की ओर ही रहता है, जिससे जान पड़ता है कि मानो कोई बड़ा-सा पंखा सामने खुला हुआ हो ! इस साधारण-से वृक्ष से कितने ही राही-बटोही पानी लेकर अपनी प्यास बुझाया करते हैं !

प्यास के साथ-साथ भूख की पूर्ति करने का भी सामर्थ्य रखनेवाला वृक्ष !

कुदरत की करामातों की भला कौन थाह पा सकता है ? लो, मैडेगास्कर द्वीप के पूर्वोल्लिखित अनोखे वृक्ष को जहाँ लोगों की प्यास बुझाने का ही सामर्थ्य प्रकृति ने प्रदान किया, वहाँ अन्यत्र उसने ऐसे अद्भुत वृक्ष उपजाने का भी चमत्कार कर दिखाया, जो आड़े समय में किसी मुसीबत के मारे की न केवल तृषा मिटाने बल्कि आहार-पूर्ति करके किसी दर्जे तक उसको भूखों मरने से बचाने में भी सहायक होते हैं ! यह इसलिए सम्भव हो पाता है कि इस प्रकार के वृक्ष अपनी नाँद की-सी शक्ल के वृहत् तने में पानी के साथ-साथ मनुष्य के खाने योग्य पदार्थ का भी संचय किये रहते हैं। ये वृक्ष, जिन्हें उनके विचित्र तने के कारण प्रायः 'बोतल-वृक्ष' के नाम से पुकारा जाता है, देखने में डरावने-से होते हैं । इसी से इनके बारे में वन्य जातियों में तरह-तरह की किंवदंतियाँ फैली हुई हैं। ये वृक्ष ऑस्ट्रेलिया में मिलते हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नरबलि लेनेवाला राक्षसी वृक्ष !

मैडेगास्कर द्वीप के मलागासी नामक जंगली पिगमियों में एक भयोत्पादक अंध धारणा प्रचलित है कि उनके देश के अन्दरूनी घने जंगलों में भीमकाय अनन्नास की शक्ल का एक भयंकर वृक्ष होता है ! उस वृक्ष के सिरे पर तीखे शूलवाली पत्तियों और आक्टोपस की सर्पिल भुजाओं जैसी मोटी बरोहियाँ छिपी रहती हैं । इन बर्बरों का अंध विश्वास है कि उक्त वृक्ष नरबलि का लोलुप होता है । अतः कहा जाता है कि ये लोग उसकी पूजा करते रहे हैं और उसे तुष्ट करने के लिए जब तब एक नवयुवती की भेंट उसे चढ़ाते रहे हैं ! कहते हैं, यह दैत्य वृक्ष बलि को अपनी सर्पिल भुजाओं में जकड़कर निगल जाता और एकाध हफ्ते के बाद उस अभागे शिकार की कुछ हड्डियाँ मात्र शेष रह जाती हैं ! १८७५ ई० में लिशे नामक एक जर्मन यात्री ने स्वयं अपनी आँखों से ऐसी बलि का दृश्य देखने का उल्लेख किया है । पता नहीं, यह बात कहाँ तक सच है !

मोमबत्तियों का पेड़ !

क्या तुम्हें हमारी बात पर यकीन होगा, यदि हम यह बतायें कि प्रकृति के बगीचे में एक पेड़ ऐसा भी है, जिस पर मोमबत्तियाँ उपजती हैं ? परन्तु सच यही है कि एक वृक्ष दरअसल ऐसा ही है कि उस पर जो फलियाँ उगती हैं, वे हूबहू मोमबत्तियों जैसी मालूम देती हैं ! और तो और, उन पर वास्तव में ही पीले मोम जैसे एक पदार्थ की पर्त भी चढ़ी रहती है ! यह वृक्ष दक्षिणी अमेरिका के जंगलों में कसरत से पाया जाता है। भला, कुदरत का इसके फलों को इस प्रकार की शक्ल देने में क्या प्रयोजन रहा है, कोई भी नहीं बता सकता ! इस पृष्ठ के ऊपरी चित्र पर तनिक गौर करो । कितनी सारी मोमबत्तियाँ-सी वृक्ष पर लटक रही हैं ! सबसे अनोखी बात तो यह है कि ये छीमियाँ डालियों तथा तने पर से ही फूटती पायी जाती हैं, जहाँ उनकी कतारें-सी बन जाती हैं ! इस अद्भुत झाँकी के कारण ही इस वृक्ष को लोग 'मोमबत्तियों के पेड़' के नाम से पुकारते हैं ।

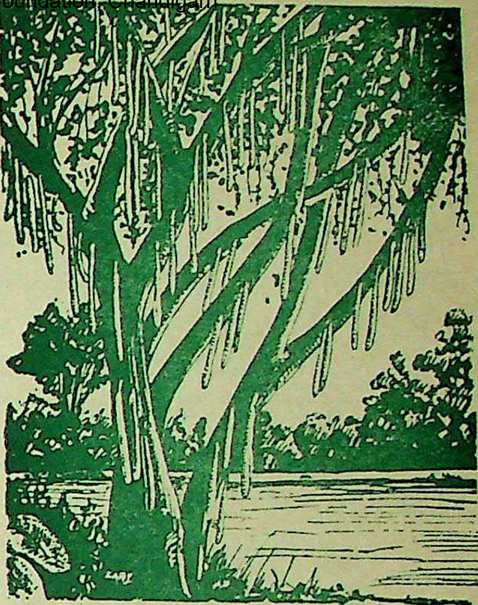

दक्षिणी अमेरिका में कसरत से पाया जानेवाला एक विचित्र पेड़, जो अपनी मोमबत्ती जैसी छीमियों के कारण 'मोमबत्ती का वृक्ष' कहलाता है ! अचंभा तो यह है कि इन छीमियों पर पीले मोम जैसे एक द्रव्य की पर्त भी चढ़ी रहती है ।

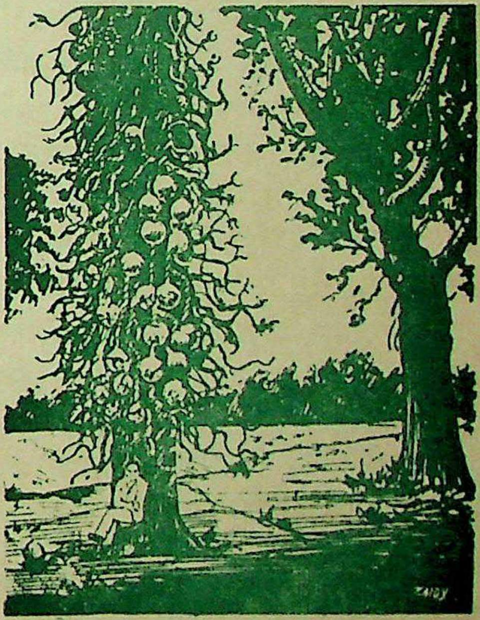

इस विचित्र वृक्ष का नाम उस पर लगे हुए वजनदार गोलों जैसे फलों के कारण 'तोप के गोले उपजानेवाला वृक्ष' पड़ गया है ! यह पेड़ अफ्रीका का वासी है । इन फलों का रंग भी इस्पात का-सा होता है ! यह योजना फलों की सुरक्षा के हेतु ही की गई है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तोप के गोले उपजानेवाला वृक्ष !

जिस प्रकार मोमबत्तियों की शक्ल की फलियाँ उपजाने के कारण दक्षिणी अमेरिका के पूर्वोल्लिखित वृक्ष का नाम 'मोमबत्ती का पेड़' पड़ गया है, उसी तरह अफ्रीका में पाये जानेवाले एक विचित्र पेड़ को लोगों ने 'तोप के गोले उपजानेवाले वृक्ष' की संज्ञा दे रक्खी है। इस वृक्ष पर जो फल लगा करते हैं, वे अपने गेंदनुमा गोल आकार, इस्पात जैसे वर्ण तथा भारी वजन के कारण देखनेवालों के मन में सचमुच ही मध्य युग की तोपों में काम में लाये जानेवाले गोलों का भ्रम पैदा कर देते हैं ! परन्तु यह निरी बकवास ही है; क्योंकि किसी वृक्ष के फलों का तोप-बन्दूक से दूर का भी नाता नहीं हो सकता ! वास्तविक तथ्य यह है कि प्रकृति ने विशेष परिस्थितियों का सामना करते हुए अपने पेड़-पौधों का वंश कायम रखने के हेतु बीजों की सुरक्षा का हर तरह का प्रबन्ध किया है, ताकि पशु-पक्षी, कीटाणु, फफूँद आदि शत्रु उन्हें हानि पहुँचाकर नष्ट न कर सकें। प्रस्तुत वृक्ष के अनोखे फल भी प्रकृति की उसी बीज-सुरक्षा-योजना की एक मिसाल हैं।

पचास मीटर ऊँची घास – 'तृण-वर्ग' के सरदार बाँस की अद्भुत कहानी

'तृण-वर्ग' के वनस्पतियों पर मानव-जाति सदियों से आश्रित रही है। कारण, क्या गेहूँ, जौ, मकई, ज्वार, बाजरा, धान आदि अनाज उपजानेवाले पौधे और क्या गाय-बैल, घोड़ा, भैंस, सुअर जैसे उपयोगी पालतू पशुओं का गुजारा चलानेवाली तरह-तरह की घासें, सबके सब इसी एक महापरिवार में सम्मिलित हैं। और तो और, हमें शकर और गुड़ की मीठी भेंट देनेवाला 'गन्ना' तथा हमारी झोपड़ियों के निर्माण में योग देनेवाला 'बाँस' भी इसी विशाल कुटुम्ब के गौरव हैं।

अतः यदि ऊँचाई में बड़े-बड़े वृक्षों से होड़ बदनेवाले बाँस का परिचय हम एक प्रकार की घास कहकर दें, तो इसमें चौंकने जैसी कोई बात नहीं है। सच तो यह है कि यद्यपि यह वनस्पति न तो ढोर-पशुओं के लिए चारा प्रदान करता है, न मनुष्य के लिए खाद्य अनाज की फसलें, फिर भी निर्विवाद रूप से वह 'तृण-वर्ग' का सरदार कहलाने का अधिकारी है। कारण, क्या कद एवं क्या दृढ़ता और मजबूती की दृष्टि से उसे अन्य सभी प्रकार की घासों से अधिक उन्नत बनाने में प्रकृति ने अपनी सारी प्रतिभा उँडेल दी है।

हमारे देश के लिए बाँस कोई अचम्भे की वस्तु नहीं है। वह हमारे यहाँ जंगलों में कसरत से उगता है तथा आम तौर पर तरह-तरह के कामों के लिए उपयोग में लाया जाता है। परन्तु अगर किसी से यह कहा जाय कि बाँस इतना लम्बा भी होता है कि वह बम्बई-कलकत्ते की किसी चौदह-पन्द्रह मंजिली इमारत को ऊँचाई में मात कर सकता है, तो निश्चय ही एकाएक इस बात को मानने को कोई तैयार न होगा। लेकिन सच यही है कि इस तरह के दैत्याकार बाँस सचमुच लंका (सीलोन) के पेराडेनिया नामक स्थान के प्रसिद्ध वनस्पति-उद्यान में खड़े हैं। पृ० ३७ की तस्वीर पर गौर करो। उसमें इन बाँसों के एक झुंड के पास एक आदमी भी खड़ा है। अब समझ लो कि ये बाँस कितने ऊँचे हैं——यद्यपि चित्र में उनके सिरे तक की पूरी लम्बाई की झाँकी आ ही नहीं पायी है। कहा जाता है कि इनमें से कई तो पचास मीटर से भी अधिक ऊँचे हैं। इन बाँसों का एक-एक पोर (अर्थात् दो गाँठों के बीच का भाग) हाथ भर से भी ज्यादा लम्बा होता है और मोटाई किसी मध्यम दर्जे की तोप की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कोई माने या न माने पर 'बाँस' एक तरह की घास ही है; कारण, वह विशाल 'तृण-परिवार' का सदस्य है। प्रस्तुत चित्र में, लंका के पेराडेनिया नामक स्थान के उद्यान में उगे हुए करीब पचास मीटर ऊंचे दुनिया के सबसे लंबे बाँसों की झाँकी दिग्दर्शित है। यहाँ इनके गगनचुंबी कलेवर का निचला अंश ही प्रदर्शित है--ऊपरी सिरा चित्र में नहीं आ पाया है!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ऑस्ट्रेलिया में पाए जानेवाले इस अनोखे पेड़ को क्या देखते ही तुम ताड़-परिवार का एक वृक्ष न मान बैठोगे ? परन्तु हम तुम्हें बता दें कि खजूर, नारियल आदि ताड़-कुटुम्बियों जैसा देख पड़ने पर भी इस वृक्ष का उनसे कोई नाता नहीं है (परिचय पृ० ४२ पर)।

नली के बराबर ! मलाया के जंगलों में, जहाँ का यह मूल निवासी है, कहीं-कहीं इससे भी अधिक ऊँचे और मोटे बाँस पाये जाते हैं। इनके कुछ गगन-चुम्बी झुरमुट अफ्रीका में भी घने जंगलों में विद्यमान हैं।

जापान में लोग बाँस से ही सम्पूर्ण मकान बना लेते हैं, जो वहाँ के नितप्रति के भूकम्पों के धक्कों के खतरे से बचे रहने में बड़े सहायक होते हैं। अपने बीच की पोली जगह के कारण मोटे बाँसों के ऐसे चोंगे भी बनाये जाते हैं, जिन्हें लोग तेल आदि भरने के लिए पात्रों की तरह काम में लाते हैं। कहीं-कहीं तो उनमें चावल भी उबालकर पका लिया जाता है। इस अत्यधिक उपयोगी वनस्पति द्वारा निर्मित टोकरियाँ, चटाइयाँ, टट्टर, छप्पर, कुर्सियाँ, लाठियाँ, पंखे, बाँसुरी, खिलौने, आदि तो तुमने देखे ही होंगे, किन्तु कई स्थानों में इससे नदियों पर पुल भी बनाए गए हैं तथा इसके द्वारा कागज भी बनाया जाता है ! भारतवर्ष में बाँसों की पचीस से अधिक जातियाँ एवं लगभग सौ उपजातियाँ मिलती हैं। उन्हें नलबाँस, देवबाँस, रिंगल, नरी, गोबिया, लतंग, खाँग, करैल, आदि-आदि नामों से पुकारा जाता है। हम तुम्हें बता चुके हैं कि तृण-परिवार के सभी वनस्पति फूलवाले पौधों के महासमूह के सदस्य हैं। अत: बाँसों में भी फूल लगते हैं, जो देखने में जई के बालों जैसे होते हैं। इनमें चावल जैसे छोटे-छोटे बीजों के दाने रहते हैं। बाँसों का अधिक फूलना हमारे यहाँ अच्छा नहीं समझा जाता, क्योंकि वह अकाल की पूर्वसूचना माना गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बाँसों की मुलायम कोंपलों का अचार भी तैयार किया जाता है, जो सुस्वादु होता है। इसी तरह इससे वंशलोचन नामक एक आयुर्वेदिक औषधि भी प्राप्त होती है! तो तुमने देखा कि घासों का यह सरदार हमारे लिए कितना उपयोगी है और कैसे-कैसे उपहार हमें उससे प्राप्त होते हैं?

कल्पवृक्ष की भाँति आवश्यकता-पूर्ति करनेवाला महिमामय ताड़-परिवार

तृण-परिवार की तरह 'ताड़-परिवार' भी आवृतबीज पौधों के एकबीजपत्री वर्ग का ही एक प्रमुख अंग है। इस महत्वपूर्ण कुनबे में डेढ़ हजार से भी अधिक बिरादरियों का समावेश है, जिनमें ताड़, नारियल, खजूर, साबूदाना तथा सुपारी के वृक्ष जैसे मूल्यवान् पेड़ भी सम्मिलित हैं। इस वर्ग के पौधे गरम देशों में--विशेषतया समुद्रतटवर्ती क्षेत्रों में--ही उपजते हैं। हमारे अपने देश के कोंकण, मलाबार, तमिलनाड, बंगाल, आदि तटवर्ती प्रान्त; लंका, बरमा, जावा, सुमात्रा, फिलिपीन-द्वीप आदि दक्षिण-पूर्वी देश; भूमध्यसागर के किनारे के अफ्रीकी देश; फारस की खाड़ी के आसपास के भूभाग और प्रशान्त, हिन्द एवं अटलांटिक महासागर के अनेक विषुवत् क्षेत्रीय द्वीप-पुंज इनके विशेष आश्रय-स्थल हैं। शोभा के लिए ये प्रायः शीत प्रदेशों के बगीचों और पार्कों में भी सफलतापूर्वक उगाये जाते हैं।

कभी-कभी प्रकृति वृक्षों के साथ मानो मजाक कर बैठती है! इन दो ताड़-वृक्षों की विचित्र आकृतियों को देखो! क्या तुमने कभी पाँच तनेवाले ताड़-वृक्ष का भी नाम कहीं सुना है? लो, यह एक प्रत्यक्ष उदाहरण देखो! इसी तरह चित्र में प्रदर्शित दूसरे नमूने की विचित्र शक्ल पर भी गौर करो!

ताड़-वर्ग के पौधों की एक उल्लेखनीय विशेषता इनकी पत्रावली की विशेष प्रकार की रचना तथा तरतीबवार सजावट होती है, जो तने पर मानो सेहरे या मुकुट की भाँति अलंकृत रहती है। इस जाति के वृक्षों में शाखायें नहीं होतीं। प्रायः चपटे और मजबूत रेशेदार लम्बे डंठलोंवाली उनकी वृहदाकार पत्तियाँ ही (जो पिच्छाकार पंख जैसी, किनारे से कंघी की तरह कटी हुई या धज्जियों की शक्ल में फटी हुई सी होती हैं) इस प्रकार तने से चारों ओर फैलकर तनी या लटकी रहा करती हैं कि उससे उनके सिरे पर एक प्रकार की छतरी-सी बन जाती है। ज्यों-ज्यों पौधा बढ़ता जाता है, पुरानी पत्तियाँ गिरती जाती हैं और ऊपर की ओर निकलनेवाले पत्तियों के नवीन झुरमुट उनकी जगह लेते चले जाते हैं। इस प्रकार तना नीचे से खाली होकर एक खंभे के रूप में सीधा खड़ा बढ़ता चला जाता है। कुछ जाति के ताड़ों में ये खंभे देखने में अत्यन्त चिकने और सुहावने होते हैं। परन्तु खजूर जैसे वृक्षों में गिरे हुए पत्तों के डंठलों के बचे हुए मूल के कारण तना काफी खुरदुरा हो जाता है। कभी-कभी कुदरत मानो मजाक-सा कर बैठती है और इन वृक्षों के तने बड़ी अनहोनी शक्लें धारण कर लेते

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
हैं, जैसा कि पृष्ठ ३६ के चित्र में दिग्दर्शित दो विचित्र ताड़-वृक्षों की आकृतियों से स्पष्ट है। इनमें से पाँच शाखाओंवाला ताड़ तो सचमुच ही प्रकृति के अजायबघर की एक अद्भुत करामात है!

ताड़-परिवार के वृक्ष लम्बाई में तो बहुत ऊँचे होते हैं (जैसे कि नारियल के पेड़, जो कभी-कभी पचास मीटर तक आसमान में ऊपर उठते पाये जाते हैं), परन्तु उनके तनों की मोटाई कुछ बालिश्त से अधिक नहीं होती। हाँ, पत्ते कभी-कभी असाधारणतया लम्बे पाये जाते हैं। इस परिवार के वृक्षों की उपयोगिता का बखान कोई क्या करे! कहते हैं, तमिल भाषा में एक प्राचीन ग्रंथ है, जिसमें ताड़-जाति के वृक्षों की विभिन्न बिरादरियों के लगभग आठ सौ उपयोगों का वर्णन किया गया है। उसमें पंखे, रस्सी, चटाई, छप्पर, नाव, आदि के निर्माण से लेकर, तरह-तरह के खाद्यपदार्थ, औषधियाँ, तेल, गुड़, मदिरा आदि सभी कुछ पदार्थ इनसे प्राप्त होने का उल्लेख है! कल्पवृक्ष के तुल्य ऐसे पेड़ों को पाकर हम कितने निहाल हैं, इसका प्रमाण तो इसी बात से मिल जाता है कि केरल और लंका जैसे प्रदेशों की अर्थव्यवस्था का अधिकांश दारोमदार इन्हीं वृक्षों की भाँति-भाँति की पैदावारों पर निर्भर है।

ताड़-कुटुम्ब के गौरव--नारियल और खजूर के वृक्ष

इसमें सन्देह नहीं कि ताड़-कुटुम्ब की पन्द्रह सौ उपजातियों में उपयोगिता की दृष्टि से नारियल और खजूर के पेड़ों का महत्व सर्वाधिक है, जिनमें से प्रथम से हमें गरी के गोले जैसा पौष्टिक तथा दूसरे से छुहारे एवं खजूर जैसे मीठे मेवे प्राप्त होते हैं। नारियल का फल अपने ढंग के एक विचित्र कड़े आवरण से ढका रहता है, जो कच्ची दशा में तो चाकू से छीला भी जा सकता है, परन्तु पककर ऊपर से सूख जाने पर कठोर काष्ठ में परिणत हो जाता है। उस पर मजबूत रेशों की जटाओं का एक रक्षाकवच-सा चढ़ा रहता है। शक्ल में वह एक लम्बोतरे तिपहल आकार का होता है, जिसकी लम्बाई बालिश्त भर और चौड़ाई पन्द्रह-सोलह सेंटीमीटर तक की होती है। पके हुए नारियल की ऊपरी जटा अलग करके, जब उसका कठीला आवरण तोड़ दिया जाता है, तो भीतर से सफेद गरी का एक स्वादिष्ट गोला-सा निकलता है, जिसमें कच्ची हालत में पानी जैसा पेय द्रव्य भरा रहता है। यह पानी बड़े चाव से पिया जाता है तथा गोला भी मेवे की तरह खाने के काम में लाया जाता है। इस फल की सबसे अधिक महिमा तो इस लिहाज से है कि उसकी गरी से काफी मात्रा में मशहूर 'नारियल का तेल' निकाला जाता है तथा जटाओं से बहुतायत से काम में लायी जानेवाली रस्सी, दरियाँ, पाँवपोश आदि चीजें तैयार की जाती हैं। तुम्हें यह जानकर अचम्भा होगा कि समुद्रतटवर्ती नारियलों के फल वृक्षों से पानी में गिरकर कभी-कभी सागरजल पर तैरते हुए सैकड़ों-हजारों किलोमीटर दूर तक के भूखंडों तक जा पहुँचते हैं और वहाँ तटवर्ती जमीन में बीजारोपण करके एक नवीन नारियल के पौधे को जन्म दे देते हैं।

नारियल के पेड़ की तरह खजूर के वृक्ष की भी कहानी कम रोमांचक नहीं है। कहा जाता है कि मनुष्य द्वारा बागवानी करके फलों का उत्पादन करने का सर्वप्रथम प्रयास जिन पेड़-पौधों को लेकर आरम्भ हुआ था, उनमें खजूर भी अवश्य रहा होगा, क्योंकि लगभग चार हजार वर्ष पूर्व की बेबिलोनियन-असीरियन सभ्यता के मिट्टी के ऐसे कुछ फलक खुदाई में निकले हैं, जिन पर इस वृक्ष का खाद्य-साधन के रूप में सविस्तृत चित्रांकन है। यहाँ हम तुम्हें

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

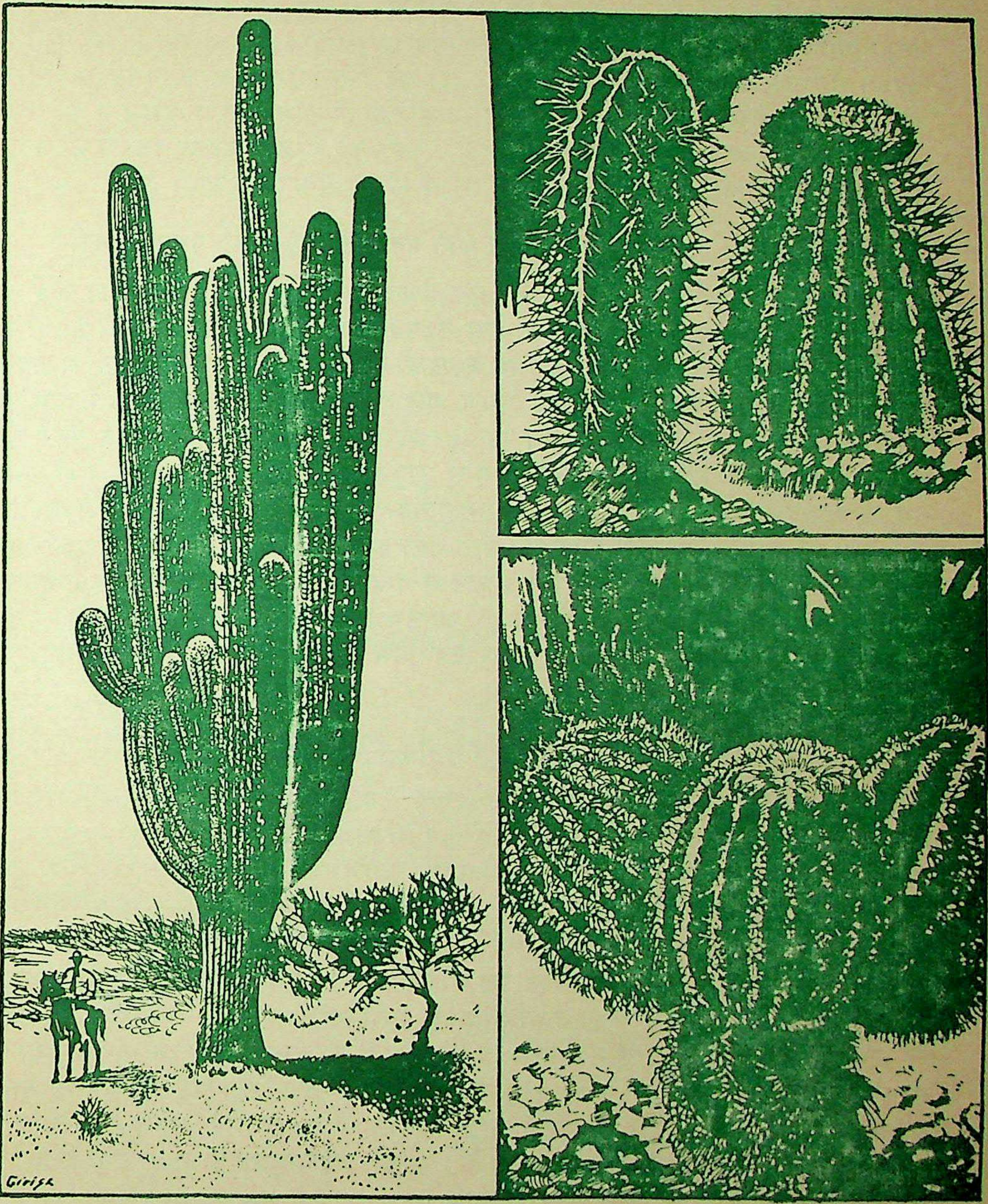

'कैक्टस-परिवार' के पौधे विशेष रूप से मरुभूमि के निवासी हैं, जहाँ वर्षा नाममात्र को भी नहीं हुआ करती और जमीन सूखी बनी रहती है। नमी के अभाव के वातावरण में अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए ही यहाँ उपजनेवाले गिने-चुने वनस्पति इस प्रकार की अद्भुत वेशभूषा धारण करने को मजबूर हो गए हैं! इनमें से कई (जैसा कि बाईं ओर के चित्र में दिग्दर्शित है) विशाल वृक्षों की-सी दैत्याकार ऊँचाई के भी होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक याद रखने योग्य बात यह बता दें कि इस वृक्ष के मधु जैसे मीठे फल (जो ताजे होने पर खजूर और सूखने पर छुहारा कहलाते हैं) केवल मादा वृक्षों पर ही लग पाते हैं, नर वृक्षों पर नहीं। सर्वश्रेष्ठ खजूर 'नूर' के नाम से मशहूर है। यह किस्म इराक, अरब, यमन, अल्जीरिया आदि देशों में ही उपलब्ध है। पिछले दिनों अमेरिका के केलिफोर्निया राज्य में भी उत्तम जाति के खजूर उगाने के सफल प्रयास हुए हैं। ताड़ की तरह खजूर के पत्तों से भी चटाई, डलिया आदि बनायी जाती हैं तथा उसके रस से मदिरा तैयार की जाती है।

आॅस्ट्रेलिया का एक अनोखा पेड़, जो जान पड़ता है ताड़ जैसा, परन्तु है नहीं !

पृ० ३८ के चित्र पर निगाह डालो। क्या देखते ही तुम इसे ताड़-परिवार का कोई वृक्ष न मान बैठोगे ? परन्तु सच्चाई यह है कि इस छद्मवेशी का ताड़-परिवार से कोई भी वास्ता नहीं है। यह तो दरअसल आवृतबीज समूह के एकबीजपत्री वर्ग के 'लिली-कुटुम्ब' का सदस्य है, जिसमें हमारे नित काम में आनेवाले प्याज और लहसुन भी सम्मिलित हैं ! ये बहुरूपिए वृक्ष आॅस्ट्रेलिया के बीहड़ मैदानों में पाये जाते हैं और अपने सिरे पर के घास के सेहरे जैसे मुकुट के कारण इन्हें वहाँ 'घास-वृक्ष' के नाम से पुकारा जाता है। इनके सिरे पर से कभी-कभी तीन-साढ़े तीन मीटर लम्बा एक भालेनुमा पुष्पदंड निकलकर सीधा खड़ा देख पड़ता है। प्रायः वनों की आग से झुलसकर इनके तने घोर काले पड़ जाते हैं। ऐसी दशा में सुबह-शाम की झिलमिल रोशनी में बीहड़ जंगल के सन्नाटे में इन्हें खड़े देखकर लोगों के मन में दहशत पैदा होने लगती है ! जान पड़ता है, मानो बल्लम ताने जातीय वीरवेश में कोई लड़ाकू आदिवासी खड़ा हो ! ये वृक्ष इतने धीरे-धीरे बढ़नेवाले पेड़ हैं कि एक हजार वर्ष में वे केवल तीन मीटर ऊँचे ही हो पाते हैं !

'कैक्टस-परिवार' के विचित्र वनस्पति--नागफनी, थूहड़ आदि

प्रायः तुमने घरों के सामने गमलों में अथवा जमीन में मटमैले रंग के, तरह-तरह की भौंडी शक्लों के, काँटेदार या बिना काँटों के कुछ अजनबी पौधों को आजकल बड़े चाव से लगाये जाते हुए देखा होगा ! ऐसे पौधों से अपने बगीचों को सजाने का शौक पिछले कुछ दिनों से लोगों पर बेतरह सवार है। क्यों ? केवल इसीलिए कि वे एक असाधारण परिवार के दुर्लभ वनस्पति हैं। ये बेचारे सबके सब हमारे यहाँ की इस बारहों महीने सरसब्ज रहने-वाली हरियाली से कोसों दूर के उन निपट सूखे और गरम रेगिस्तानी इलाकों के ही मूल निवासी हैं, जहाँ वर्षा नाममात्र को ही कभी कदाचित् होती है और वातावरण में नमी का प्रायः सदैव ही अभाव बना रहता है। ऐसी विकट परिस्थिति में जीवन-यापन करने की समस्या से सामना पड़ने के कारण ही इन पौधों ने मजबूर होकर, सौन्दर्य और सुकुमारता के सभी मान्य आदर्शों को ताक पर रखकर, यह भौंडा परन्तु कारगर बाना पहना है; साथ ही, स्थिति के अनुकूल अपने रहन-सहन का ढर्रा भी बदला है। आओ, इन असाधारण वनस्पतियों के बारे में कुछ विशेष जानकारी तुम्हें यहाँ करा दी जाय !

हम पिछले एक प्रकरण में, विकासक्रमानुसार वनस्पति-संसार के 'थैलोफायटा', 'ब्रायोफायटा' आदि चार महाविभागों एवं उनके अन्तर्गत सम्मिलित किये जानेवाले पेड़-पौधों के विशिष्ट परिवारों का परिचय तुम्हें दे चुके हैं। परन्तु वनस्पतियों के वर्गीकरण की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वही एकमात्र विधि नहीं है। उन्हें अन्य एक प्रकार से भी वर्गीकृत किया जाता है, जिसका आधार वातावरण की विविध परिस्थितियों के अनुरूप उनके रूप-आकार तथा आचरण की सामान्य विशेषताओं का निर्माण है। इस पद्धति के अनुसार सभी पेड़-पौधों को तीन महा-समुदायों में बाँट दिया गया है--१. साधारण वातावरण में उपजनेवाले (मीजोफाइट्स); २. केवल जल में उगनेवाले (हाइड्रोफाइट्स) तथा ३. शुष्क मरुस्थलीय वातावरण में पनपनेवाले (जीरोफाइट्स)। कहना न होगा कि 'कैक्टस-परिवार' उपयुक्त वनस्पति-समुदायों के तृतीय वर्ग का प्रतिनिधि सदस्य है--इस कुटुम्ब के सभी पौधे 'मीजोफाइट्स' ही हैं। इनकी प्रमुख आवश्यकता यह होती है कि अपने आसपास के सूखे और गरम वातावरण में भी अपने आप को किसी तरह से हरे-भरे बनाये रक्खें तथा अपने कलेवर की जल की मात्रा को कम न होने दें! इस आवश्यकता की पूर्ति हो पाना तभी सम्भव है, जब कि एक ओर तो ये वनस्पति अपनी संचित जलराशि को भाप बनकर उड़ जाने से अधिकाधिक रोकें; दूसरे, नीचे की सूखी जमीन में से भी जितनी भी नमी खींची जा सके, उसे वे प्राप्त करते रहें। इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए इस जाति के पौधों ने अपने कलेवर को बड़े ही आश्चर्यजनक ढंग से बदल डाला है और ऐसी प्रतिकूल परिस्थिति में भी अपने आप को टिकाये रखने का सामर्थ्य प्राप्त कर सचमुच ही कमाल कर दिखाया है! उन्होंने एक ओर तो जल को बेकार नष्ट होने से रोकने के लिए अपने तनों को अत्यन्त गूदेदार (मांसल) और मोटा बना लिया है,

कुमुदिनी-वर्ग के 'विक्टोरिया रीजिया' नामक इस अद्भुत पौधे की विशालकाय थालीनुमा पत्तियों का व्यास साढ़े तीन मीटर होता है और उनके पुष्पों का घेराव लगभग सवा मीटर!

साथ ही साधारण कोटि की पत्तियों को तिलांजलि देकर इन तनों को ही ऐसे कांडपत्रों या पर्णकाय स्तम्भों में रूपान्तरित कर लिया है कि उनसे वे पत्तियों का सारा कार्य ले लेते हैं। दूसरी ओर, जड़ों को भी इस प्रकार से विकसित कर लिया है कि वे अल्प मात्रा में प्राप्त नमी तथा वर्षा-जल की नपी-तुली बूँदों को भी शोषित कर जलपूर्ति करती रहें। इसी कारण, इनके कलेवर बदलकर इन विचित्र शक्लों के बन गये हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अमेरिका के गगनस्पर्शी दैत्याकार थूहड़ तथा कैक्टस-परिवार के कुछ भयावने शूलधारी

पृष्ठ ४१ पर दिग्दर्शित चित्र को देखो! उस तस्वीर में बाईं ओर को विचित्र आकृति की जो बहुशाखायुक्त रचना मानो एक विशाल पंजे की तरह अपनी लम्बी उँगलियों से आसमान को छूने का प्रयत्न करती हुई सी जान पड़ती है, वह दरअसल एक वनस्पति है, क्या यह बात तुम्हारे दिमाग में बैठ पायेगी? फिर इस दानव के कद पर भी जरा गौर करो। वह समीप खड़े हुए घुड़सवार से लगभग आठ गुना अधिक ऊँचा है! हम तुम्हें यह बता दें कि यह कोई चित्रकार की मनगढ़न्त कल्पना नहीं, वरन् संयुक्त राज्य (अमेरिका) के दक्षिण-पश्चिमी बीहड़ मरुक्षेत्रों में सैकड़ों की संख्या में खड़े 'कैक्टस-परिवार' के भीमकाय पौधों में से एक की वास्तविक झाँकी है। नयी दुनिया का उक्त मरुक्षेत्र तरह-तरह की डरावनी आकृतियों एवं काँटेदार अथवा बिना काँटेवाले कैक्टस-परिवार के पौधों के जीते-जागते अजायबघर-सा है। यहाँ यदि एक ओर पूर्वोल्लिखित गगनचुम्बी वृक्षाकार दैत्य हैं, तो दूसरी ओर लोहे के शूल जैसे तीखे मजबूत काँटों से अपने कलेवरों को सजाये हुए, भाँति-भाँति के रूप-आकार के ऐसे चित्र-विचित्र नागफनी तथा तिधारे-चौधारे थूहड़ हैं, जिनकी डरावनी शक्लों के सामने जन्तु-जगत् के साही, आर्माडिल्लो, साल, काँटाचूहा (हेजहाग) जैसे कवचधारी भी निरापद जान पड़ेंगे (पृ० ४१ के चित्र की दूसरी ओर की आकृतियाँ देखो)। यह बात भी नहीं है कि इनके ये शूल महज दिखावटी हों। वे बड़े तीक्ष्ण होते हैं और चुभ जाने पर बड़ी पीड़ा पैदा कर देते हैं। इसी से ढोर-पशु इन पौधों से दूर रहने में ही अपनी खैरियत मानते हैं! और, यही दरअसल इस प्रकार के शूल-कवच से इन्हें लैस करने का कुदरत का लक्ष्य भी है, ताकि वे नष्ट होने से बचे रहें।

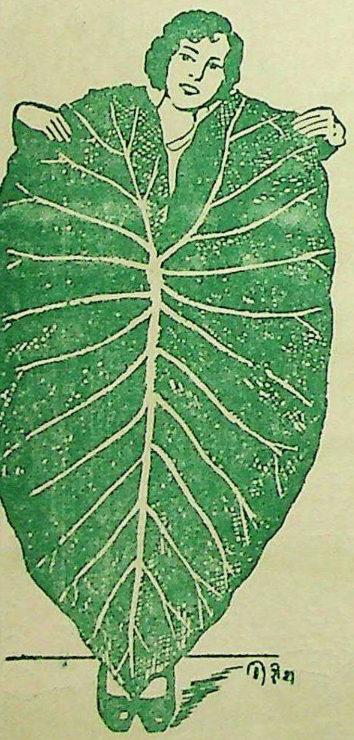

वनस्पति-संसार में अचंभों की कोई कमी नहीं! इस पत्ती के विशाल आकार का भी जरा अनुमान करो। परिचय पृष्ठ ४८ पर देखो।

साढ़े तीन मीटर व्यास की थालीनुमा वृहदाकार पत्तियोंवाली अद्भुत कुमुदिनी

ऊपर तुमने शुष्क मरुस्थलों में उपजनेवाले 'मीजोफाइट्स' समूह के कुछ पौधों का परिचय पाया। आओ, अब 'हाइड्रोफाइट्स' (अर्थात् जल में उपजनेवाले पौधों) के एक असाधारण नमूने की भी जानकारी प्राप्त करें, जो इस दृष्टि से वनस्पति-जगत् के अचम्भों में प्रथम पंक्ति में स्थान पाये हुए है कि उसकी पत्तियाँ आकार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में सभी को मात करती हैं—वे पौन मीटर से लेकर साढ़े तीन मीटर व्यास तक की गोलाकार थालियों का रूप लिये रहती हैं ! यह वनस्पति हमारी सुपरिचित कुमुदिनी या कोकाबेली की जाति का एक जल-पौधा है, जिसके मूल निवासस्थान दक्षिण अमेरिका के ब्रिटिश गुआना तथा बोलिविया नामक देश हैं । यह वहाँ की नदियों में पाया जाता है, जिनके स्थिर शान्त जल की सतह पर इसकी विशाल पत्तियाँ मानो एक प्रकार की नौकाओं की तरह तैरती हुई थमी रहती हैं । इन विशाल थालीनुमा पत्तियों का किनारा चारों ओर से ठीक थाली की कोर की तरह आठ-दस सेंटीमीटर ऊँचा उठा रहता है, जिससे पत्तियों का ऊपरी तल एकदम सूखा बना रहता है और वे नाव की तरह जल पर तैरती रहती हैं । ये पत्तियाँ बड़े मजबूत और मोटे नालदण्डों पर टिकी रहती हैं, जोकि नदीतल के कीच में जमे हुए स्थूल माँसल जड़भाग से सम्बद्ध होते हैं । पत्तियों का रंग ऊपरी सतह पर तो गहरा हरा तथा नीचे की ओर जामुनी लाल होता है । तलभाग का यह लाल वर्ण पत्तियों की उठी हुई कोर की पलटी हुई बाहरी बाजू में झलककर एक अद्भुत मनमोहक छटा पैदा कर देता है, जो कोर के झालरनुमा कटाव के कारण और भी अधिक आकर्षक बन जाती है !

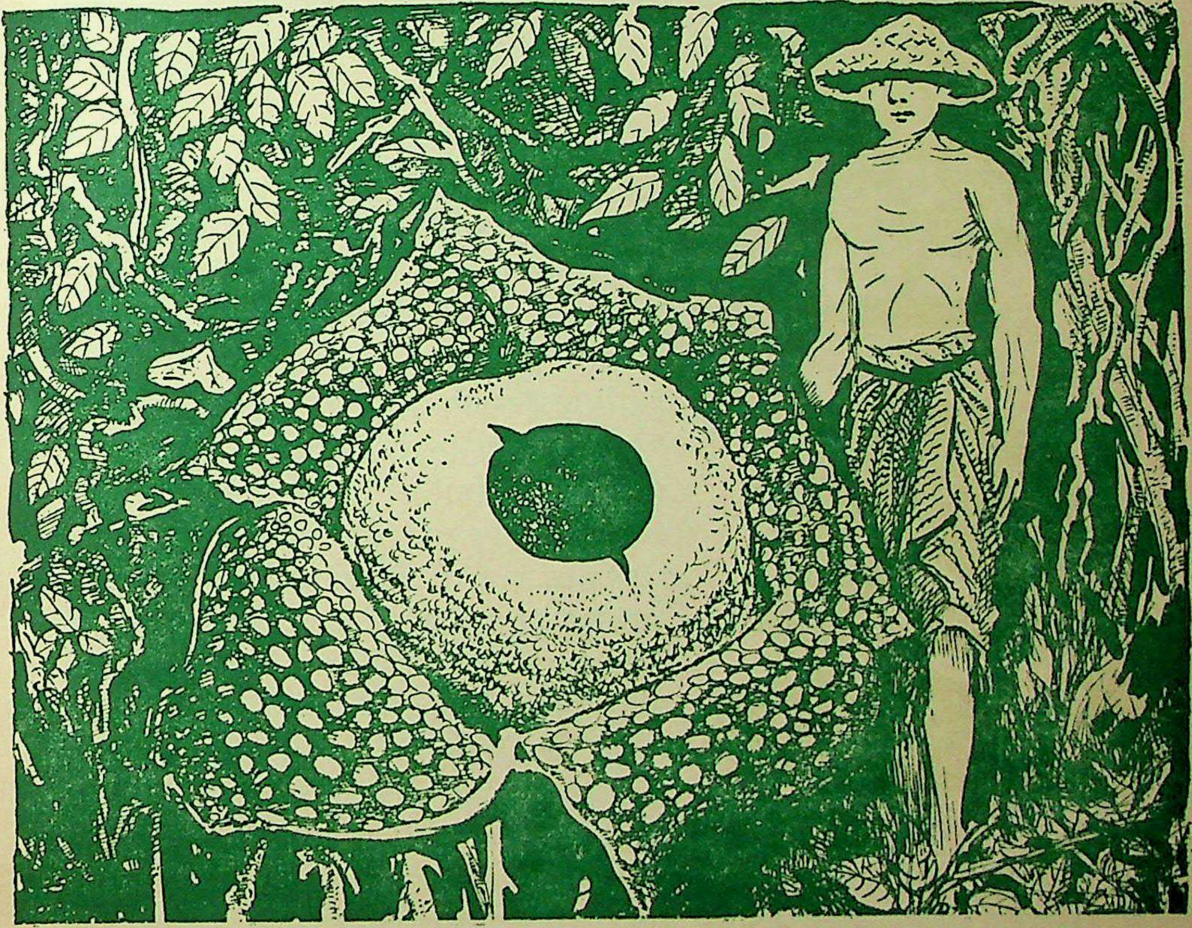

क्या तुमने कभी स्वप्न में भी यह अनुमान किया होगा कि इतने विशाल आकार का भी कोई पुष्प हो सकता है ? प्रकृति की यह अद्भुत अनोखी कृति सुमात्रा के जंगलों में पाई जाती है । इसे 'रैफ्लीजिया' के नाम से पुकारा जाता है । इसके भीमकाय आकार का अंदाज पास में खड़े आदमी के कद से तुम कर सकते हो । विशेष विवरण पृष्ठ ४८–४९ पर पढ़ो !

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विशालकाय पत्तोंवाली इस कुमुदिनी के पुष्प भी छोटे नहीं होते––उनका व्यास अड़तीस सेंटीमीटर तक का होता है और घेराव लगभग सवा मीटर के दायरे में फैला हुआ पाया जाता है। कुमुद-परिवार के सभी जलपुष्पों की तरह ये फूल भी पत्तियों से अलग अपने स्वतंत्र नालदंडों पर ऊपर उठे हुए बीच-बीच में यत्र-तत्र सुशोभित रहते हैं। वे शाम को ही अपनी पंखुड़ियाँ खोलते हैं और रात्रि भर अपनी अत्यन्त मीठी और सुहावनी सुगन्ध फैलाते हुए खिले रहते हैं! उनका रंग शुद्ध श्वेत से लेकर गुलाबी तक विभिन्न झाइयाँ प्रदर्शित किए रहता है। सबसे अद्भुत तो होती है इस पौधे की पत्तियों की नसों की वृहत जाली की रचना, जो कि उसके मध्य केन्द्रबिन्दु से चारों ओर शाखा-प्रशाखाओं के एक सुव्यवस्थित जटिल जंजाल के रूप में फैली पायी जाती है। ये नसें और उनसे सम्बद्ध नालदंड आदि सभी बड़े मजबूत तथा भीतर से पोले होते हैं, जिसके फलस्वरूप उनका वजन काफी हलका बना रहता है और सारी रचना बड़े मजे से पानी पर तैरती रह सकती है। पृ० ४३ के चित्र में तुम वनस्पति-जगत के इस अद्भुत अनोखे चमत्कार की झाँकी देख सकते हो!

इस अद्भुत पौधे का पता योरपवालों को पहलेपहल १८०१ ई० में लगा था। इसका नाम ब्रिटिश वैज्ञानिकों ने रानी विक्टोरिया के सम्मान में 'विक्टोरिया रीजिया' रख दिया, जो सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया गया। तुम्हें यह जानकर दिलचस्पी होगी कि हमारे अपने देश में भी कलकत्ते के प्रसिद्ध वनस्पति-उद्यान में इस विचित्र वनस्पति के कुछ पौधे सफलतापूर्वक लगाये जा चुके हैं, जिन्हें देखने के लिए लोगों की भीड़ टूटा करती है! इस वनस्पति की एक आश्चर्यजनक विशेषता यह है कि इसके बीज पानी में बो दिये जाने के उपरान्त भी कहीं लगभग ढाई वर्ष में जाकर अंकुरित हो पाते हैं! कहावत सच ही है कि बड़ों की सभी बातें बड़ी होती हैं!

'विक्टोरिया रीजिया' की पत्तियाँ पानी पर तैरते समय इतनी समर्थ होती हैं कि यदि उन पर किसी बच्चे को बिठा दिया जाय, तो उसके डूब जाने का कोई भय नहीं होता! उनके इसी सामर्थ्य के बूते पर प्रायः दक्षिण अमेरिका के जेकेना नामक लँबटंगू दलदली पक्षी उन पर खड़े होकर मजे से कीड़े चुगा करते हैं (आवरण के रंगीन चित्र की मध्यवर्ती झाँकी देखो)।

वनस्पति-जगत् के दो अनोखे बौने! क्या तुम यह बात मानने को तैयार होगे कि गमलों में लगे हुए ये पौधे वास्तव में वृक्ष हैं, जिनकी आयु लगभग चार सौ वर्ष है? जुनिपर-परिवार के आधे-पौन मीटर ऊँचे ऐसे बौने वृक्ष जापान में पाए जाते हैं और उन्हें वहाँ गमलों में लगाने का बड़ा रिवाज है!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

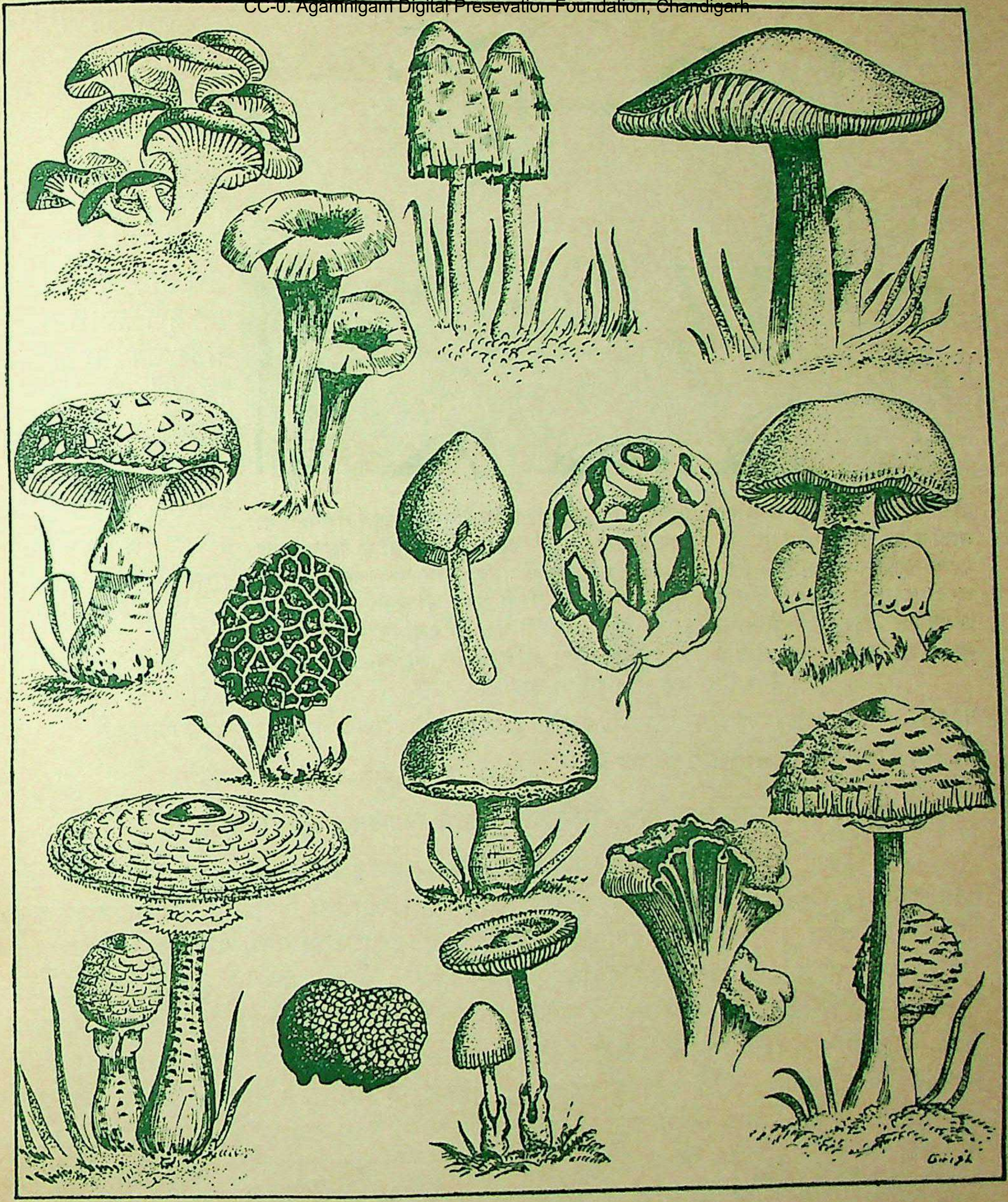

वनस्पति-संसार के 'थैलोफायटा' महासमूह के कतिपय निम्न कोटि के परोपजीवी पौधों की सृष्टि करते समय, कलाकार प्रकृति ने उन्हें भाँति-भाँति की लुभावनी आकृतियों में ढालकर तथा एक से एक अनूठी चित्र-विचित्र पोशाक पहनाकर सचमुच ही कमाल कर दिखाया है ! इनमें से कोई छत्रियों जैसे जान पड़ते हैं, तो कोई मानो टोपी लगाए-से ! किसी की आकृति हूबहू झोपड़ी जैसी है, तो कोई वृक्षों जैसे जान पड़ते हैं ! कोई पुष्प जैसे खिले हैं, तो किसी को देखकर सुंदर 'टेबल लैम्प' की याद आ जाती है ! इनमें से कुछ शौक से खाए भी जाते हैं, परन्तु अधिकतर जहरीले ही होते हैं। इन फफूँदवर्गीय वनस्पतियों को 'छत्राक', 'कुकुरमुत्ता' आदि नामों से पुकारा जाता है (परिचय पृ० १६ और ५२ देखो)।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

योरप के आल्प्स पर्वतों के क्षेत्र में पाया जानेवाला 'सोल्डानेला' नामक यह विचित्र पौधा जाड़ों में बर्फ से दब जाने पर भी जीवित बना रहता है! वह अपनी पत्तियों में इतना खाद्य पदार्थ एकत्रित कर लेता है कि उससे उस संकटकाल में उसका काम चल जाता है। वह अपनी आंतरिक गरमी से आसपास गुफा जैसी इतनी खाली जगह भी बनाए रहता है कि जिससे वह ठिठुरकर मुरझाता नहीं। तब उसी गरमी से बर्फ को गलाकर वह ऊपर की ओर एक रास्ता-सा बना लेता है (दे० दाहिनी ओर) और आखिर को उसका सिरा उस छिद्र द्वारा बर्फ से बाहर आ जाता है।

बहुत बड़े आकार की पत्तियाँ ताड़ और केले की जाति के कुछ स्थलवासी पौधों में भी मिलती हैं। उदाहरणार्थ, ब्राजिल के उत्तरी भाग में मिलनेवाले ताड़-परिवार के एक वृक्ष के पत्ते तेरह मीटर तक लम्बे पाये गये हैं! ये पत्तियाँ पक्षियों के पर जैसी पिच्छाकार होती हैं! केले की जाति के पौधों में भी पत्ते काफी बड़े होते हैं। पृ० ४४ का चित्र देखो! यह अरुई-वर्ग के एक पौधे का पत्ता है, जिसने एक महिला के शरीर को लगभग पूरा ढक लिया है। इस बिरादरी के कुछ सदस्य तीन मीटर तक लम्बे पत्तों से भी विभूषित देखे गये हैं।

दुनिया का सबसे बड़ा फूल, जिसकी चौड़ान लगभग एक मीटर होती है!

तुम्हें यह सुनकर हैरानी होगी कि प्रकृति के अजायबघर में जहाँ विशाल आकार की कुछ असाधारण पत्तियाँ देखने को मिलती हैं, वहाँ फूलों का भी ऐसा एक भीमकाय अद्भुत प्रतिनिधि विद्यमान है, जिसकी कि हर बात निराली और चौंका देनेवाली है! यह पुष्प सुमात्रा और मलाया के अत्यधिक वर्षावाले सघन वनों में पाया जाता है। उसे अपने खोजी सर स्टेनफोर्ड रैफ्लीज के नाम पर 'रैफ्लीजिया' कहकर पुकारा जाता है। इस भीमकाय पुष्प की चौड़ान लगभग एक मीटर और घेराव ढाई मीटर के दायरे में फैला हुआ होता है! निश्चय ही दुनिया में इससे बड़ा फूल अब तक नहीं पाया गया है। परन्तु इसे एक पुष्प कहें या पौधा? क्योंकि इसकी सबसे बड़ी खूबी यह है कि इसके साथ न तो कोई तना है, न पत्तियाँ! जो कुछ भी है, केवल यह पुष्प ही पुष्प है! यह फूल जमीन पर फैला हुआ पड़ा रहता है और अपना भरण-पोषण वह एक असली परोपजीवी (अन्य का माल हड़पकर गुजर-बसर चलानेवाले) की भाँति किसी समीपवर्ती वन्य लता की मूल जड़ से प्राप्त किया करता है, जिसके साथ उसका एकमात्र वृन्त बड़ी मजबूती से नीचे ही नीचे जुड़ा रहता है!

तुम्हें यह जानकर विस्मय होगा कि इस दैत्याकार पुष्प के मध्य में जो मकरन्द-कोष होता है, उसमें एक घड़ा भर पानी भरा रहता है! प्रकृति ने यह सारी रहस्यमय व्यवस्था

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसमें किसलिए की है, इसका किंचित् आभास इसकी उस अद्भुत बीज-विकिरण-विधि में हमें मिलता है, जिसके द्वारा यह विचित्र वनस्पति अपनी नस्ल को कायम बनाये हुए है। कहते हैं, मलाया और सुमात्रा के वनों में जंगली हाथियों के जो झुंड घूमा करते हैं, उनसे यह पुष्प प्रायः कुचलकर नष्ट हो जाता है। परन्तु अपनी जीवनलीला समाप्त करते समय यह पुष्प आगे वंश चलाने का एक पक्का प्रबन्ध कर जाता है। जैसे ही हाथियों के पैर इस पर पड़ते हैं, उन पर इसके चिपचिपे बीज चिपक जाते हैं। इन बीजों में से कोई न कोई पुनः किसी वन्य लता की खुली जड़ों पर जा जमता है, जिन्हें हाथी अपने वन-विहार में प्रायः कुचलते रहते हैं। इस प्रकार जहाँ पिछला रैफ्लीजिया इस संसार से कूच कर जाता है, वहाँ कहीं न कहीं उसकी सन्तान पुनः उठ खड़ी होती है, जिससे कि उसका वंश सर्वथा मिटने नहीं पाता!

इस प्रकार की संकटपूर्ण स्थिति में जीवनयापन करनेवाला कोई भी वनस्पति मंद गति से अपनी वृद्धि करके कदापि जीने की आशा नहीं कर सकता। अतः रैफ्लीजिया को प्रकृति ने ऐसी शक्ति प्रदान कर रक्खी है, जिसकी बदौलत वह अत्यन्त वेगपूर्वक अपना विकास कर लेता है। मलाया-सुमात्रा के वनवासियों का कहना है कि उन्होंने इस पुष्प को रातोंरात तेजी से खिलते हुए पाया है! इसकी अन्य एक उल्लेखनीय विशेषता यह भी है कि इसकी गन्ध अत्यन्त बदबूदार होती है, जिससे कोई भी इसके पास फटकने का साहस नहीं कर पाता! ये सभी खूबियाँ कुदरत ने इस दुर्लभ वनस्पति में शायद इसीलिए पैदा की है कि वे उसके कठोर जीवन-संग्राम में सहायक हो सकें।

दो सौ मीटर लम्बी शाखायें!

हमने पिछले एक प्रकरण में वृक्षों के असाधारणतया ऊँचे कद और अत्यधिक मोटे तनों की जानकारी प्राप्त की थी, परन्तु यहाँ हम तुम्हें ऐसे एक अद्भुत पौधे का परिचय देने जा रहे हैं, जिसकी शाखों की लम्बाई संसार के ऊँचे से ऊँचे वृक्षों की नाप को भी निस्तेज बना सकती है! यह पौधा ताड़-परिवार का एक सुप्रसिद्ध सदस्य है, जिसे 'रत्तन पाम' कहते हैं। मजबूत और लचीली हमारी बेंत की छड़ियाँ इसी वनस्पति की देन हैं और इसी के ऊपरी चिकने वल्क की फीतेनुमा पतली पट्टियों से हमारी कुर्सियाँ बुनी जाती हैं। यह वास्तव में एक

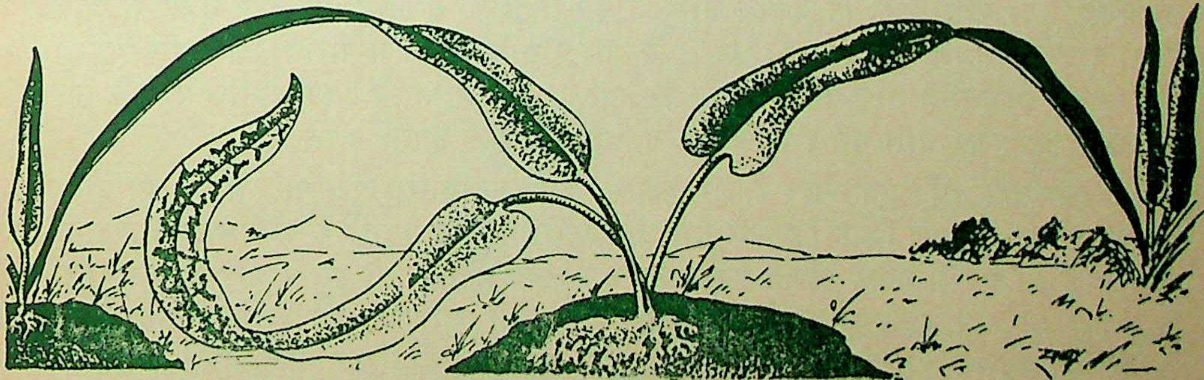

फर्न-परिवार का यह अनोखा पत्रांग अपनी पत्तियों के सिरे पर ऐसे अंकुर उगाए रहता है, जो उन लम्बी पत्तियों के झुककर जमीन छू लेने पर दूरस्थ भूमि में जड़ पकड़ लेते हैं। इस प्रकार उनसे एक नया पौधा पैदा हो जाता है! इस विधि से यह विचित्र पौधा मानो चहलकदमी करते हुए निरन्तर आगे बढ़ता चला जाता है!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
लता है, जो जलाशयों के किनारे उपजकर पास-पड़ोस के पेड़ों पर जा चढ़ती है और उन पर रस्सी जैसी अपनी मजबूत पतली शाखें फैलाती हुई लगातार अपना विस्तार किये चली जाती है। दक्षिणी-पूर्वीय एशिया के मलाया, सिंगापुर, फिलिपीन-द्वीप, बर्मा और लंका आदि प्रदेश इस बेंत के घर हैं। भारत में भी इसकी कुछ किस्में होती हैं।

कहा जाता है कि इस लता की शाखें कहीं-कहीं दो सौ मीटर तक की लम्बाई की पायी गयी हैं! इसका अर्थ यह हुआ कि सिक्वोइया तथा युकैलिप्टस जैसे दुनिया के सबसे ऊँचे वृक्षों के कद से लगभग दुगुना या ड्योढ़ा इन लताओं की सर्पिल बाहुओं की लम्बाई का प्रसार है! सुदृढ़ रस्सी की तरह वृक्षों की डाली-डाली को अपने बन्धन में कसकर इन बेंतों का पेचीदा जाल इस प्रकार से उन पर छाया रहता है कि उनके गोरखधन्धे के बारे में यह पता पाना असम्भव होता है कि कौन-सी शाख किधर गयी है!

वनस्पति-अजायबघर के अन्य कुछ चमत्कार

भला, कोई कहाँ तक गिनाता रहे और किस-किस का बखान करे? कुदरत का अजायबघर तो एक से एक अनोखे वनस्पतियों से भरा पड़ा है, जिनके रूप-आकार और बर्ताव की असाधारणता की जानकारी पाकर हमें आश्चर्य से दाँतों तले उँगली दबानी पड़ती है! लो, वे गमलों में लगे हुए आधे-पौन मीटर ऊँचे पौधे कोई मामूली बूट नहीं, बल्कि चार-पाँच सौ वर्ष तक की उम्र के वृक्ष हैं, जो जापान में पाये जाते हैं और शोभा के लिए उद्यानों में लगाये जाते हैं (दे० पृ० ४६ के चित्र)! ये जुनिपर-परिवार के सदस्य हैं, जिसके कई वृक्ष काफी बड़े डील-डौल के भी होते हैं। उधर दक्षिणी अफ्रीका में डा० वेलविश नामक एक अनुसन्धान-कर्त्ता द्वारा खोजे गये 'वेल्विशिया मिराबिलिस' (तंबोआ) नामक अपने ढंग के उस एकमात्र पौधे पर भी गौर करो, जिसके करीब एक मीटर व्यास के तने में (जो जमीन से केवल पचीस-तीस सेंटीमीटर ऊपर उठा रहता है) मात्र दो ही पत्तियाँ होती हैं! ये दोनों पत्तियाँ उस चक्राकार तने के गहरे खाँचेदार चपटे सिरे पर से आमने-सामने निकलकर उसकी आजबाजू नीचे की ओर लटकती रहती हैं। वे भूरे रंग की, सुदृढ़ तथा चिमटों के आकार की अनगिनत पट्टियों में कटी-फटी हुई होती हैं। इनकी लम्बाई इतनी अधिक होती है कि तने के आसपास की लगभग डेढ़-दो मीटर तक की बलुआ भूमि की रेत-मिट्टी को वे झाड़ू की तरह बुहारती जान पड़ती हैं। सबसे विचित्र बात तो यह है कि इस पौधे के जीवन में पत्तियों का केवल एक ही ऐसा जोड़ा उपजता है और वह जिन्दगी भर उस पर बना रहता है! इस अनोखे पौधे के तने की ऊपरी कोर पर प्रति वर्ष किरमिजी रंग के पुष्प-समूह खिला करते हैं!

इसी तरह यदि एक ओर चिली देश में पाया जानेवाला 'गुआमा' नामक वह पौधा है, जिसमें हमारे हाथ जितनी लम्बी सेम जैसी फलियाँ लगा करती हैं, जिनमें से निकलने-वाले बीज आकार में पन्द्रह-सोलह सेंटीमीटर तक लम्बे होते हैं, तो दूसरी ओर मध्य-सुमात्रा के जंगलों का 'एमार्फोफैलस टाईटेनम' नामक घुइयाँ की जाति का वह दुर्लभ कन्द-वनस्पति है, जिसके लगभग पौन मीटर चौड़े फूल की पुष्पमंजरी पौने दो मीटर लम्बी होती है! इधर न्यूयार्क के सेन्ट्रल पार्क में 'एश' की जाति के ऐसे दो पुरातन वृक्ष खड़े हैं, जिनके तने एक दूसरे से लगभग साढ़े छः मीटर दूर होकर भी ऊपर जाकर परस्पर जुड़ गये हैं! और उधर बर्लिन के समीप के एक राजमार्ग पर सड़क के बीचोबीच एक हजार वर्ष पुराना एक ऐसा वृक्ष

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विद्यमान है, जो देखने में पैरों पर खड़े हुए भालू जैसा जान पड़ता है ! ये सब प्रकृति द्वारा मौज में आकर रची गयी करतूतें नहीं, तो फिर क्या हैं ?

वे विचित्र पौधे जो बर्फ में दबकर भी पनपते हैं तथा वे जो चहलकदमी करते हुए पाये जाते हैं !

पृ० ४८ का चित्र देखो । यह 'सोल्डानेला' नामक एक पर्वतीय पौधे की जाड़े के दिनों की जिन्दगी की झाँकी है, जिसे वह बर्फ के नीचे दबकर बिताया करता है । यह पौधा मध्य-योरप के हिमाच्छादित आल्प्स पर्वतों का निवासी है । यह वसन्त ऋतु में बर्फ के पिघल जाने पर तो फलते-फूलते देख पड़ता है, परन्तु जाड़ा आते ही बेचारा पुनः हिम की परतों के नीचे दब जाता है । परन्तु इस विपत्ति में भी वह धैर्य नहीं खोता । कारण, उसकी पत्तियों में इतना खाद्य पदार्थ पहले ही से जमा रहता है कि उसके बूते पर यह पौधा जाड़े में बर्फ के नीचे की अपनी जिन्दगी मजे में काट लेता है । इस बीच उसकी सारी विकास-क्रिया बरकरार जारी रहती है और शीघ्र ही उसमें पुष्प का कल्ला भी फूट आता है । यह कल्ला अपनी आंतरिक गरमी से क्रमशः आसपास की बर्फ को गलाकर एक रास्ता-सा बना लेता है और अन्त में बर्फ की ऊपरी पर्त को तोड़कर बाहर निकल आता है !

पृ० ४९ के चित्र पर भी ध्यान दो ! यह कैसा विचित्र पौधा है, जो अपनी फीतेनुमा लंबी पत्तियों को दूर तक कमान की तरह तानकर उनके सिरे के नुकीले भाग को जमीन में गड़ाए हुए है ? हम तुम्हें यह अचम्भे की बात बता दें कि इस पौधे की पत्तियों का यह आचरण एकदम निरुद्देश्य नहीं है । वस्तुतः इस अनोखे ढंग से यह असाधारण वनस्पति मानो चहलकदमी करता हुआ निरन्तर मूलस्थान से आगे बढ़ता रहता है और जहाँ भी उसकी पत्तियाँ जमीन को छू लेती हैं, वहीं नयी पौध उपजाकर अपने वंश-विस्तार का प्रयोजन सिद्ध करता चला जाता है ! इस कार्य के हेतु इसकी पत्तियों के सिरे पर अंकुर जैसी कुछ रचनाएँ पहले ही से विद्यमान होती हैं, जोकि जमीन का स्पर्श पाते ही जड़ पकड़ लेती हैं ! यह पौधा पर्णाङ्ग (या फर्न) परिवार का एक वनस्पति है, जिसके सदस्य जड़, तना और पत्तियों से लैस होते हैं, परन्तु फूल एवं बीजों का उनमें सर्वथा अभाव रहता है !

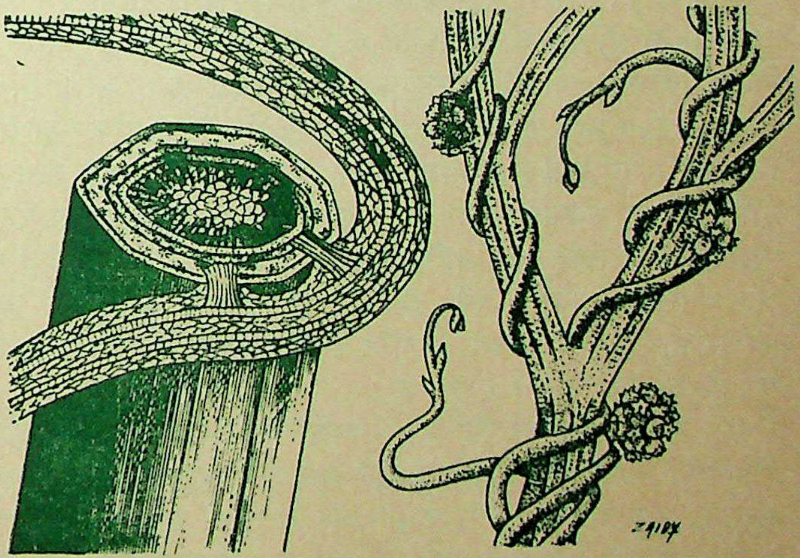

परोपजीवी पौधों की करतूत का कुछ अंदाज तुम्हें अमरबेल नामक इस गिरहकट से हो जायगा ! (दाहिनी ओर) इस लुटेरे ने प्रतिपालक वृक्ष को अपने घातक पाश में जकड़ रखा है; (बाईं ओर) इस पराश्रयी लता के रसशोषक तंतु प्रतिपालक के कलेवर में इसी तरह घुसे रहते हैं !

दूसरों का माल हड़पकर गुजर-बसर करनेवाले गिरहकट पौधे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पिछले पृष्ठों में 'रेफ्लीजिया' नामक दुनिया के सबसे बड़े फूल को उपजानेवाले विचित्र पौधे का परिचय कराते समय, उसकी इस अनूठी विशेषता के प्रति हम तुम्हारा ध्यान दिला चुके हैं कि वह अपनी खाद्य-पूर्ति सीधे धरती से न करके, अन्य एक वनस्पति के तने में अपनी जड़ें घुसेड़, चोरी से दूसरे का माल हड़पकर किया करता है ! तुम्हें यह जानकर हैरानी होगी कि इस तरह के अन्य गिरहकट पौधों ने भी चालाकी के रास्तों को अपनाकर दूसरों की जेब काटना अपना नीच पेशा बना रक्खा है। इनमें 'अमरबेल' और 'गँठवा' नामक दो मशहूर परोपजीवियों से तो हमारे देश में प्रायः सब कोई सुपरिचित हैं। कारण, उनके अत्याचार से कई भोले-भाले पेड़-पौधों को हम नित ही लुटकर बरबाद होते देखा करते हैं। 'अमरबेल' (जैसा कि उसके नाम से स्पष्ट है) एक पराश्रयी लता है, जो अकसर मझोले आकार के वृक्षों और झाड़ियों पर अपनी पीतवर्ण ताँत का जाल फैलाये देख पड़ती है। यह दुष्ट लता 'अमर' इसलिए कहलाती है कि प्रायः उसकी सूत जैसी ताँत झूमकर एक से दूसरे वृक्ष पर जा पहुँचती है और इस प्रकार आश्रय बदल-बदलकर वह सदैव हरी-भरी बनी रहती है तथा अपना वंश कभी भी नहीं मिटने देती। इस परोपजीवी लता की करतूत का पता हमें तब चलता है, जबकि उसे खींचकर आश्रयदाता पेड़ की डालियों से जुदा करने की कोशिश हम करते हैं ! तभी हम यह जान पाते हैं कि किस प्रकार से यह अपनी सुई जैसी महीन शोषक जड़ों को प्रतिपालक वृक्ष के अंग में गड़ाकर उसका पोषक रस चूसा करती है। चाहे वह वृक्ष स्वयं उचित खाद्य के अभाव में सूखता चला जाय, परन्तु यह गिरहकट बेल स्वयं मजे में फूलती-फलती रहती है (पृ० ५१ का चित्र देखो) ! हमारे देश का अन्य सुप्रसिद्ध गिरहकट पौधा 'गँठवा' तो इससे भी अधिक चतुर है; कारण, वह ऊपरी दिखावे में तो एकदम सामान्य रूप से फूलने-फलनेवाला एक निर्दोष वनस्पति जान पड़ता है, परन्तु वास्तव में वह जमीन के भीतर ही भीतर गुप्त रूप से अपने आपको किसी पड़ौसी पौधे की मोटी जड़ से सम्बद्ध कर लेता है, जिसके फलस्वरूप बेचारा प्रतिपालक पौधा तो अपने खाद्य पदार्थों से वंचित होकर सूखता चला जाता है और यह गिरहकट स्वयं मजे में पनपता रहता है ! सबसे विचित्र बात तो यह होती है कि गिरहकट एवं उसके प्रतिपालक दोनों की जड़ों के तन्तु इस प्रकार से परस्पर गुँथ जाते हैं कि यह पहचानना आसान काम नहीं होता कि कौन जड़ किसकी है ! एक-डेढ़ बालिश्त ऊँचा यह क्षुद्र वनस्पति प्रायः सरसों, तम्बाकू, गोभी और बैंगन जैसे कृषि के पौधों को अपनी लूट का शिकार बनाया करता है और इसकी जकड़ में आने पर उन बेचारों को केवल सर्वनाश का ही सामना करना पड़ता है।

वनस्पति-जगत् की वर्ण-व्यवस्था का बखान करते समय, 'थैलोफायटा' समूह के उन फफूँदवर्गीय अद्भुत पौधों का हाल हम तुम्हें पहले ही बता चुके हैं, जिन्हें आम तौर पर छत्राक, कुकुरमुत्ता, धरती के फूल आदि नामों से पुकारा जाता है। पृ० ४७ पर दी गई तस्वीर से तुम वनस्पति-जगत् के इन चमत्कारपूर्ण पौधों की चित्र-विचित्र शक्लों का कुछ अनुमान कर सकते हो। हम तुम्हें बता दें कि फफूँद-वर्ग के ये विचित्र पौधे भी एक प्रकार के परोपजीवी वनस्पति ही हैं। कारण, किसी का आश्रय ग्रहण किये बिना अपना जीवन-निर्वाह करने की क्षमता इनमें कदापि नहीं होती।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शिकारी और मांसाहारी पौधे

यदि कोई यह कहे कि जन्तु-जगत् के बहुतेरे सदस्य अन्य प्राणियों को मारकर अपना भरण-पोषण करते हैं, तो इसमें किसी को भी अनहोनी बात नहीं लगेगी। कारण, सब कोई जानते हैं कि शेर, भेड़िया आदि अनेकों जीव (यहाँ तक कि किसी हद तक मनुष्य भी) मांसभक्षी हैं। परन्तु इसके साथ ही यदि कोई यह बात बताये कि कुछ वनस्पति भी ऐसे हैं, जो कि जीवों की हत्या करके अपना गुजारा चलाते हैं, तो सुननेवाले अचरज से हक्का-बक्का होकर रह जायेंगे! भला, यह 'उल्टे बाँस बरेली को' जैसी बात कैसी? इन पेड़-पौधों को ऐसी कौन-सी मजबूरी आ पड़ी, जिसकी वजह से अपनी जाति-बिरादरी के सारे शील-व्यवहार को ताक पर रखकर, आहार-पूर्ति के परम्परागत तरीकों को वे तिलांजलि दे बैठे और इस तरह एकदम उल्टी गंगा बहाने लगे?

नाइट्रोजन-पूर्ति की समस्या और उसके समाधान के सामान्य उपाय

वनस्पति-जगत् के इन असाधारण सदस्यों के विचित्र आचरण का मर्म समझने के लिए यह जरूरी है कि उनकी खाद्य-सम्बन्धी आवश्यकताओं तथा उनकी पूर्ति के हेतु किये जाने-वाले उपायों का कुछ हाल तुम्हें यहाँ बता दिया जाय। शायद तुम्हें यह मालूम न होगा कि जानवरों की तरह, वनस्पतियों को भी अपना जीवन-चक्र चलाने के लिए ऑक्सीजन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन, कार्बन, फास्फोरस आदि विविध रासायनिक तत्त्वों की अनिवार्य आवश्यकता होती है। इनमें नाइट्रोजन जानवरों और वनस्पतियों दोनों ही के कलेवरों के आधारभूत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जव पदार्थ 'प्रोटोप्लाज्म' (जीवद्रव्य) के निर्माण में योग देनेवाला बड़ा ही महत्वपूर्ण तत्व है। यह मूल्यवान् तत्त्व वैसे तो प्रकृति में बहुतायत से विद्यमान है—वह हमारे आसपास की हवा में लगभग ७९ प्रतिशत मात्रा में मौजूद है, तथापि पेड़-पौधे और जीवधारी दोनों ही उसके लिए भाँति-भाँति से निरन्तर संघर्ष करते रहते हैं। इसका कारण यह है कि (बैक्टीरिया जैसे निम्न कोटि के कुछ प्राणियों को छोड़कर) वे इसे कुदरत से सीधे ग्रहण करने में सर्वथा असमर्थ हैं। वस्तुतः प्रकृति की ऐसी कुछ विचित्र योजना है कि पहले वह इसे कतिपय विशिष्ट यौगिकों में रूपान्तरित करती है, तब कहीं इस योग्य वह बन पाता है कि प्राणियों द्वारा काम में लाया जा सके! इस सम्बन्ध में कुदरत ने वनस्पतियों और जानवरों दोनों ही पर कुछ विशिष्ट कर्त्तव्यों की जिम्मेदारी रख दी है। इधर पौधे भूमि में से नाइट्रोजनयुक्त लवणों को ग्रहण करके उनसे जीवधारियों के शरीर-तन्तु की रचना करनेवाले 'प्रोटीन' नामक महत्वपूर्ण पदार्थ के निर्माण में योग देते हैं। उधर जानवर अपने विसर्जित मलपदार्थों एवं मृत्यु के उपरान्त सड़गलकर मिट्टी में मिल जानेवाले अपने कलेवरों की भेंट देकर भूमि की नाइट्रोजन-राशि की क्षतिपूर्ति करने में अमूल्य सहायता प्रदान करते हैं। इस कार्य में बैक्टीरिया जैसे निम्नतम कोटि के वनस्पति-प्राणी भी नाइट्रोजन को ग्रहण किये जाने योग्य यौगिकों में परिवर्तित करके कम मदद नहीं देते। इस प्रकार प्रकृति के आँगन में नाइट्रोजन के आय-व्यय का एक संतुलन-चक्र-सा चलता रहता है, जिसकी बदौलत पेड़-पौधों और जानवरों दोनों को इसके अभाव का सामना नहीं करना पड़ता और जीवन का काफिला बेखटके आगे बढ़ता रहता है।

नाइट्रोजन की आवश्यकता-पूर्ति के असाधारण तरीके—कीटाशी पौधों का विकास

परन्तु यह तो केवल इस तत्त्व की पूर्ति की सामान्य प्राकृतिक व्यवस्था की ही बात हमने तुम्हें बताई, जब कि ऐसे अपवाद भी हैं, जिनमें इस लक्ष्य को पूरा करने के कुछ असाधारण उपाय भी अपनाये गये हैं। जिन्हें आज हम 'कीटाशी' या 'मांसाहारी' पौधों की संज्ञा प्रदान करते हैं, वे अद्भुत वनस्पति इसी प्रकार से विकसित हुए हैं। अनुमान किया जाता है कि वनस्पतियों के इतिहास में कहीं-न-कहीं कभी ऐसी असाधारण परिस्थितियाँ भी आ खड़ी हुई होंगी, जबकि कुछ पौधों के लिए सामान्य विधि से अपनी नाइट्रोजन की रसद-पूर्ति कर पाना सम्भव न रहा होगा। फलतः मजबूरन उनमें से कुछ तिकड़मी पौधों ने, अपने आसपास मँडरानेवाले भोले कीट-पतिंगों पर लोलुप दृष्टि डालकर, भूमि से नाइट्रोजन-लवणों को प्राप्त करने की झंझट से छुट्टी पा लेने तथा प्राणियों के कलेवरों से सीधे ही अपनी आहार-पूर्ति करने की तरकीब निकालने की ठानी होगी। इस लक्ष्य की पूर्ति के प्रयास में ही इन पौधों ने क्रमशः अपने कलेवरों में धीरे-धीरे ऐसे कुछ कपटी अंग विकसित कर लिये, जिनकी मदद से वे बेबस जीवों को धोखे में डालकर अपना मतलब गाँठने लगे! ये कपट-यन्त्र लसलसे क्षारीय रस उत्पन्न करनेवाले रोमों से सुसज्जित पत्तियों, थैलियों एवं तूंबियों आदि का रूप लेकर सामने आये, जिनके द्वारा न केवल शिकार को फँसाने का ही काम लिया जाने लगा, बल्कि उसके कलेवर को पचाकर जज्ब करने की भी क्रिया सम्पन्न की जाने लगी। तुम्हें यह सुनकर अचम्भा होगा कि आज के दिन लगभग चार सौ जातियों के ऐसे पौधे वनस्पति-संसार में मिलते हैं। इन्हें अंग-विधान एवं शिकार करने के ढंग की विभिन्नता के अनुसार तीन वर्गों में बाँट दिया गया है—१. वे, जो पत्तियों आदि पर विशेष प्रकार का लसलसा रस पैदा करके अपने रोमों की हरकत से कीड़ों को फँसाते हैं; २. वे, जिनकी पत्तियाँ शिकार के स्पर्श

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से उत्तेजित होकर ऐसी हरकत करती हैं कि वह उनके पाश में फँस जाता है; और ३. वे, जिनके कलेवर में शिकार को फाँसने तथा पचाने के लिए तूंबियों, थैलियों आदि विशिष्ट कपट-पात्रों की व्यवस्था होती है। आओ, अब इनमें से प्रत्येक वर्ग के कुछ चुने हुए प्रतिनिधि नमूनों का परिचय प्राप्त किया जाय !

लसलसे रोमों द्वारा शिकार को फँसानेवाला सरल कीटाशी--'ओसपर्णी'

आकार में लगभग पचीस सेंटीमीटर कद के इस मांसाहारी पौधे को 'ओसपर्णी' नाम इसलिए दिया गया है कि इसकी घास जैसी पतली लम्बी पत्तियों पर एक प्रकार के लसलसे रस की बूँदें चमचमाती रहती हैं, जिन्हें देखकर ओस की याद आ जाती है। यह रस पत्तियों पर की कुछ ग्रंथियों से निकला करता है। इन ग्रंथियों में से कुछ बड़ी और कुछ छोटी होती हैं। बड़ी ग्रंथियों से उपजनेवाली रस-बूँदें कीट-पतिंगों की निगाह में मधु का भ्रम पैदा कर देती हैं, फलतः वे लोभ में आकर उन पर टूट पड़ते हैं और उनके चिपचिपे द्रव्य में लथपथ हो वहीं चिपक-से जाते हैं। उसी समय छोटी ग्रंथियों से एक प्रकार का क्षारीय रस निकलने लगता है, जो शिकार को और भी अधिक बेबस बनाकर उसके कलेवर के जैव पदार्थ को अपनी रासायनिक क्रिया से पचाना शुरू कर देता है ! यहाँ हम तुम्हें यह भी बता दें कि इस दानवीय पौधे की पत्तियों के बीचोबीच परनाली जैसी एक खाई-सी होती है, जिसमें उक्त क्षारीय रस अधिक मात्रा में विद्यमान रहता है। उधर नाली के आसपास के दोनों किनारे एक तरह के रोमों से सुसज्जित रहते हैं, जो शिकार को पाशबद्ध करने में विशेष योग देते हैं। जब गोंदीले रस की जकड़ में आकर अभागा कीड़ा लड़खड़ाकर पत्ती की मध्यवर्ती खाई में जा गिरता है, तो वहाँ का क्षारीय रस बात की बात में उसका सफाया कर देता है और कुछ समयोपरान्त शिकार के पंख, हाथ-पैर आदि अनुपयोगी बचे हुए अंग ही वहाँ पड़े देखे जाते हैं! इस प्रकार यह कपटी लगातार भोले कीट-पतिंगों को फँसा-फँसाकर अपना पालन-पोषण करता रहता है। यह सरल कीटाशी पुर्तगाल और मोरक्को में पाया जाता है, जहाँ लोग प्रायः घरों के सामने लटकाये जानेवाले गमलों में लगाकर उससे मक्खियाँ पकड़ने के यन्त्र का काम लेते हैं।

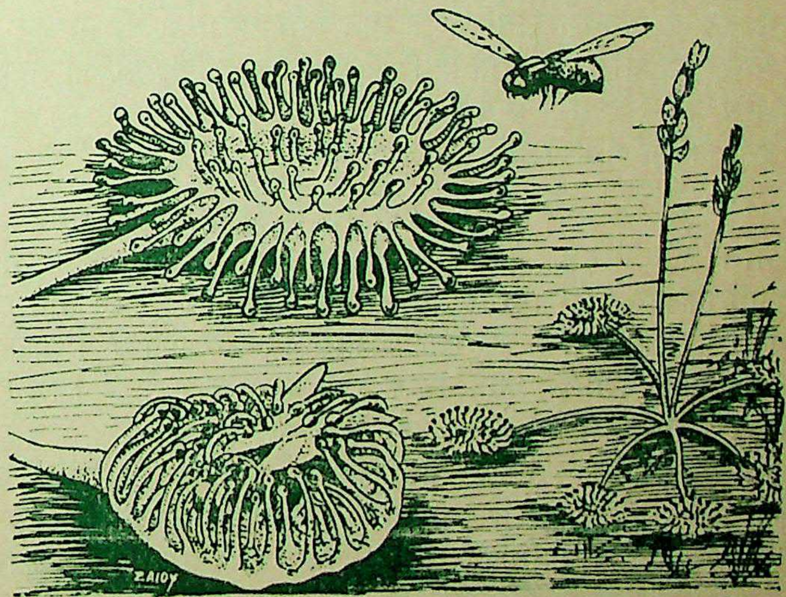

'कनकपर्णी' नामक सुप्रसिद्ध कीटाशी पौधा—(दाहिनी ओर) इस पौधे की संपूर्ण छवि; (बाईं ओर की परिवर्द्धित तस्वीरों में) ऊपर, मायावी पत्ती के रोमों पर चमचमाती हुई रसबूंदों से ललचाकर पतिंगा उसकी ओर बढ़ रहा है तथा नीचे पत्ती के रोमों ने झुककर शिकार को बंदी बना लिया है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'कनकपर्णी', 'कपाटपर्णी' आदि समुन्नत कीटाशी, जो शिकार को फाँसने के लिए अपनी पत्तियों आदि द्वारा विशेष हरकत करते हैं

'ओसपर्णी' जैसे प्रथम वर्ग के सरल कीटाशी पौधे का परिचय पाने के उपरान्त, जब हम 'कनकपर्णी', 'कपाटपर्णी' और 'बड़ा झंगी' जैसे कहीं अधिक समुन्नत एवं सिद्धहस्त शिकारी पौधों के वर्ग की ओर बढ़ते हैं, तो प्रकृति की इन्जीनियरी-कला का अद्भुत चमत्कार हमें देखने को मिलता है । कारण, इस वर्ग के सभी पौधे इस प्रकार से हरकत करके शिकार को पकड़ते और बन्दी बनाते हैं, मानो वे विशेष क्रिया करनेवाले कोई वैज्ञानिक उपकरण या यन्त्र हों ! इस वर्ग के पौधों की प्रमुख विशेषता यह है कि जहाँ वे लसलसा रस पैदा करनेवाली ग्रंथियों एवं रोमावली से युक्त होते हैं, वहाँ साथ ही साथ उनमें कुछ ऐसे अंग भी होते हैं, जो शिकार का स्पर्श पाते ही उत्तेजित होकर इस तरह का संपुट बना लेते या अपने खुले हुए कपाटों को बन्द कर लेते कि वह बेचारा अनायास बन्दी बन जाता है ! आओ, इस श्रेणी के कुछ प्रख्यात नमूनों की बानगी तुम्हें यहाँ दिखायें !

कनकपर्णी––योरप-अमेरिका में 'सन-डयू' (ड्रोसेरा) के नाम से मशहूर इस कीटाशी पौधे को 'कनकपर्णी' कहना इसलिए सर्वथा सार्थक प्रतीत होता है कि सूर्य-किरणों के प्रकाश में इसकी रोमावली पर झिलमिलानेवाले रस-बिन्दुओं की झाँकी देखने में ठीक वैसी ही जान पड़ती है, जैसी कि किसी मखमली फूल की पंखुड़ियों पर सुनहले जरी के काम की छटा ! इस पौधे की अनेक बिरादरियाँ हैं, जिनमें से दो हमारे देश में भी हिमालय की निचली श्रेणियों तथा बिहार, बंगाल एवं दक्षिण के पर्वतीय इलाकों में मिलती हैं । इस पौधे की पत्तियाँ भूमि को छूती हुई सी मध्यवर्ती पुष्पदण्ड के आसपास चारों ओर फैली रहती हैं और उन पर एक प्रकार के रक्तवर्ण रोमों का जमघट लगा रहता है, जो आकार में पत्ती की कोर पर बड़े तथा भीतर की ओर छोटे होते हैं । मध्यवर्ती रोमों का आकार सबसे लघु होता है तथा वे एकदम सीधे खड़े रहते हैं । प्रत्येक रोम के सिरे पर एक प्रकार का छत्र-सा बना रहता है । उसी पर रस की बूँदें मोतियों की तरह जगमगाती रहती हैं (पृ० ५५ का चित्र देखो) ।

अब जरा इस पौधे की कपट-लीला का भी वृत्तान्त सुनो ! कहते हैं, ज्योंही कोई भोला-भाला कीट भ्रमवश उसकी रसबिन्दुओं को मधु की बूँदें समझकर इस पौधे पर आकर बैठा नहीं कि उसके स्पर्श से पत्तियों में एक रहस्यपूर्ण हरकत होने लगती है । इधर तो रोमों के सिरे पर का गोंदीला रस कीट के हाथ-पैर और पंख में लिपटकर उसे बेबस बनाने लगता है और उधर पत्ती की कोर पर के रोम चारों ओर से झुककर शिकार के ऊपर इस तरह का घिरौंदा-सा बना देते हैं कि वह पिंजड़े के पक्षी की तरह कैद हो जाता है तथा उसके लिए भाग निकलने का कोई रास्ता खुला नहीं रह जाता । इस बीच चिपचिपे रस से अपने अंगों को छुड़ाने के प्रयत्न में ज्यों-ज्यों वह कीड़ा अधिकाधिक छटपटाता है, त्यों-त्यों पत्तियों की ग्रंथियाँ और भी अधिक उत्तेजित होकर अधिकाधिक रस बहाने लगती हैं । फलतः शिकार लथड़ जाता है और शीघ्र ही दम तोड़ बैठता है । तब पौधे द्वारा शिकार के कलेवर को पचाने और उसके पोषक द्रव्य को जज्ब करने की क्रिया आरम्भ होती है । यह क्रिया दो-तीन दिन तक चलती रहती है । पाचन-क्रिया की समाप्ति पर पत्ती के रोएँ अपनी झुकी हुई स्थिति से उठकर पुनः सीधे खड़े हो जाते हैं । उस समय पत्ती पर रसबूँदों का नामोनिशान भी शेष

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'घटपर्णी' (या पिचर प्लाण्ट) नामक जगत्प्रसिद्ध मांसाहारी पौधे की तूंबियाँ––मध्यवर्ती तथा दाहिनी ओर की तूँबियों को बाजू से काटकर उनकी भीतरी रचना तथा फँसे हुए कीट-पतिंगों की दुर्गति की झाँकी प्रदर्शित की गई है।

नहीं देख पड़ता। कारण, शिकार के द्रव्य के साथ उक्त रस भी पौधे द्वारा जज्ब कर लिया जाता है। अब केवल कीट की देह के बचे हुए भाग (पंख आदि) ही वहाँ पड़े मिलते हैं, जो समय पाकर हवा द्वारा इधर-उधर उड़ा दिये जाते हैं।

कपाटपर्णी––संवेदनशील अंगों से युक्त कीटाशी पौधों की जमात में 'वीनस देवी का मक्खी पकड़ने का यन्त्र' कहलाने का गौरव पानेवाले इस अद्भुत वनस्पति की सृष्टि करते समय प्रकृति ने सचमुच ही कमाल कर दिखाया है! कारण, जैसा कि इसके नाम से प्रकट है, इसकी पत्तियाँ किवाड़ के दो पल्लों की तरह कपाटवत् बन्द होती तथा खुलती रहती हैं और यह अद्भुत क्रिया केवल शिकार को पकड़ने के सिलसिले में ही हुआ करती है! सीपी की तरह एक ओर से जुड़े हुए इन कपाटों की झाँकी खुली हुई स्थिति में पुस्तक के खुले पन्नों अथवा संपुटाकार दोने जैसी जान पड़ती है। इन पल्लों की कोर पर कतिपय शूल जैसे रोम होते हैं, जिनमें बीचवाले तीन रोम अपेक्षाकृत बड़े होते हैं। पत्ती पर कुछ ग्रंथियाँ भी होती हैं, जिनसे लसलसा रस निकला करता है।

कनकपर्णी की तरह यह पौधा भी मध्यवर्ती पुष्पदण्ड के आसपास धरातल के समानान्तर अपनी मायावी पत्तियों को फैलाये रहता है। किसी कपट-पुष्प की पंखुड़ियों जैसी इन खतरनाक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पत्तियों के धोखे में कोई न कोई ग्रभागा कीट-पतिंगा देर-सबेर ग्रा ही जाता है ! बस, फिर क्या देरी रहती है ! जैसे ही उस मौत के निवाले का कोई भी ग्रंग पत्ती की सतह को छूता है, मानो कोई खटका-सा दब जाता है ग्रौर तत्काल एक विचित्र हरकत शुरू हो जाती है । उधर तो ग्रंथियों से रिसनेवाले चिपचिपे रस के प्रवाह में ऐसी तीव्रता ग्रा जाती है कि बेचारा कीट उसमें सराबोर हो जहाँ का तहाँ ठिठका रह जाता है ! इधर पत्ती के दोनों कपाट इस तरह हरकत करके मिल जाते हैं कि ग्रब शिकार के लिए भाग निकलने का कोई रास्ता ही नहीं रह जाता ! इस क्रिया में दोनों पल्लों की कोर पर के काँटे परस्पर ऐसे फँस जाते हैं, जैसे कि पंजे मिलाने पर हमारी उँगलियाँ एक-दूसरे के साथ जकड़ जाया करती हैं ! ग्रब भला, कैदी की कुशल कहाँ ? एक तो उस शिकंजे में जकड़कर यों ही उसका दम घुट जाता है ! उस पर, ग्रंथियों का क्षारीय रस ग्रपनी रासायनिक प्रक्रिया से उसके कलेवर का ग्रलग सफाया करने लगता है ! इस प्रकार बंदी कीट की देह का समस्त पोषक द्रव्य पाचन करके शिकारी द्वारा जज्ब कर लिया जाता है ! इस क्रिया में कभी-कभी एक सप्ताह या इससे भी ग्रधिक समय लग जाया करता है । ग्रन्त में, जब सारा काम समाप्त हो चुकता है, तो पत्ती के बन्द कपाट खुल-कर पुनः ग्रपनी सामान्य स्थिति में ग्रा जाते हैं । तब न तो वहाँ रस की बूँदें ही देख पड़ती हैं, न बन्दी कीट ही ! केवल शिकार की बची हुई ठठरी ही वहाँ पड़ी देखी जा सकती है ! सब-से बड़े ग्रचम्भे की बात तो यह होती है कि इस पौधे की पत्ती के कपाट केवल पोषक नाइट्रोजनीय द्रव्य की विद्यमानता में ही ग्रपनी सम्पूर्ण क्रिया सम्पन्न करते हैं । वे ग्रनाइट्रोजनीय द्रव्य से पाला पड़ने पर तुरन्त ही खुलकर ग्रपनी सामान्य दशा में ग्रा जाते हैं !

नवनीतपर्णी––ग्रंग्रेजी में 'बटरवर्ट' के नाम से प्रसिद्ध इस कीटाशी पौधे की विशेषता यह है कि ज्योंही कोई कीट-पतिंगा इस पर ग्राकर बैठता है, त्योंही इसकी पत्ती सिरे की ग्रोर से उठकर भीतर को मुड़ने लगती है । इससे मजबूर होकर शिकार पत्ती के मध्य भाग में जा पहुँचता है, जहाँ क्षारीय रस उपजानेवाली ग्रंथियों का जमघट लगा होता है । कहने की ग्रावश्यकता नहीं कि उक्त लसलसे रस से बेतरह लथपथ हो जाने पर कीड़े के लिए निकल भागने की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती । इस बीच क्षारीय रस ग्रपनी रासायनिक क्रिया ग्रारम्भ करके कीट के कलेवर को पचाना शुरू कर देता है । जब यह पाचन-क्रिया समाप्त हो जाती है, तो पत्ती खुलकर ग्रपनी पूर्वस्थिति को प्राप्त कर लेती है ।

बड़ा झंगी––कपाटपर्णी की भाँति हरकत करनेवाले दो पल्लों से युक्त पत्तियों की मदद से छोटे-छोटे जलकीटों को फँसाकर ग्रपना भरण-पोषण करनेवाला एक कीटाशी पौधा योरप एवं ग्रॉस्ट्रेलिया के छिछले जलाशयों के ग्रलावा हमारे देश में भी बंगाल प्रान्त के तालाबों तथा पोखरों में पाया जाता है । यह जलपौधा हमारे यहाँ 'बड़ा झंगी' के नाम से प्रसिद्ध है । पुस्तक के पन्नों की भाँति जुड़े हुए इसके पत्रदलों से भी तीखे काँटे जैसे कुछ रोम निकले रहते हैं । साथ ही पत्ती के किनारे पर छोटे-छोटे दाँतों जैसी कुछ रचनाएँ भी इसमें होती हैं । जब कोई ग्रभागा कीट पत्ती को छू लेता है, तो उसके स्पर्श से उसके रोम बेतरह उत्तेजित हो उठते हैं तथा कपाट एकबारगी ही मिलकर बन्द हो जाते हैं । इस प्रकार मिल जाने पर पत्ती के किनारे पर की दंतपंक्तियाँ एक-दूसरे में ऐसी फिट बैठ जाती हैं कि शिकार के लिए उस कालकोठरी में से निकलना ग्रसम्भव हो जाता है । जब एकाध सप्ताह के बाद पत्ती के बन्द कपाट पुनः

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खुलकर अपनी पूर्वस्थिति में आते हैं, तो बेचारे कीट की केवल सूखी ठठरी ही वहाँ बची हुई देख पड़ती है––उसकी देह का सारा पोषक जैव द्रव्य इस दानवीय पौधे द्वारा शोषित कर लिया जाता है ।

वे कीटाशी पौधे, जिनमें शिकार को फँसाने के लिए भाँति-भाँति के कपट-पात्र होते हैं

मांसभक्षी वनस्पतियों में सबसे विख्यात वे अद्भुत पौधे हैं, जिन्होंने अपना मतलब गाँठने के लिए कपाटपर्णी आदि से भी एक कदम आगे बढ़ाकर, अपने आपको शिकार फाँसने-वाले तरह-तरह के कपट-पात्रों से लैस कर लिया है ! ये कपट-पात्र किसी में लटकी हुई तूंबियों अथवा घड़ों, तो किसी-किसी में जमीन पर सजे हुए कलशों एवं थैलियों का-सा रूप ग्रहण किये हुए देखे जाते हैं । इनके इस स्वाँग के धोखे में आकर भोले-भाले कीट-पतिंगे सहज ही अपने प्राणों की आहुति चढ़ा बैठते हैं । आओ, इनमें से कुछ तिकड़मियों की माया देखें !

घटपर्णी––अंग्रेजी में प्रायः 'पिचर प्लाण्ट' (नेपेंथिस) के नाम से पुकारा जानेवाला यह पौधा वस्तुतः एक लता या बेल है, जिसकी कई एक जातियाँ न्यू गिनी, फिलिपीन द्वीप, इंडो-चायना, लंका, मेडेगास्कर और आँस्ट्रेलिया के अलावा हमारे देश में भी बंगाल तथा असम के दलदली क्षेत्रों में देखने को मिलती हैं । इस आरोही पौधे के बौंडों से जो कीट-पतिंगे फाँसनेवाली तूंबियाँ-सी लटकते देखी जाती हैं, वे शक्ल में घड़े जैसी जान पड़ती हैं, इसी से इस का नाम 'घटपर्णी' रक्खा गया है । ये तूंबियाँ वस्तुतः इस पौधे के पत्रनाल के रूपान्तर के फलस्वरूप ही विकसित हुई हैं । इसका पता इन कपट-पात्रों को गौर से देखने पर तुरन्त ही लग जाता है । इन तूंबियों का आकार दस-पन्द्रह सेंटीमीटर से लेकर पचास सेंटीमीटर तक का पाया गया है और इसी अनुपात में उनके प्रवेशद्वार की चौड़ाई भी दस-बारह से बीस-पचीस सेंटीमीटर तक की नापी गयी है ! कहते हैं, सबसे बड़े आकार की तूंबियों की समाई तो यहाँ तक की होती है कि उनमें बहुत आसानी से कबूतर जैसा कोई पक्षी अथवा एक बड़ा-सा चूहा समा सकता है ! देखने में ये तूंबियाँ बत्तखबेल के पुष्प-सी प्रतीत होती हैं । उन पर चटकीली धारियाँ एवं पत्तियाँ पड़ी रहती हैं, जिनसे पतिंगे उन्हें फूल

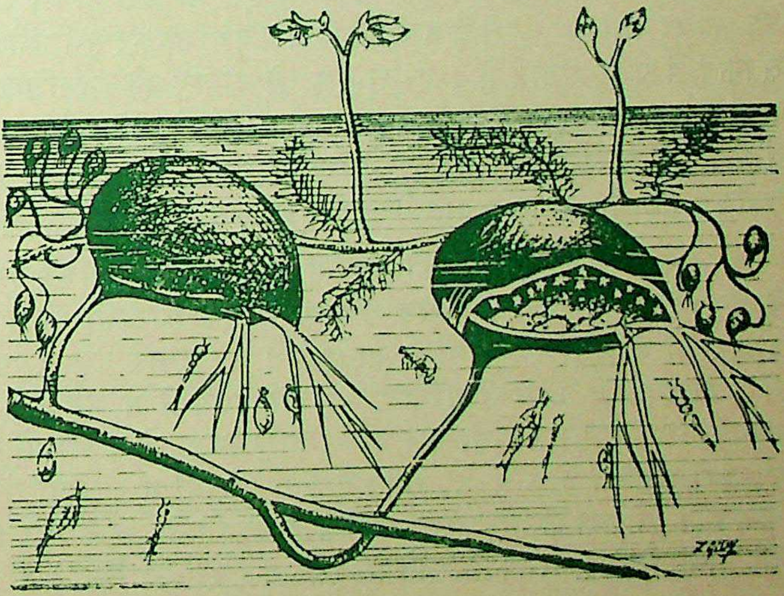

पुटकी (ब्लैडरवर्ट) नामक सुप्रसिद्ध कीटाशी जलपौधे की थैलियों की परिवर्धित छवि––(बाईं ओर) बाहरी दृश्य; (दाहिनी ओर) भीतरी छवि, जो थैली की बाजू को काटकर दरसाई गई है ।

समझकर सहज ही धोखे में आ जाते हैं। इन कपट-पात्रों के मुँह पर ढक्कन जैसा एक छोटा-सा CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh पत्ता इस प्रकार से ऊपर उठा हुग्रा-सा संलग्न रहता है, मानो वह पुष्प का दलचक्र हो। इस पर भी ग्राकर्षक चित्तियों एवं धारियों की काफी सजावट देखने को मिलती है। यह सारा स्वाँग इस कपटी पौधे ने केवल इसी एक उद्देश्य को लेकर किया है कि भोले-भाले कीट उसे पुष्प समझकर मधु के लोभ में उसके समीप ग्रायें ग्रौर ग्रन्त में उसके घातक चंगुल में फंस जायें।

ग्रब इस कपट-पात्र की भीतरी झाँकी ग्रौर उसकी शिकार करने की विशिष्ट प्रणाली पर भी जरा गौर करो। जैसा कि पृ० ५७ के चित्र में दिग्दर्शित घटपर्णी की तूंबियों की बाजू से काटकर दिखायी गयी छवि से स्पष्ट है, इन कपट-पात्रों की भीतरी दीवार पर नोकदार काँटिये या ग्रँकुसी की शक्ल के नीचे की ग्रोर झुके हुए ग्रनेक रोम पंक्तिबद्ध झालरों में सजे रहते हैं। साथ ही उनके तलभाग में एक प्रकार का क्षारीय द्रव सुराही के पानी की तरह भरा रहता है। उधर तूंबी के ढक्कन के भीतरी पृष्ठ पर तथा उसके प्रवेशद्वार की कोर पर बहुत-सी मधु-ग्रंथियां होती हैं, जिनसे मीठा शहद रिसकर बहता रहता है। तूंबी की भीतरी दीवार ग्रत्यन्त चिकनी ग्रौर फिसलाऊ होती है तथा उसके प्रवेश-द्वार का ऊपरी किनारा काफी ढलुग्रा तथा रपटानेवाला होता है। ग्रब होता यह है कि ज्योंही कोई ग्रनजान कीट-पतिंगा बहते हुए मधु से लुभाकर तूंबी के द्वार की ग्रोर ग्रामादा होता है, वह उसकी चिकनी सतह तथा फिसलाऊ ढलान के कारण सरसराते हुए एकदम तूंबी के भीतर की ग्रोर तेजी से ढुलकने लगता है! देखते-देखते वह बेचारा नीचे के जलकुंड में जा गिरता है ग्रौर इस ग्रनायास की विपदा से भौंचक्का-सा होकर उस तरल द्रव में डूबने-उतराने लगता है! ग्रधिकतर तो यही होता है कि इस प्रकार ग्रा फँसा जीव कुछ देर तक हाथ-पैर मारने के बाद शीघ्र ही दम तोड़ देता है। परन्तु कभी-कभी कोई साहसी प्राणी ऐसे भी होते हैं, जो उस मृत्युकुंड से बाहर निकलने की भरपूर कोशिश करते हैं। वे पानी से ऊपर उठकर तूंबी की दीवार पर चढ़ने के लिए पूरी ताकत से ज़ोर लगाते हैं। परन्तु एक तो दीवार की ग्रत्यधिक चिकनाई, दूसरे एक के बाद एक कतार बाँधे ग्राड़ में खड़ी ग्रंकुशधारी रोमों की पंक्तियाँ उनके सभी प्रयत्नों को बेकार कर देती ह। ग्राखिरकार हारकर वे ग्रभागे उस मृत्युकुंड में ही साँस तोड़ देते हैं, जहाँ उनके कलेवर सड़-गलकर इस दानवीय पौधे का ग्राहार बन जाते हैं।

पुटकी—कपट-पात्रों की मदद से शिकार को फाँसकर गुजारा चलानेवाले वनस्पतियों के समाज में, घटपर्णी से होड़ बदनेवाला एक कीटाशी पौधा मीठे पानी के तालाबों ग्रौर पोखरों में ग्राम तौर पर पाया जाता है। यह हमारे देश में 'पुटकी' तथा पाश्चात्य दुनिया में 'ब्लैडरवर्ट' के नाम से मशहूर है। इस जलपौधे में जड़ें नहीं होतीं। उसका कलेवर एक प्रकार की महीन सूत जैसी पत्तियों के जाल के सहारे जलाशयों के तलभाग ग्रथवा पानी की सतह से कुछ ही नीचे तैरता रहता है। ये पत्तियाँ मूल टहनी से ग्रनेकानेक शाखा-प्रशाखाग्रों के रूप में दूर तक फैलती चली जाती हैं। ग्रन्य ग्रनेक जलपौधों की तरह इस पौधे के पुष्पनाल भी पानी से ऊपर निकले रहते हैं (दे० पृ० ५६ का चित्र)।

ग्रब इस विचित्र कीटाशी पौधे के शिकार करने के ढंग का भी वृत्तान्त सुनो! इस काम के लिए इसकी शाखा-प्रशाखाग्रों पर ग्रनेक नन्हीं-नन्हीं कपट-थैलियों का जमघट-सा लगा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहता है, जिनका घेरा दो-तीन मिलीमीटर से लेकर पाँच-छः मिलीमीटर तक का होता है। पिलौंहे हरे रंग की ये थैलियाँ इस पौधे में वस्तुतः पत्तियों के रूपान्तर से ही विकसित हुई हैं ग्रौर घटपर्णी की तूंबियों की तरह इनका भी एकमात्र प्रयोजन नन्हें-नन्हें कीटों को धोखे से फँसाकर उनके कलेवरों के नाइट्रोजनीय पोषक द्रव्य से ग्रपनी उदर-पूर्ति करना है। इन सूक्ष्म थैलियों की रचना करने में कलाकार प्रकृति ने ग्रपनी कारीगरी की बारीकी का सचमुच कमाल कर दिखाया है। इनका पृष्ठभाग कुछ उभरा हुग्रा-सा रहता है ग्रौर बगल का हिस्सा चपटा। फलतः फूलकर उदरभाग की समाई इतनी हो गयी है कि उसमें फाँसे गये कई कीड़े एक साथ बखूबी समा सकें। इस ग्रद्भुत कपट-थैली का मुँह ऊपर की ग्रोर रहता है। वह सुई के छेद जैसा एक ग्रति सूक्ष्म द्वार होता है, जिसमें से पाँच-सात नोकीले रोम बाहर की ग्रोर निकले रहते हैं। इस प्रवेशद्वार का निम्न ग्रोष्ठ ऊपरी ग्रोष्ठ से ग्रधिक मोटा तथा गद्दीदार होता है। उधर ऊपरी ग्रोष्ठ से एक झिल्लीनुमा परदा-सा लटकता रहता है, जो थैली के मुँह को किसी नली की 'वाल्व' के कपाट की भाँति बन्द किये रहता है। जब मौत का मारा कोई जलकीट इन कपट-थैलियों में से किसी के मुख के समीप ग्रा पहुँचता है, तो जैसे ही उसका शरीर थैली के बाहर निकले हुए रोमों को छूता है, एक विचित्र हरकत होती है, जिससे ऊपरी ग्रोठ से संलग्न परदा कुछ भीतर की ग्रोर दब जाता है। भोला कीट स्थान पाकर ग्रधिक ग्रागे बढ़ता है ग्रौर उसके दबाव से परदा इतना ग्रधिक पीछे खिसक जाता है कि थैली का द्वार खुल जाता है एवं कीड़ा भीतर जा पहुँचता है। तभी पल भर में ही उक्त परदा पलटकर खट से पुनः ग्रपनी पूर्वस्थिति पर ग्रा जाता है, जिससे कि कीड़े के लिए बाहर निकलने का ग्रब कोई उपाय नहीं रह जाता। वह उस कपट-थैली में पूर्णतया कैद हो जाता है ! इसके बाद कहानी को दोहराने की ग्रावश्यकता ही क्या है ? इस बन्दी कीट का भी वही हाल होता है, जो घटपर्णी, कपाटपर्णी या बड़ा झंगी जैसे मांसाहारी पौधों के चंगुल में फँसे शिकार का हुग्रा करता है——वह दम तोड़कर पौधे का ग्राहार बन जाता है।

कुम्भपर्णी——कपट-पात्रों की योजना करके कीड़ों का शिकार करनेवाले पौधों की जमात में 'कुम्भकर्णी' (सिफेलोटस) ग्रौर 'पर्याणपर्णी' (सेरासीनिया) नामक दो तिकड़मी शिकारी इस लिहाज से निराले हैं कि उन्होंने ग्रलग से तूंबियों, थैलियों ग्रादि को लटकाने के झमेले में पड़ने के बजाय ग्रपनी पत्तियों को थोड़े से रद्दोबदल द्वारा एक प्रकार के कपट-यंत्रों में परिणत करके काम चलाने का सीधा रास्ता निकाल लिया है। इनमें 'कुम्भपर्णी' के कपट-यंत्र पौधे के पुष्प-दण्ड के चारों ग्रोर निकली हुई पत्तियों के साये में इस तरह से समूह बाँधकर धरती पर सजे रहते हैं, जैसे कि मधु से भरे हुए दो-चार कलश या घड़े रक्खे हों ! इन कलश-रूपी कपट-पात्रों की रचना बहुत-कुछ घटपर्णी की तूंबियों जैसी होती है। इनके भी मुँह पर के ग्रधखुले पत्ती के ढक्कन पर चितकबरी चित्तियाँ बनी रहती हैं, जिससे कीट-पतिंगों को फूल का धोखा हो जाता है। इनके भी भीतरी पृष्ठ पर रोमपंक्तियों की बाधक कतारें बनी रहती हैं ग्रौर दीवार इतनी ग्रधिक चिकनी तथा फिसलाऊ होती है कि एक बार कोई ग्रभागा कीड़ा उस पर ग्राया नहीं कि सरसराते हुए उसे नीचे के मृत्युकूप में पहुँचकर ही रुकना पड़ता है। इन कपट-कुंभों में भी घटपर्णी की तरह तरल द्रव्य का कुंड-सा भरा रहता है, जिसमें डूबकर ग्रन्त में कीट-पतिंगे सहज ही उसकी भोजन-सामग्री बन जाते हैं। यह पौधा ग्रॉस्ट्रेलिया में पाया जाता है तथा कद में करीब-करीब तीस सेंटीमीटर ऊँचा होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पर्याणपर्णी—इस कीटाशी की विशेषता इस बात में है कि अपने प्रयोजन की सिद्धि के लिए उसकी पत्तियों ने मुड़कर तथा फूलकर ऐसे चोर-गड्ढों का रूप धारण कर लिया है कि उनमें फँस जाने पर फिर कीट-पतिंगों के लिए बाहर निकल पाना असम्भव बन जाता है । इन कपटी पत्र-सम्पुटों के मुख पर कुछ ग्रंथियाँ होती हैं, जिनमें से रिसकर मीठा मधु शिकार को लुभाने के लिए चमचमाता रहता है । ये कपट-पात्र भी ऐसा रंग-बिरंगा छद्मवेश धारण किये रहते हैं कि पौधे उन्हें पुष्प की पंखुड़ियाँ समझ उन पर बेखटके टूट पड़ते हैं । परन्तु जब वे उनके मुख पर पहुँचते हैं, तो वही धोखाधड़ी का खेल पुनः जारी हो जाता है, जिसका परिचय हम घटपर्णी और कुम्भपर्णी के कपट-यन्त्रों के विवरण में पहले तुम्हें दे चुके हैं ! यहाँ भी इन चोर-गड्ढों की भीतरी दीवार एकदम चिकनी होती है तथा उन पर रोमों का ऐसा जमाव होता है कि शिकार सरसराते हुए नीचे के अंधकूप में जा गिरता है ! यदि वह पुनः वापस ऊपर आने का प्रयत्न करता है, तो एक तो फिसलाऊ दीवार ही उसका प्रयास विफल कर देती है, तदुपरान्त अँकुएदार रोमों की पंक्तियाँ उसे किसी भाँति भी आगे नहीं बढ़ने देतीं । घटपर्णी एवं कलशपर्णी की भाँति पर्यायपर्णी के कपट-पात्र के भी तले पर एक प्रकार के तरल द्रव्य का कुंड-सा भरा रहता है । उसमें डूबकर शिकार सड़-गल जाता है और इस प्रकार पौधे की भोजन-सामग्री बन जाता है ! पर्यायपर्णी की एक जाति में कपट-पात्र का चोर-गड्ढा घुमावदार पाया जाता है । इस योजना से शिकार के लिए उनके फंदे से छुटकारा पाना और भी कठिन हो जाता है । परन्तु एक तरह की मक्खी अपने विशेष प्रकार के पंजों की बदौलत इस भूलभुलैया में से सकुशल बाहर निकल आती है ! यह चतुर मक्खी इन शिकारी पौधों द्वारा पकड़े गये कीड़ों पर हाथ साफ करके ही अपना पोषण किया करती है ।

इन मांसाहारी पौधों की पाचन-क्रिया बहुत-कुछ जानवरों जैसी ही है !

वनस्पति-समाज के सामान्य रीति-व्यवहार को त्यागकर, आमिषभोजी जन्तुओं की जीवन-प्रणाली का अनुसरण करने पर इन विद्रोही पौधों की पाचन-क्रिया भी बहुत-कुछ बदलकर जानवरों जैसी ही हो गई है, यह विशेष रूप से गौर करने की बात है ! हम तुम्हें यह पहले ही बता चुके हैं कि इन शिकारी पौधों की सारी तिकड़म के पीछे एकमात्र प्रयोजन अपनी नाइट्रोजन विषयक भूख की पूर्ति करना है । चूँकि उक्त नाइट्रोजन तत्व फँसाए गए शिकार के कलेवर में विविध प्रोटीनों के रूप में ही उपलब्ध होता है, अतः यह जरूरी है कि जिस तरह से आमिषभोजी प्राणी अपने आहार में के प्रोटीनों को 'प्रोटिएज' नामक ऐन्जाइम की क्रिया से पचाकर उपयोग में लाने योग्य बनाते हैं, उसी तरह से ये पौधे भी कर सकें ! तुम्हें यह जानकर हैरानी होगी कि इन तिकड़मी पौधों ने धीरे-धीरे जानवरों की तदबीर अपनाकर इस संबंध में अपने आपको पूर्णतया समर्थ बना लिया है, जिससे कि उनके शिकार-यंत्रों में विद्यमान ग्रंथियाँ सचमुच ही ऐसे रस उत्पन्न करने की योग्यता से संपन्न हो गई हैं, जिनमें प्रचुर मात्रा में 'प्रोटिएज' मौजूद होता है ! इस ऐंजाइम की सहायता से ये पौधे शिकार के मांस-मज्जा के प्रोटीनों के अणुओं को तोड़कर विभिन्न 'एमिनो अम्लों' में परिणत कर लेते हैं और इस प्रकार उन्हें यथेच्छ मात्रा में आवश्यक नाइट्रोजन मिल जाती है ! *

*** इस प्रकरण में वर्णित कीटाशी पौधों के नामकरण एवं विवरण के लिए लेखक ने अपने ही द्वारा सम्पादित 'हिन्दी विश्व-भारती' नामक प्रसिद्ध ज्ञानकोश की तत्सम्बन्धी सामग्री से प्रचुर सहायता ली है ।**

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वनस्पतियों का साम्राज्य केवल स्थलमंडल तक ही सीमित नहीं है। उसका दायरा जलमंडल के अंचल में भी दूर-दूर तक एवं काफी गहराई तक फैला हुआ है। इस बात का संकेत हम तुम्हें प्रकृति की महान् वाटिका का परिचय कराते समय शुरू ही में दे चुके हैं। भला, महासागरों के उदर में स्थित कुदरत की उक्त गुप्त वाटिका में किस तरह के वनस्पति लहलहा रहे हैं? वे धरातल पर पनपनेवाले हमारे सुपरिचित पेड़-पौधों से मिलते-जुलते हुए हैं या उनसे सर्वथा भिन्न और निराले हैं? क्या हमारे लिए उनकी कोई उपयोगिता भी है? आओ, संक्षेप में इन प्रश्नों का समाधान खोजें।

सागर के अंचल में भरे पड़े सूक्ष्मातिसूक्ष्म वनस्पति—'डायटोम'

वनस्पति-संसार की वर्ण-व्यवस्था एवं परिवार-उपपरिवारों का खाका पेश करते हुए पिछले पृष्ठों में 'एल्जी वर्ग' के अन्तर्गत सम्मिलित अनेक जाति के एककोशिक एवं बहुकोशिक क्षुद्र पौधों का हवाला हम दे चुके हैं। इन शैवालों में से बहुतों ने सागर को ही अपना मुख्य आवासस्थान बना रक्खा है। इनमें 'डायटोम' के नाम से पुकारे जानेवाले अत्यन्त निचली श्रेणी के एककोशिक वनस्पति न केवल तादाद और परिमाण के लिहाज से वरन् प्राचीनता की दृष्टि से भी अन्य सभी समुद्री पौधों के अग्रणी कहलाने के अधिकारी हैं। ये शैवाल इतने अधिक सूक्ष्म होते हैं कि उनका पता केवल सूक्ष्मदर्शक यंत्र से देखने पर ही लग पाता है। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, इन नन्हें वनस्पतियों के कलेवर भाँति-भाँति के सुन्दर डिजाइनों के होते हैं, जिनकी सूक्ष्मदर्शी यंत्रवाली झाँकी सहज ही कारीगर जौहरियों द्वारा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बारीकी से तराशे गए रत्नों की याद दिलाने लगती है। यदि किसी की ग्राकृति गोल देख पड़ती है, तो किसी की अंडाकार है ! कोई सितारों जैसा जान पड़ता है, तो कोई दूज के चाँद-सा ! किसी ने त्रिभुज की शक्ल अपना रक्खी है, तो कोई नौका की ढब दरसा रहा है ! उनकी उक्त संतुलित सुघड़ रचना देखकर यही लगता है कि मानो सुनिश्चित साँचों में ढालकर ही वे रचे और गढ़े गए हैं।

इन एककोशिक शैवालों का कलेवर 'कैप्स्यूल' की भाँति एक-दूसरे में एकदम फिट बैठ जानेवाले दो हिस्सों द्वारा रचित होता है और उनकी दीवार 'सिलिकन ऑक्साइड' नामक रासायनिक यौगिक से संसेचित रहती है। हमारी सुपरिचित बालू या रेत का निर्माण इसी रासायनिक द्रव्य से हुआ है। तुम्हें यह जानकर हैरानी होगी कि यह सूक्ष्मातिसूक्ष्म वनस्पति निज जीवनलीला समाप्त करते समय, अपने इन सिलिकायुक्त कलेवरों के अवशेषों के अंबार लगाकर, विगत करोड़ों-अरबों वर्षों से सैकड़ों मीटर मोटी सिलिका की तहें रचता चला आ रहा है ! सिलिका की ४०० मीटर मोटी ऐसी एक पर्त संयुक्त राज्य (अमेरिका) के केलिफोर्निया प्रदेश में लगभग बारह वर्ग-किलोमीटर क्षेत्र में फैली पाई गई है। जहाँ कहीं समुद्र हट चुका है, वहाँ ऐसी सिलिकन-पर्तें खुल गई हैं। उक्त जगहों पर खान खोदकर उक्त मूल्यवान् खनिज खोद लिया जाता है। इस पदार्थ का उपयोग विस्फोटक डायनामाइट के निर्माण, साथ ही मदिरा, पेट्रोलियम फलों के रस, शर्बत, ओषधियों आदि के छन्ने बनाने में कसरत से होता है। इस प्रकार यह नन्हा-सा वनस्पति भी हमारे उद्योग-धंदों में बड़े महत्व का योगदान दे रहा है।

परन्तु इसकी महिमा केवल इसी एक बात को लेकर ही नहीं है। वस्तुतः जिस तरह समस्त स्थलवासी प्राणी (चाहे वे वनस्पतिभोजी हों या मांसाहारी) परोक्ष या अपरोक्ष भाव से अपने अस्तित्व और भरण-पोषण के लिए पेड़-पौधों पर ही निर्भर हैं, उसी प्रकार से सागर में रहनेवाले अधिकतर जीव-जंतु बुनियादी तौर पर अपने आहार के लिए इस नन्हें-से शैवाल के अगाध ऋणी हैं। कारण, वही उन छोटी-छोटी सीपियों और मछलियों आदि का प्रिय भोजन है, जिनका शिकार करके बड़े जलजीव अपना गुजारा करते हैं। एल्जी-वर्ग के सभी सदस्यों की भाँति इस नन्हें शैवाल में भी 'क्लोरोफिल' (पर्णहरिम) रहता है, जिसकी मदद से वह 'फोटोसिन्थेसिस' (प्रकाश-संश्लेषण) की जटिल क्रिया करने में समर्थ होता है। जैसा कि आगे चलकर तुम्हें ज्ञात होगा, इस क्रिया का पौधों द्वारा खाद्य पदार्थों के निर्माण की प्रक्रिया से गहरा सम्बन्ध है। क्लोरोफिल की मौजूदगी के कारण ही अन्य हरित शैवालों की भाँति 'डायटोम' भी हरी झाँई झलकाते हैं, पर साथ ही साथ उनके वर्ण में एक प्रकार का भूरा कत्थई रंग भी मिश्रित रहता है। सबसे अद्भुत तो होती है इन सूक्ष्म वनस्पतियों की प्रजनन-क्रिया ! वे प्रायः सरल 'कोशिका-विभाजन' (अर्थात् एक कोशिका के विभक्त होकर दो कोशिकाओं में बदल जाने की विधि) द्वारा ही अपना वंश-विस्तार करते हैं। इस सम्बन्ध में भी अधिक जानकारी तुम आगे चलकर पा सकोगे।

कतिपय खतरनाक समुद्री शैवाल

तुमने भूगोल की पुस्तकों में अफ्रीका और एशिया महाद्वीप को एक-दूसरे से अलग करनेवाले सुप्रसिद्ध 'लाल सागर' का नाम अवश्य पढ़ा होगा। परन्तु शायद तुम्हें यह बात

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नहीं मालूम होगी कि यह समुद्र 'लाल सागर' क्यों कहलाता है ! हम तुम्हें बता दें कि इसका कारण उसमें लाल रंग के कुछ अति सूक्ष्म शैवालों की बहुत अधिक मात्रा में उपस्थिति है, जिनकी वजह से कभी-कभी उसका पानी सचमुच ही लाल दिखाई देने लगता है ! इस समूह के शैवाल यद्यपि समुद्री जीव-जन्तुओं की खाद्य-पूर्ति के लिहाज से उतना ही महत्व रखते हैं, जितने कि पूर्वोल्लिखित 'डायटोम', तथापि उनमें से कुछ खतरनाक भी हैं । अतः जब कभी उनकी संख्या सहसा बहुत अधिक बढ़ जाती है, तो मछलियाँ आदि जीव लाखों की संख्या में मर जाते हैं ! 'जिम्नोडिनियम ब्रेविस' नामक एक रक्तवर्ण सूक्ष्म शैवाल ऐसा ही खतरनाक पौधा है । उत्तरी अमेरिका की फ्लोरिडा-खाड़ी में कभी-कभी इस शैवाल की बढ़ोतरी से समुद्र मृत जलजीवों के शवों से पटा हुआ-सा देखा गया है । जब ऐसी 'लाल बाढ़' आती है, तो समुद्रजल में प्रति लीटर पानी में चार करोड़ तक ऐसे वनस्पतियों का जमाव हो जाता है ! इसी समूह के अन्य एक सदस्य 'नॉक्टील्यूका' नामक शैवाल की विशेषता यह है कि यदि वह छेड़ दिया जाय, तो एक तरह की ठंढी रोशनी से जगमगाने लगता है ! इस वर्ग के सभी वनस्पतियों की बाजू में दो 'कशाभ' (फ्लैजेला) होते हैं, जिन्हें मरोड़कर ये पौधे मजे में पानी में तैरा करते हैं । उन्हें इस तरह जल में सरसराते देखकर भ्रम होने लगता है, मानो वे जन्तु हों !

विशालकाय बभ्रु शैवाल, जिनकी एक जाति तीन सौ मीटर तक लम्बी पाई गई है !

अब तक हमने तुम्हें समुद्री पौधों के कतिपय सूक्ष्मदेही नमनों की ही जानकारी कराई है, जबकि महासागर के अंचल में ऐसे-ऐसे लंबतड़ंगे वनस्पति भी विद्यमान हैं, जिनकी शाखाएँ सैकड़ों मीटर लंबी हैं तथा सागरजल के नीचे जिनके ठट्ट जंगल छाए हुए हैं । यह गौरव विशेष रूप से भूरे रंग के बभ्रु शैवालों की एक जाति को प्राप्त है, जिसे 'मेक्रोसाइस्टिस पाईरीफेरा' के नाम से पुकारा जाता है । इस शैवाल का डंठल मुटाई में तो हमारी तर्जनी उँगली से अधिक नहीं होता, परन्तु उसकी लम्बाई तीन सौ मीटर तक की पाई गई है ! इसका तो अर्थ यह हुआ कि सिक्वोइया वृक्षों जैसे दुनिया के सबसे ऊँचे पेड़ों से भी लगभग तिगुनी लम्बाई के उनके ये कलेवर है ! ये लंबतड़ंग पौधे दक्षिणी

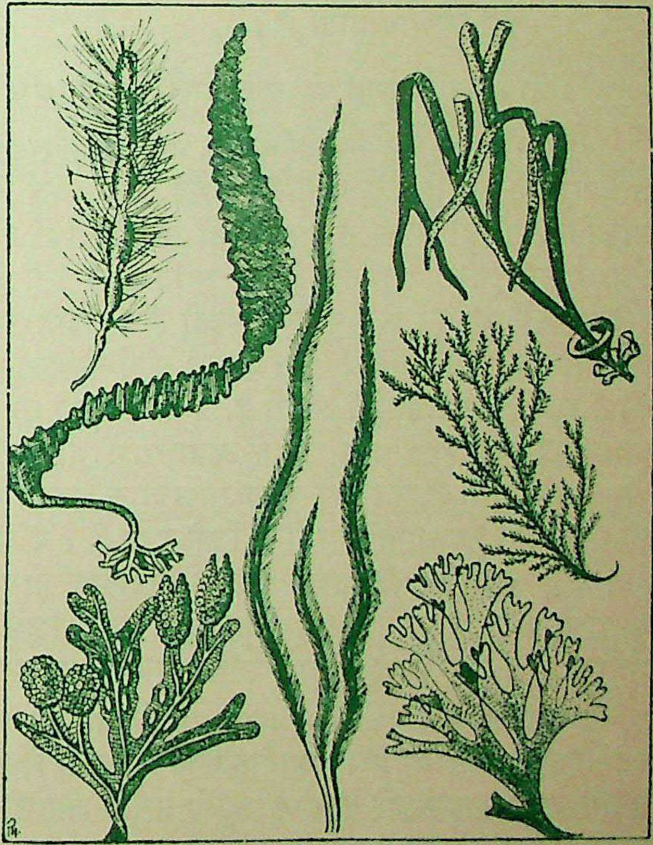

समुद्री शैवालों के चित्र-विचित्र रूप—ये पौधे लंबी घास जैसे, फीते की शक्ल के अथवा फर्न, थूहड़, नागफनी जैसे, विविध आकृतियों के पाए जाते हैं । इनके रंग भी भूरे, लाल, पीले, बैंजनी, नारंगी आदि विविध वर्णों की छटा बरसाते हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
समुद्रक्षेत्र में प्रचुरता से व्याप्त हैं और इनसे 'एल्जिन' नामक एक उपयोगी कलिल (कोलायड) प्राप्त किया जाता है। यह पदार्थ आइसक्रीम, चाकलेट, टूथपेस्ट एवं प्रसाधन-सामग्री के निर्माण में बहुतायत से काम में लाया जाता है।

इसी समूह का 'लेसोनिया' नामक अन्य एक समुद्री पौधा डीलडौल में कई एक सामान्य वृक्षों से होड़ बद सकता है—उसका तना मनुष्य की जाँघ से भी अधिक मोटा होता है। शायद इन शैवालों के अजगर जैसे तनों को समुद्रजल के नीचे फैले देखकर ही प्राचीन नाविकों को विशालकाय सागर-सर्पों का भ्रम हुआ होगा, जिनके विवरणों से लोकगाथाएँ भरी पड़ी हैं! तुम्हें यह जानकर कुतूहल होगा कि इन बभ्रु शैवालों में से कई ऐसे भी हैं, जिनका डीलडौल कुछ सेंटीमीटर से अधिक नहीं होता! यहाँ हम यह भी बता दें कि अटलांटिक महासागर के सारगासो समुद्र नामक चिरप्रशान्त क्षेत्र में लाखों वर्ग-किलोमीटर लंबा-चौड़ा जिस सेवार का जमघट लगा है, वह भी एक जाति का बभ्रु शैवाल ही है। इस वर्ग के अन्य प्रतिनिधि शैवाल 'लेमिनारिया' तथा 'फ्यूकस' नामक पौधे हैं, जिनकी प्रमुख विशेषता है उनमें नौकाओं एवं जहाजों के लंगरों जैसी पकड़-पट्टियों (होल्डफास्ट) की विद्यमानता! इन होल्डफास्टों की मदद से ये शैवाल पानी के भीतर की चट्टानों से मजबूती से चिपके रहते हैं, यद्यपि इनमें जड़ों का सर्वथा अभाव होता है।

'रोडोफायटा' समूह के लाल, पीले, नारंगी और बैंजनी रंग के चित्र-विचित्र पौधे

सागर के अंचल में पनपनेवाले शैवालों में, तड़क-भड़क और दर्शनीयता के नाते, सबसे अधिक आकर्षक हैं 'रोडोफायटा' समूह के वे चित्र-विचित्र पौधे, जोकि क्या रंग और क्या आकृति दोनों ही बातों में अन्य सभी समुद्री पौधों को मात करने की क्षमता रखते हैं। ये शैवाल लाल, पीले, नारंगी, बैंजनी आदि सभी रंगों के पाए जाते हैं और इनकी शाखें तथा पत्तियाँ भाँति-भाँति के रूप लिये रहती हैं। उदाहरणार्थ, किसी की पत्तियाँ लंबे फीतों जैसी जान पड़ती हैं, तो किसी की फर्न जैसी। कोई नागफनी थूहड़ जैसा स्वाँग धरे रहते हैं, तो किसी को देखकर ऐसा भ्रम होने लगता है, मानो वह मूँगे या स्पंज जैसे वृक्षाकार समुद्री जीवों का ही सगा भाई-बन्धु हो! इस वर्ग के शैवालों में भी पूर्वोल्लिखित बभ्रु शैवालों जैसे लंगरनुमा होल्डफास्ट होते हैं, जिनकी मदद से जड़ों के अभाव में भी ये समुद्र की लहरों और धाराओं का वेग सहते हुए अपने स्थानों में टिके रहते हैं। ये शैवाल प्रायः गहरे समुद्रों में ही पाए जाते हैं। इनके लाल रंग का कारण 'फाइकोएरिथ्रिन' नामक एक रक्तवर्ण द्रव्य का उनमें अत्यधिक मात्रा में पाया जाना है। यह द्रव्य उनके क्लोरोफिल (पर्णहरिम) को दबाए रहता है। इन शैवालों से 'ऐगार' नामक एक अति उपयोगी रासायनिक द्रव्य निकाला जाता है।

लाल शैवालों की कुछ जातियों को जापान, हवाई द्वीप तथा स्कॉटलैण्ड के निवासी बड़े चाव से खाते भी हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि मनुष्य के खाद्य-भंडार की दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही कमी की बहुत-कुछ पूर्ति समुद्री शैवालों को अपनी भोजन-सामग्री में सम्मिलित करके की जा सकती है। कारण, इनमें हमारे शरीर के पोषण के लिए आवश्यक प्रोटीन आदि खाद्य तत्व प्रचुर मात्रा में विद्यमान हैं। ताज्जुब नहीं कि भविष्य में जब पृथ्वी पर खाद्य-समस्या विकराल हो उठेगी, तब संभवतः ये शैवाल ही आड़े समय में काम आकर हमारी रक्षा करेंगे!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फूलों का बखान करते समय, उनकी सुन्दरता और सुगंध के बारे में दलीलें पेश करने की भी क्या किसी को आवश्यकता हो सकती है? उनकी नयनाभिराम छबि और मनमोहक खुशबू से तो बच्चों से लेकर बूढ़े तक सब कोई सुपरिचित हैं तथा उन्हें सामने पाकर सबकी निगाह एक अनूठे आकर्षण से खिचकर टटक जाती है! यद्यपि यह सच है कि पौधे के अन्य अंगों की तुलना में फूल उपयोगिता की तराजू पर उतने भारी नहीं उतरते, तथापि वनस्पति-जगत् के उपहारों में मनुष्य ने सबसे अधिक प्यार और सम्मान देकर किसी को अपने माथे पर चढ़ाया है, तो वह फूल ही है। कवियों और कलाकारों के लिए तो फूल सुकुमारता, प्रफुल्लता, आशा, मुसकान, ताजगी और पवित्रता के प्रतीक जैसे हैं! प्रेमियों ने युगों से उनकी मालाएँ गूँथी हैं! भक्तजन उन्हें भगवान् के चरणों में अर्पित कर जीवन निहाल मानते हैं। और तो और, जब हम किसी सुन्दर मुखड़े को देखते हैं, तो उसकी उपमा खिले हुए पुष्प से ही देकर अपना अनुराग प्रकट करते हैं! ऐसी स्वर्गीय सुषमा की वस्तु की प्रशंसा किन शब्दों में कोई करे?

क्या तुम जानते हो कि प्रकृति ने पुष्पों को किस आशय से सजाया और महकाया है?

परन्तु कवियों एवं कलाकारों द्वारा युगों से प्रशंसित होकर भी, वनस्पति-जगत् में फूलों की उपज का वास्तविक प्रयोजन क्या है, इसकी यथार्थ जानकारी बहुत कम लोगों को होगी! किस आशय से प्रकृति ने उन्हें ये रंग-बिरंगी पोशाकें पहनाई हैं? किसलिए तरह-तरह की गंध उनमें भरी गई हैं? फिर कई पौधे यदि खिलकर फूलों की मुसकान दरसाते हैं, तो अन्य

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फूलों का राजा 'गुलाब', जिसकी खूबसूरती और खुशबू का मुकाबला पुष्प-समाज का अन्य कोई भी सदस्य नहीं कर सकता !

कई आजीवन मनहूस ही क्यों बने रहते हैं——वे फूलते क्यों नहीं ? हम तुम्हें बता दें कि इन प्रश्नों का उत्तर देना कवियों या कलाकारों के बस की बात नहीं। इनके समाधान का भार तो भगवती सरस्वती ने वैज्ञानिकों को ही सौंपा है, जो आजीवन अपने आपको इनके अध्ययन और जाँच-परख में खपाते रहते हैं। तो आओ, देखें कि इनकी कैसी तस्वीर वे हमारे आगे पेश करते हैं !

यह तो तुम्हें याद ही होगा कि पेड़-पौधों के समाज के चार प्रधान विभागों में से केवल अंतिम समूह 'स्पर्मेटोफायटा' (या 'फैनेरोगेमिया') के ही सदस्य पुष्पवाले होते हैं, शेष में फूल नहीं खिला करते। विज्ञान के आचार्यों का कहना है कि पौधों में पुष्पों का प्रादुर्भाव, विकास की पगडंडी पर आगे बढ़ने पर, प्रजनन-प्रणाली में उन्नति होने के परिणामस्वरूप ही हुआ है ! यदि फूल रंग-बिरंगी पोशाकों में सजकर, सुगंध बखेरते हुए, प्रकृति के आँगन में उतरे हैं तो हमारे मनबहलाव के लिए नहीं, वरन् स्वयं वनस्पति-समाज का ही एक महत्वपूर्ण काज साधने के लिए ! वह काज है——कीट-पतिंगों को अपनी ओर आकर्षित करके, उनकी मदद से उस 'संसेचन-क्रिया' की पूर्ति करना, जिस पर पौधों के वंश-विस्तार का सारा दारोमदार है ! इसी प्रयोजन से वे तड़कीले-भड़कीले रंगों की अपनी नुमाइश लगाकर, महक-महककर तितलियों और मधुमक्खियों को मधु तथा पराग की दावत दिया करते हैं। यह क्रिया किस प्रकार से सम्पन्न होती है, इसका हाल आगे चलकर तुम जान सकोगे ।

फूलवाले पौधों की दो लाख से भी अधिक बिरादरियाँ हैं !

जैसा कि वनस्पति-संसार के विभिन्न परिवार-उपपरिवारों की तालिका प्रस्तुत करते समय बताया जा चुका है, इस समय वैज्ञानिकों को फूलवाले पौधों की दो लाख से भी अधिक बिरादरियों की जानकारी प्राप्त है । यहाँ हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि पृथ्वी के दुर्गम अज्ञात स्थलों में अभी ऐसे कितने ही पौधे चुपचाप फूल रहे होंगे, जिनका कि पता पाना आज भी बाकी है ! ऐसे बृहत् समाज के सभी गिरोहों का लेखा-जोखा प्रस्तुत करना, भला इन गिने-चुने पृष्ठों के सीमित दायरे में क्योंकर सम्भव हो सकता है ? अतएव यहाँ हमें विशेष रूप से अपने देश के तथा कतिपय विदेशी पुष्पों के सबसे अधिक लोकप्रिय एवं प्रसिद्ध नमूनों के परिचय से ही संतोष करना होगा ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तो लो, पहले फूलों के रंगों की छटा देखो ! ग्राम तौर पर रंग हम लाल, पीला, नीला, हरा, नारंगी, बैंजनी, सफेद ग्रौर काला—इन प्रमुख वर्णों एवं चढ़ाव-उतार के क्रम से उनके मोतिया, गुलाबी, कुसुंभी, बसन्ती, ग्रासमानी, धानी, जामुनी, फालसी, ऊदा, सलेटी तथा श्याम ग्रादि हलके-गहरे रूपान्तरों में ही देखने को मिलते हैं । हम तुम्हें बता दें कि इनमें से कोई भी रंग ऐसे नहीं, जिन्हें फूलों ने ग्रपने चित्र-विचित्र परिधानों में न दरसाया हो ? बल्कि कई ने तो एक साथ ही विभिन्न रंगों की झाँइयों ग्रथवा छींटों की चित्रकारी से ग्रपने ग्रापको ऐसी बहुरंगी पोशाकों में सजाया है, जिनकी छबि के ग्रागे कलाकारों की तूलिका के चमत्कार भी फीके पड़ जाते हैं ।

तब उनकी ग्राकृतियों के ग्रलग-ग्रलग रूपों एवं डिजाइनों पर भी गौर करो ! यदि कोई सितारों जैसे हैं, तो कोई नगीनों जैसे ! किसी को देखकर तितलियों की ग्राकृति का भ्रम होता है, तो कोई बिल्ली जैसा चेहरा दरसाए हुए हैं ! कोई गेंद जैसे गोलमटोल हैं, तो कोई कुप्पियों जैसे फनलाकार हैं । किसी में चँवरनुमा सुन्दर कलगी सुशोभित है, तो कोई दूल्हे के सेहरे या राजाग्रों के मुकुट की-सी झाँकी भी निखारे हुए हैं ! फिर यदि कुछ ग्रकेले ही मुसका रहे हैं, तो दूसरे ऐसे हैं, जो गुच्छों या लड़ियों में पंक्तिबद्ध होकर ग्रनोखी व्यूह-रचना किए हुए देख पड़ते हैं ! यदि किसी में पाँच-चार या इससे भी कम पंखुड़ियाँ हैं, तो दूसरे कई ऐसे भी हैं, जिनकी पंखुड़ियाँ की संख्या सैकड़ों में गिनी जा सकती है तथा जिनमें एक-पर-एक ग्रनेक बाह्य दल छाए रहते हैं !

फिर इनके द्वारा महकाई जानेवाली गंध के बारे में तो कहना ही क्या है ! भला, कौन है, जो गुलाब ग्रौर मोगरा, चमेली ग्रौर नरगिस, कमल ग्रौर कुमुदिनी, केवड़ा ग्रौर चम्पा, कदंब ग्रौर मौलसरी तथा रात की रानी ग्रौर शेफालिका (हरसिंगार) जैसे सर्व-विदित खुशबुदार फूलों की मन हरनेवाली महक का कायल न हो ! ऐसे ही पुष्पों से तो हमारे ग्रधिक-तर इत्रों की सुगंध चुराई गई है ! परन्तु तुम कहीं यह भी न समझ बैठना कि सभी फूलों की गंध मधुर ही होती है ! वस्तुतः कई फूल ऐसे भी हैं, जिनकी बू को हम कदापि बर्दाश्त नहीं कर सकते !

कमल का भव्य पुष्प भारतीय संस्कृति का प्रतीक माना जाता है । यह बड़े ग्राकार का फूल केवल दर्शनीय ही नहीं, बल्कि मीठी सुगन्धवाला भी होता है !

फूलों का राजा 'गुलाब', जिसकी सुन्दरता और सुगंध का कोई सानी नहीं !

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आओ, अब पुष्प-समाज के कतिपय सबसे अधिक सम्माननीय एवं सुविख्यात प्रतिनिधियों का परिचय प्राप्त करें, जिससे हम यह जान सकें कि प्रकृति ने फूलों की सृष्टि में किस दर्जे तक का कमाल कर दिखाया है ! सबसे पहले हम अपने सुपरिचित 'गुलाब' को ही लेते हैं, जो अपनी लाजवाब खुशबू और लासानी खूबसूरती के नाते सचमुच ही 'फूलों का राजा' कहलाने का हकदार है। यह सुन्दर पुष्प वैसे तो (जैसा कि इसके नाम ही से प्रकट है) मुख्यतया गुलाबी अथवा हल्के लाल रंग का होता है। परन्तु तरह-तरह के प्रयोगों द्वारा कलम लगाकर अब उसकी कई नई नस्लें तैयार कर ली गई हैं, जिसके फलस्वरूप श्वेत, पीले, गहरे लाल, बैंजनी, यहाँ तक कि हरे, नीले और काले गुलाब भी उपजाए गए हैं (यद्यपि वास्तव में उनके रंग शुद्ध हरे, नीले या काले कभी भी नहीं होते)। जैसा कि 'एंजियोस्पर्म्स' नाम आवृतबीज सपुष्पक पौधों की परिवार-तालिका में तुम्हें पहले बताया जा चुका है, गुलाब का कँटीला पौधा उक्त कुटुम्ब की द्विबीजपत्री बिरादरी के एक ऐसे वनस्पति-कबीले का सदस्य है, जिसमें सेब, नाशपाती, आड़ू, आलूबुखारा, बादाम, खुबानी और चेरी जैसे सुप्रसिद्ध मेवों के वृक्ष भी सम्मिलित हैं। इस कबीले में (जिसका निर्धारण उसके अन्तर्गत शरीक पौधों की पुष्प-रचना की समानता के आधार पर किया गया है) तीन हजार से भी अधिक जाति के पौधे हैं। इस बिरादरी की पहचान यह है कि इनके फूलों में पाँच पंखुड़ियाँ, पाँच बाह्य दल तथा अनेक पुंकेसर हुआ करते हैं। स्त्री-केसर विभिन्न जातियों में एक या इससे अधिक हो सकते हैं।

गुलाब उत्तरी गोलार्द्ध के शीतोष्ण प्रदेशों में प्रायः सर्वत्र होता है। वह काश्मीर, भूटान आदि पर्वतीय क्षेत्रों में वन्य दशा में भी पाया जाता है। भारतवर्ष में उसे बगीचों में लगाने का पुराने जमाने से ही प्रचलन है। एक मुस्लिम लेखक के अनुसार चौदहवीं शताब्दी ई० में गुजरात में सत्तर जाति के गुलाब उगाए जाते थे। स्वयं बाबर ने भी भारत में गुलाब होने का उल्लेख किया है, अतः जैसा कि कुछ लोगों ने भ्रम फैला रक्खा है, यह बात सही नहीं है कि गुलाब पहले-पहल मुगल बादशाहों द्वारा

बाग-बगीचों के फूलों का सरदार 'सूरजमुखी', जिसके बारे में यह प्रसिद्ध है कि सूर्यास्त होने पर वह अपना मुख झुका लेता है और सूर्य के उगते ही उसके दर्शनार्थ पुनः पूर्व दिशा के प्रति अभिमुख हो जाता है !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ईरान से लाया जाकर इस देश में प्रचलित किया गया था। संस्कृत के 'पाटलि' और 'शतपत्री' शब्द (जो गुलाब के ही पर्याय हैं) इस तथ्य की ओर भी अधिक पुष्टि करते हैं।

अपने अति सुहावने रंग, चिकनी कोमल पंखुड़ियों एवं मधुर सुगंध के लिए गुलाब संसार का सबसे अधिक लोकप्रिय पुष्प बन गया है। परन्तु उसकी कुछ ही जातियाँ भारतीय गुलाब की सुगंध का मुकाबला कर पाती हैं। इस पुष्प की कई दर्शनीय नवीन नस्लों में तो महक वस्तुतः होती ही नहीं। गुलाब का इत्र तो निकाला ही जाता है, उससे खुशबूदार गुलाबजल भी तैयार किया जाता है, यह तुम्हें विदित ही होगा।

हमारे बगीचों में आम तौर पर लगाए जानेवाले विदेशी पौधों में डहलिया के फूल निस्संदेह सबसे भव्य होते हैं, जैसाकि इस नमूने से स्पष्ट है!

गौरवशाली जलपुष्प 'कमल', जो भारतीय संस्कृति का प्रतीक माना जाता है

कौन भारतवासी ऐसा होगा, जिसके लिए 'कमल' एक अपरिचित शब्द हो? क्या धर्म और साहित्य तथा क्या कला और लोकजीवन, सब कहीं यह नाम हमारे यहाँ इतनी गहराई के साथ पैठा हुआ है कि वह एक प्रकार से भारतीय संस्कृति का प्रतीक-सा बन गया है। यद्यपि यह जलपुष्प आज उतनी प्रचुरता से देखने को नहीं मिलता, जैसा कि वह कभी रहा होगा, फिर भी उसकी महिमा और जनमानस पर अंकित गहरी छाप में किसी भी प्रकार का अन्तर नहीं आ पाया है—वह आज भी हमारा सबसे प्रिय और प्रतिष्ठित पुष्प है। वास्तव में वही इस देश का 'राष्ट्रीय पुष्प' कहा जा सकता है।

कमल झीलों, तालाबों एवं पुष्करिणियों में होनेवाले एक विचित्र जलपौधे का फूल है, जिसकी थाली जैसी गोलाकार पत्तियाँ लम्बे डंठलों के सहारे पानी से कुछ ऊपर उठी रहती हैं। ये पत्तियाँ प्रायः हाथ भर के घेरे की होती हैं और उनकी ऊपरी सतह बहुत चिकनी तथा चटक हरे रंग की होती है। कमल के फूलों का रंग प्रायः लाल, गुलाबी अथवा श्वेत होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर कुछ जातियाँ नील अथवा पील रंग की भी पाई गई हैं। इस सुहावने फूल में अनेक पंखुड़ियाँ तथा बाह्यदल होते हैं। पँखुड़ियों के बीच में पुंकेसरों से वेष्टित एक बड़ा छत्ता होता है, जिस पर मधु के लोभी भौंरे मँडराया करते हैं । पकने पर इसी छत्ते से कमल के बीजों की उत्पत्ति हुआ करती है। ये बीज 'कमलगट्टा' कहलाते हैं। इन लँबोतरे गोल बीजों को (जिनका छिलका पकने पर काला हो जाया करता है) भुनकर खाया जाता है । कमल की जड़ें या कमल-नाल (जिन्हें भसीड़ कहते हैं) काफी मोटी तथा भीतर से पोली होती है। इन्हें भी लोग बड़े चाव से खाते हैं । कमल-पुष्प से एक तरह की भीनी सुगन्ध निकला करती है, जो चित्त को प्रफुल्लित कर देती है। ये पुष्प सूर्योदय के साथ ही खिलते और सूर्यास्त होने पर संकुचित हो अपनी पँखुड़ियाँ समेट लेते हैं। भारत के अलावा कमल तिब्बत, चीन, साइबेरिया तथा दक्षिणी अमेरिका में भी होता है ।

'कुमुदिनी' या कोकाबेली नामक जलपौधा भी कमल की ही बिरादरी का वनस्पति है, जिसकी एक असाधारणतया बड़ी जाति की कई मीटर व्यासवाली पत्तियों तथा दो-ढाई हाथ घेराववाले विशाल पुष्पों का परिचय इससे पहले अन्य एक प्रकरण में हम तुम्हें दे चुके हैं । कुमुदिनी रात को ही खिला करती है । यह श्वेत, गुलाबी, लाल और बैंजनी नीले रंग की होती है । इसके बीज भुनने पर लावा जैसे हो जाते हैं। ये चाव से खाए जाते हैं।

सूरजमुखी, गेंदा, गुलदाउदी, डहलिया आदि दर्शनीय उद्यान-पुष्प

यदि तुम्हें कभी किसी ऐसे बड़े उद्यान में जाने का मौका मिला हो, जहाँ पर अधिकतर प्रतिनिधि फूलों के पौधे विद्यमान हों, तो तुम्हारा ध्यान सबसे पहले निस्संदेह सूरजमुखी, गेंदा, डहलिया और गुलदाउदी (क्रिसेन्थिमम) जैसे उन तड़कीले-भड़कीले पुष्पों के प्रति ही खिंचा होगा, जो अपने बड़े आकार, भव्य स्वरूप तथा मनमोहक चटक रंगों के कारण बाग-बगीचों के पुष्पों के सरदारों जैसे लगते हैं ! इनमें सूरजमुखी देखने में सबसे शानदार और गेंदा, डहलिया तथा गुलदाउदी सबसे अधिक सुहावने प्रतीत होते हैं । वनस्पति-विज्ञान के अनुसार इन सबके पौधे आवृतबीज द्विबीजपत्री समूह के अन्तर्गत एक ही विशाल खानदान के सदस्य माने जाते हैं, जिसे 'सूरजमुखी-परिवार' अथवा 'संयुक्त पुष्प-परिवार' की संज्ञा प्रदान की जाती है। इस कुटुम्ब में सूरजमुखी, गेंदा, डहलिया और गुलदाउदी (क्रिसेन्थिमम) के अलावा डेज़ी, ऐस्टर, ज़िनिया और मेरीगोल्ड की जाति के अनेकानेक दर्शनीय पुष्पों के पौधे भी सम्मिलित हैं। इस परिवार के फूलों की एक प्रमुख विशेषता यह होती है कि उनका पुष्प-क्रम एक बिम्ब की शक्ल लिये रहता है, जो वास्तव में तो अनेक अलग-अलग पुष्पों का समूह होता है, पर देखने में एक संघटित पुष्प-सा जान पड़ता

तुम्हें यह जानकर कुतूहल होगा कि नागफनी और थूहड़ की जाति के मरुभूमि के पौधों में भी इस तरह के सुन्दर फूल खिला करते हैं !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हमारे बाग-बगीचों में पाए जानेवाले कुछ प्रसिद्ध पुष्प—१. गेंदा; २. कदंब-पुष्प; ३. पोस्ते (अफ़ीम के पौधे) का फूल; ४. मार्श मेरीगोल्ड; ५. डेज़ी; ६. गुलदाउदी; ७. केतकी; ८. गुलखेरू।

है। इन फूलों में दलचक्र नलिकाकार अथवा पट्टाकार होते हैं और प्रत्येक की रचना पाँच पँखुड़ियों के संयोजन से हुआ करती है। सूरजमुखी जैसे पुष्पों में किनारे पर पट्टाकार किरण-पुष्पों तथा मध्य में नलिकाकार 'बिम्ब-पुष्पों' का ठट्ट लगा रहता है। उनमें प्रधान अक्ष का शिखर फैलकर बिम्ब का रूप धारण कर लेता है। बीज इसी बिम्ब में विकसित होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गेंदा और सूरजमुखी से हमारे देश के निवासी आम तौर पर सुपरिचित हैं; कारण, शहरी बाग-बगीचों के अलावा देहातों में भी घरों के आसपास की बगिया में बड़े चाव से ये उगाये जाते हैं। सूरजमुखी के फूल का घेराव लगभग एक बालिश्त होता है! कोशिश करने पर, इस भव्य पुष्प के हाथ भर व्यास तक के विशाल नमूने भी उपजाए जा सके हैं! पाश्चात्य देशों में इसकी खेती भी की जाती है; कारण, इसके बीज खाने योग्य होते हैं तथा उनसे तैल भी निकाला जाता है। सूरजमुखी के फूल की एक अनोखी विशेषता यह है कि वह सूर्यास्त होने पर झुक जाता है और सूर्योदय होने पर मानो सूर्य का दर्शन करने को पुनः अपना चेहरा पूर्वाभिमुख कर लेता है। गेंदे की अनेक जातियाँ पाई जाती हैं। उनमें केसरिया रंग का 'हजारी गेंदा', जिसमें अनगिनत पंखुड़ियाँ होती है, सबसे अधिक लोकप्रिय है। इस पुष्प में एक तरह की भीनी सुगंध भी होती है।

गुलदाउदी (क्रिसेन्थिमम) और डहलिया हमारे देश में विदेशों से लाए गए मशहूर फूलों के पौधे हैं। ये प्रायः गमलों में उगाए जाते ह। अपनी सुन्दर पुष्पव्यूह-रचना एवं नयनाभिराम रंगों के आकर्षण से ये फूल अधिकाधिक लोकप्रिय होते चले जा रहे हैं। हल्के पीले, मोतियाई, आसमानी एवं सफेद रंग के ये पुष्प शौकीनों के प्रयास से काफी बड़े आकार के तथा अत्यन्त भव्य शक्लों के उपजाये जाने लगे हैं। इनमें गुलदाउदी अति सुहावना पुष्प होता है। उसमें एक मीठी-सी खुशबू भी होती है, जो उसकी सुन्दर कटावदार पत्तियों से भी महकती रहती है। इस महासमूह के 'डेज़ी', 'ऐस्टर', 'ज़िनिया' और 'मेरीगोल्ड' (गेंदे की एक जाति) जैसे पूर्वोल्लिखित विलायती पौधे भी हमारे नगरों के बाग-बगीचों में इन दिनों बहुतायत से उगाए जाने लगे हैं। इनमें से कई पौधे इंगलैंड आदि देशों के जंगलों में वन्य दशा में भी उगते हैं। वसन्तकाल में एकाएक हज़ारों की तादाद में फूलकर वे जब वहाँ अपनी रंग-बिरंगी छटा छहराते हैं, तो पृथ्वी पर मानो स्वर्ग की-सी छबि दिखाई देने लगती है!

मोतिया बेला, चमेली, जूही, हरसिंगार, मौलसरी, चंपा आदि के सुगंधित पुष्प

जहाँ तक सौरभ या खुशबू का सवाल है, जैसी मीठी और सुहावनी सुगंध के फूल एशियाई देशों में मिलते हैं, वैसे पश्चिमी मुल्कों को नसीब नहीं हैं। यों योरप-अमेरिका में तरह-तरह के रंगों और डिजाइनों के पुष्पों का मेला लगा है, परन्तु उनमें मोगरा, चमेली और भारतीय गुलाब जैसे हमारे प्रसिद्ध खुशबूदार फूलों के साथ होड़ बदनेवाला कोई भी नहीं। और तो और, वहाँ पैदा किये जानेवाले अनेक रंगों के गुलाब भी केवल देखने में ही दर्शनीय होते हैं, उनमें से अधिकतर सुगन्ध से रहित हैं! इस नाते हमारा देश निश्चय ही अधिक भाग्यवान् है। यहाँ का सुविख्यात 'चैती गुलाब' तो अपनी मदमस्त कर देनेवाली महक के लिए जगद्प्रसिद्ध है ही; साथ ही सुगन्धित पुष्पों की किसी प्रतियोगिता में यदि हमारे मोतिया बेला (मोगरा) और चमेली जैसे नन्हें-से फूल भी उतर पड़ें, तो वे भी संसार भर में प्रथम श्रेणी के कीर्ति-पदक लेकर रहेंगे, इसमें सन्देह नहीं।

बेला या मोगरा हमारे बगीचों में कसरत से उगाया जानेवाला एक छोटा-सा पौधा होता है। उसमें डेढ़-दो सेंटीमीटर लम्बे एक पर एक चढ़ी हुई पँखुड़ियोंवाले सफेद रंग के बड़े सुन्दर फूल खिलते हैं। ये पुष्प जब बन्द कलियों के रूप में रहते हैं, तभी से उनमें अत्यन्त मीठी खुशबू महकने लगती है! बेले की मोतिया, मदनबाण और मोगरा ये तीन प्रमुख

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जातियाँ हैं। मध्य प्रदेश की प्राचीन नगरी उज्जयिनी के आसपास मोगरा बहुतायत से उगाया जाता है। वहाँ इसकी बड़ी ही सुन्दर पुष्पमालाएँ गूँथी जाती हैं, जो विवाह आदि के अवसर पर वर-वधू को पहनायी जाती हैं।

चमेली भी बेले की बिरादरी का ही एक मशहूर फूलवाला पौधा है। यह एक लता है, जिसमें सितारों की आकृति में नन्हीं-नन्हीं पँखुड़ियाँ फैलाये हुए अति सुगन्धित सुकुमार श्वेत पुष्प खिला करते हैं। इन पुष्पों की महक बेले की सुगंधि से मिलती-जुलती होती है और इनकी भी मालाएँ गूँथी जाती हैं। इन पुष्पों से सुवासित तैल केशों में लगाने के लिए हमारे देश में सदियों से प्रयोग में आता है। चमेली से बहुत-कुछ समानता रखनेवाले जूही और कुंद के पुष्प भी भारतीय सुगंधित पुष्पों में विशिष्ट स्थान रखते हैं। ये एक प्रकार के झाड़ीनुमा पौधे पर उगा करते हैं, जोकि हिमालय के अंचल में वन्य अवस्था में भी पाया जाता है। ये दोनों श्वेत पुष्प चमेली के फूलों से तनिक छोटे हुआ करते हैं, परन्तु इनकी भी खुशबू मनभावनी होती है। शायद तुम्हें मालूम ही होगा कि सुन्दर दाँतों की उपमा हमारे यहाँ प्रायः कुन्द की मनोहर सफेद कली से दी जाती है।

वृक्षों की डालियों पर उगकर, अधर आसमान में अपनी जड़ें लटकाये रहते हुए खिलनेवाले 'आर्किड' नामक विचित्र पौधों का एक नमूना !

पारिजात या हरसिंगार के नाम से विख्यात हमारे बगीचों के एक सुपरिचित पेड़ के पुष्प सुकुमारता और सुगन्ध दोनों के मेल का उल्लेखनीय नमूना पेश करते हैं। चमेली जैसे ये सफेद फूल गुच्छों में खिलते हैं और इनकी नलिकाकार पुष्पनाल चटक नारंगी रंग की होती है। ये केवल रात को ही खिलते हैं और सुबह तक झड़कर नीचे भूमि पर बिछ जाते हैं। एक अन्य प्रसिद्ध फूलदार भारतीय वृक्ष मौलसरी (बकुल) के पुष्प भी बड़ी मीठी सुगन्धवाले होते हैं। उपर्युक्त दोनों ही फूलों की मालाएँ गूँथकर स्त्रियाँ उनसे अपना श्रृंगार करती हैं।

अन्त में दो शब्द मंदिरों के प्रांगण में प्रायः उगाये जानेवाले चम्पा वृक्ष के सुगन्धित श्वेत-पीत पुष्पों के बारे में भी कहना अप्रासंगिक न होगा। इनकी शोभा सबसे निराली होती है। इस वृक्ष की एक जाति के पुष्पों में फलों जैसी खुशबू होती है। कहते हैं, वनों में चम्पा की डालियों पर प्रायः सर्प लिपटे रहते हैं। इस छोटे-से फूलदार पेड़ की डालियाँ नंगी देख पड़ती हैं। उन पर थोड़े-से पत्ते ही उपजते हैं, जो लम्बे और उभरी हुई नसोंवाले होते हैं।

परन्तु यह तो केवल अपने ही देश के कुछ गिने-चुने सुगन्धित पुष्पों की बात हमने कही है, जबकि संसार के अन्य भूभागों में भी भाँति-भाँति की खुशबूवाले अनेकानेक फूलों की नुमाइश

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लगी है। इनमें 'मुश्क गुलाब', 'नरगिस', 'वायलेट', 'लिली', 'लेवेण्डर' तथा 'नारसिसस' आदि अनेक मधुर सुगन्धवाले फूलों के पौधे विदेशों से लाकर हमारे यहाँ के बाग-बगीचों में भी अब लगाये जाने लगे हैं। स्थानाभाव के कारण उन सबका विवरण यहाँ न दे पाने के लिए हम मजबूर हैं।

पुष्प-समाज के कुछ अनोखे सदस्य--'आर्किड'

पिछले एक प्रकरण में वनस्पति-संसार के विचित्र सदस्यों के विवरण के क्रम में हम तुम्हें 'रेफ्लीजिया' नामक संसार के सबसे बड़े और अद्भुत प्रकृति के एक फूल की जानकारी करा चुके हैं, जोकि पुष्प-समाज का अपने ढंग का सबसे अनोखा नमूना है। परन्तु जैसा कि उसके चित्र को देखकर तुमने महसूस किया होगा, वह एक असाधारण और अनोखा फूल तो अवश्य है, परन्तु वह है बड़ा ही बदसूरत और घिनौना फूल--उसे दरअसल सौन्दर्य और लावण्य से कोई वास्ता ही नहीं है! फिर उससे ऐसी घोर बदबू महकती है कि सब कोई उसके पास फटकते हुए घबड़ाते हैं। परन्तु पुष्प-समाज के सभी असाधारण सदस्य ऐसे अप्रिय और अनाकर्षक नहीं होते। यहाँ हम तुम्हें फूलों के एक वर्ग का परिचय कराने जा रहे हैं, जो आचरण में सबसे असामान्य होते हुए भी सुन्दरता में किसी से कम नहीं।

इस वर्ग के फूल इतने भड़कीले रंगवाले और चित्ताकर्षक आकृतियों के होते हैं कि लोग इन्हें ढूँढ-ढूँढकर अपने घरों और उद्यानों में लगाने के लिए बावले-से रहते हैं। इन्हें अंग्रेजी में 'आर्किड' के नाम से पुकारा जाता है। दुनिया भर में अब तक इनकी लगभग तीस हजार बिरादरियों का पता वैज्ञानिकों को लग चुका है! इन पौधों की असाधारणता वास्तव में इस बात को लेकर है कि इन्होंने अपने आपको अन्य वनस्पतियों की भाँति भूमि की मिट्टी में जड़ें जमाकर जीवन-यापन करने की मोहताजी से मुक्त करके सीधे वायुमंडल से ही अपनी खाद्य-पूर्ति करने का अनूठा रास्ता अपना लिया है! ये विचित्र पौधे अन्य पेड़ों की डालियों पर, चट्टानों की ऊबड़-खाबड़ खड़ी दीवारों पर या अन्यत्र जहाँ कहीं भी मौका पाएँ वहीं चिपककर बड़े मजे से पनपते और फूलते देखे जा सकते हैं! तारीफ की बात तो यह है कि ये अमरबेल या गँठवा जैसे परोपजीवी गिरहकट पौधों की तरह अपने आश्रयदाता को तनिक भी हानि नहीं पहुँचाते, न उनसे अपनी खाद्य-सामग्री ग्रहण करते हैं। कारण, ये अपनी जड़ों को हवा में प्रसारित करके सीधे वायुमण्डल से ही हवा-पानी तथा पोषक खाद्य तत्वों की पूर्ति कर लेने का असाधारण सामर्थ्य रखते हैं! हाँ, यदि अपने आश्रयदाता से भेंट-उपहारस्वरूप कुछ खाद्य द्रव्य इन्हें अयाचित ही मिल जाएँ, तो वे उसे अस्वीकार नहीं करते! इस प्रकार ये मानो उंछवृत्ति से निर्वाह करनेवाले वीतराग संन्यासियों जैसे वनस्पति हैं। परन्तु इस तरह वैरागी होने पर भी इनके पुष्पों की छटा देखते ही बनती है! उनके रूप और रंग पुष्प-समाज में कदाचित् सबको मात करनेवाले होते हैं। वे लाल, गुलाबी, पीले, नारंगी, हरे, नीले, बैंजनी, आदि सभी रंगों के पाये जाते हैं। कई की शक्ल तो हूबहू तितलियों एवं पतिंगों-सी होती है। निस्सन्देह वे पुष्प-समाज के सबसे विचित्र सदस्य हैं। उन्हें देखकर कलाकार प्रकृति की कारीगरी के आगे नतमस्तक हो जाना पड़ता है।

हमारे देश के कुछ दर्शनीय फूलदार वृक्ष

फूल जहाँ बाग-बगीचों की क्यारियों एवं गमलों की शोभा बढ़ानेवाले अनेकानेक छोटे पौधों पर अपना रंग बखेरकर दुनिया को सरस बनाते हैं, वहाँ साथ ही साथ बहुतेरे बड़े वृक्षों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का भी शृंगार करके उन्होंने कुदरत के आँगन में अनूठा समाँ बाँध रक्खा है! वैसे तो ऐसे कोई भी वृक्ष नहीं, जो किसी-न-किसी प्रकार के पुष्पों से न सजते हों; कारण, इनके बिना उनके प्रजनन एवं वंश-विस्तार का लक्ष्य ही पूरा नहीं हो सकता। तथापि कुछ पेड़ ऐसे हैं, जो अपनी अत्यन्त सुन्दर पुष्पावली के कारण विशेष रूप से 'फूलदार वृक्षों' के नाम से ही पुकारे जाते हैं। उनमें से कई बड़े चाव से मार्गों के आसपास तथा उद्यानों में लगाये जाते हैं। इस सम्बन्ध में हमारा देश विशेष रूप से भाग्यवान् है। यहाँ के कई वृक्ष वसन्त, ग्रीष्म, शरद अथवा वर्षाकाल में ऐसे तड़कीले-भड़कीले फूलों की पोशाक धारण कर लिया करते हैं कि उन्हें देखकर नन्दन-कानन की कल्पना चरितार्थ हो उठती है। आओ, संक्षेप में इन फूलदार दर्शनीय वृक्षों में से कुछ की जानकारी तुम्हें करा दें :—

कदम्ब—भारतीय साहित्य में कालिदास जैसे महाकवि द्वारा बखाना गया यह प्रसिद्ध वृक्ष ग्रीष्मकाल के अवसान पर फूलता और वर्षाकाल में वह प्रायः श्रावण मास के अन्त तक खिला रहता है। इसके गोल कंदुक जैसे पुष्प चटक केसरिया या नारंगी रंग के होते हैं। सुहावनी मादक गंध से सुवासित ये पुष्प वास्तव में अनेक नन्हे-नन्हे फूलों के पुंज होते हैं। कदम्ब का वृक्ष काफी ऊँचा होता है। उसके पत्ते लम्बे, चिकने तथा गहरे हरे रंग के होते हैं। यह श्रीकृष्ण का प्रिय वृक्ष था, जिसकी छाँह में खड़े होकर वह वंशी बजाया करते थे। भारतवर्ष के अलावा यह पेड़ मलाया तथा चीन में भी पाया जाता है। जब यह वृक्ष फूलता है, तो उस पर मधु के लोभी भौंरों और मधुमक्खियों आदि का मेला-सा लग जाता है।

कचनार—वसन्त ऋतु में फूलनेवाला यह वृक्ष अधिक ऊँचा न होकर भी अपने बैंजनी लाल अथवा श्वेत-पीत सुगन्धित पुष्पों के खातिर हमारे देश के अत्यन्त लोकप्रिय पेड़ों में परिगणित है। इसके फूल छोटे-छोटे गुच्छों के रूप में खिला करते हैं और उनमें पाँच पंखुड़ियाँ एवं उतने ही पुंकेसर होते हैं। इसकी गोल पत्तियाँ दो पल्लेनुमा भागों में विभक्त होती हैं। जब यह वृक्ष फूलता है, तो उसकी पुष्पराशि की चादर से पत्तियाँ मानो छिप जाती हैं। कचनार की कली अपनी सुकुमारता और भीनी सुगन्ध के लिए प्रसिद्ध है। उसकी तरकारी बनायी जाती है और अचार भी पड़ता है।

अमलतास—यह भी छोटे कद का एक मशहूर फूलदार भारतीय वृक्ष है, जो अप्रैल-मई के महीने में बड़े सुहावने पीले रंग के पुष्पों की राशि से लद जाता है। ये नन्हें-नन्हें पुष्प अपनी झुकी हुई पतली टहनियों पर सुकुमार लड़ियों के रूप में लटकते रहते हैं। उनसे भीनी-भीनी खुशबू भी महका करती है। इस वृक्ष के फल डंडीनुमा लम्बी फलियों के रूप में प्रकट होते हैं, जिनका गूदा बड़ा रेचक होता है। आजकल यह वृक्ष अपने फूलों की शोभा के लिए नगरों की सड़कों के आसपास कसरत से लगाया जाने लगा है।

अशोक—मौलसिरी या आम की-सी गहरी हरी लम्बी पत्तियोंवाला यह सदाबहार पेड़ अपना मस्तक गौरव के साथ नभ की ओर उठाये हुए हमारे देश में आम तौर पर उद्यानों में खड़ा देखा जा सकता है। इस ऊँचे वृक्ष की सीधी टटार सुडौल आकृति, मनचाहे ढंग से सँवारी जा सकने योग्य उसकी पत्तियों की सघन राशि की बदौलत, एक तो वैसे ही अत्यन्त चित्ताकर्षक लगती है—उस पर जब वसन्तकाल में उसकी हरित पत्रावली की पृष्ठभूमि पर चटक लाल एवं नारंगी रंग के बड़े ही भव्य पुष्पगुच्छ बीच-बीच में टँक जाते हैं, तो फिर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस सुन्दर वृक्ष की शोभा का भला क्या कहना होता है ! इन पुष्पों के ऊपर निकले हुए अर्द्ध-श्वेत पुंकेसर ऐसे प्रतीत होते हैं, जैसे किसी मुकुट पर झिलमिलाते हुए रजत-तार हों। पीपल, बरगद और आँवले के वृक्ष की भाँति अशोक का पेड़ भी भारत का एक लोकप्रिय पूज्य पादप माना जाता है। शायद तुम्हें याद हो कि भगवती सीता ने रावण द्वारा हरण किये जाने की दशा में अपने दुःख के दिन लंका में एक अशोक वृक्ष के नीचे रहकर ही काटे थे !

पलाश या ढाक--मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार और बंगाल की कोयला-खदानों के क्षेत्र तथा पश्चिमी घाट के कुछ भागों में बहुतायत से पाया जानेवाला यह सुप्रसिद्ध भारतीय वृक्ष वैसे तो अपनी मरोड़दार शक्ल तथा खुरदरे बेढंगे तने के लिहाज से कोई सुहावना पेड़ नहीं होता, परन्तु वसन्तकाल में जब वह फूलता है, तो उसकी शोभा को कोई भी मात नहीं कर सकता ! 'टेसू' के नाम से पुकारे जानेवाले इस वृक्ष के अर्द्धचन्द्राकार मखमली पुष्प चटक लाल रंग के गुच्छों में पतझड़ोपरान्त जब उसकी पत्रहीन टेढ़ी-मेढ़ी डालियों पर छा जाते हैं, तो दूर से देखने पर यही जान पड़ता है, मानो वन में प्रकृति ने गुलाल बखेर दी हो ! इसीलिए कवियों ने इस वृक्ष को 'वसन्त का दूत' और 'कामदेव की पताका' कहा है।

सेमल या शाल्मलि--भारत में सर्वत्र पाये जानेवाले इस विशालकाय वृक्ष में भी भव्य सेंदूरिया रंग के बड़े मोटे दल के पुष्प खिला करते हैं। उसका यह पुष्पावरण फागुन-चैत में तमाम पत्तियाँ झड़ जाने पर ही होता है। उस समय इसकी कँटीली सूखी डालियाँ एक अनूठी शोभा से मुखर उठती हैं। इस वृक्ष में जो डोड़े लगते हैं, उनमें से बड़ी ही मुलायम रेशमी रुई निकलती है !

गोरख-इमली--यह एक विचित्र शक्ल का पेड़ है, जो अफ्रीका से लाकर इस देश में रोपा गया है। अंग्रेजी में इसे 'बाओबाब' कहते हैं। इसका तना बहुत मोटा और बेढंगा होता है, जिसे देखकर भय लगने लगता है। परन्तु जब यह फूलता है, तो पीत श्वेत वर्ण के उसके वृहदाकार पुष्पों की छटा देखते ही बनती है ! इन पुष्पों की सबसे विचित्र बात तो यह है कि ये जुलाई के महीने में केवल एक रात्रि भर के लिए ही फूलते हैं ! वे मध्य रात्रि में प्रस्फुटित होते और सुबह होते ही मुरझा जाते हैं।

गुलमोहर--यह भी विदेशों से लाकर भारत में रोपा गया एक सुप्रसिद्ध फूलदार पेड़ है। हमारे नगरों के मार्गों के आसपास अपने नारंगी-लाल रंग के पुष्पों की छटा छहराये रहनेवाले इस वृक्ष के पुष्प अप्रैल-मई के महीनों में फूलते हैं !

जंबुल मेंड़क--यह भारतीय उद्यानों का एक बहुत ही सुहावना फूलदार वृक्ष है, जो ब्राजिल (दक्षिण अमेरिका) से लाकर हमारे यहाँ प्रचलित किया गया है। इसका अंग्रेजी नाम 'जकारान्डा' है। लगभग बीस मीटर की ऊँचाई तक आसमान में अपना शीश उठाए रहनेवाले इस वृक्ष में मार्च से मई तक की ऋतु में गहरे नीले-बैंजनी रंग के अत्यन्त सुन्दर पुष्प खिलते हैं। ये फनिलाकार पुष्प सौ से भी अधिक संख्या में अनोखी शोभावाली एक मंजरी के रूप में सजे रहते हैं। बंबई में ये वृक्ष बड़ी संख्या में विद्यमान हैं।

उपर्युक्त उल्लेखनीय वृक्षों के अतिरिक्त अर्जुन, शिरीष, रक्त मंदार, सागवान, सेब, जंगली बादाम, जंगली झाऊ, सहजन, आम आदि और भी कितने ही भारतीय वृक्ष हैं, जिनमें सुन्दर फूलों अथवा पुष्पमंजरियों की शोभा निखरा करती है। परन्तु यहाँ इतना स्थान नहीं कि उन सबका विवरण दिया जा सके।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अनोखे फल

मनुष्य एवं अन्य शाकाहारी प्राणियों के लिए वनस्पति-जगत् की सबसे बड़ी भेंट निस्सन्देह भोजन के काम में आनेवाले भाँति-भाँति के वे स्वादिष्ट फल ही हैं, जिन्हें वन-उपवनों, बाग-बगीचों एवं खेतों से बटोरकर हजारों-लाखों वर्षों से वे इस पृथ्वी पर अपना भरण-पोषण करते चले आ रहे हैं। हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि वनस्पति-संसार के इन उपहारों की श्रेणी में बड़े पेड़ों पर उपजनेवाले आम, अमरूद, सेब, नाशपाती, आड़ू, नारंगी, संतरा, कटहल, नारियल, केला जैसे फल ही नहीं, बल्कि खेतों में पैदा होनेवाले गेहूँ, जौ, चना, मक्का, ज्वार, बाजरा, धान जैसे चिरपरिचित अनाज एवं तरह-तरह की बेलों, लताओं और पौधों पर उपजनेवाली शाक-तरकारी तथा मसालों, औषधियों आदि की पैदावार भी सम्मिलित है, जो कि भाँति-भाँति से हमारे काम आती है।

सभी फल प्रकृति की कारीगरी के अनूठे चमत्कार हैं

यद्यपि यहाँ स्थानाभाव के कारण हम सब फलों का विवरण प्रस्तुत करने में असमर्थ हैं, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि उनका मूल्य और महत्व कम है। सच तो यह है कि न केवल उपयोगिता की दृष्टि से, वरन् अचम्भे के नाते भी उनमें से प्रत्येक——चाहे वह अनाज का एक दाना ही क्यों न हो——सृष्टिकर्त्ता की कारीगरी का एक अद्भुत चमत्कार है! कैसी-कैसी चित्र-विचित्र शक्लें प्रकृति ने उन्हें प्रदान की हैं? कैसे-कैसे दर्शनीय और रक्षात्मक आवरणों के कवच उन्हें पहनाये गये हैं? कितने प्रकार की सुगंध से वे सुवासित किए गए हैं एवं कैसे-कैसे स्वाद उनमें भरे गए हैं? फिर सबसे बड़ी बात तो यह है कि उनकी उपयोगिता का मोल कोई कैसे आँके? जरा सोचो तो कि यदि वनस्पति-संसार की यह अनमोल नियामत——भाँति-भाँति के इन फलों की यह भेंट——हम न पाते, तो आज पृथ्वी पर जीवन के काफिले का क्या हाल होता?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फलों को उपजाने में प्रकृति का वास्तविक प्रयोजन क्या है ?

ऊपर हमने जो कुछ कहा है, उससे तुम्हारे मन में यह भ्रम पैदा हो जाना नामुमकिन नहीं कि कुदरत ने इन फलों को महज हमारे भोजन के निमित्त ही अथवा उनके तरह-तरह के स्वादों का जायका लेने के उद्देश्य से ही इस धरती पर उपजाया है ! परन्तु ऐसा मानना सरासर भूल होगी । कारण, पौधों को दरअसल इस बात से कोई भी सरोकार नहीं कि हम उनकी पैदावार को हथियाकर अपना पेट पालें या मनोरंजन करें । वे जो भी फल उपजाते हैं, उनके पीछे वास्तविक उद्देश्य तो है केवल अपना वंश-विस्तार ! इसी परम लक्ष्य की पूर्ति के हेतु ही प्रकृति ने पौधों के बीजों को——जो कि उनकी नस्ल को बनाए रखने के कीमती साधन हैं——हानि से बचाने तथा उचित वाहकों द्वारा दूर-दूर तक बखेरने की विविध तदबीरें की हैं । उदाहरणार्थ, यदि नारियल के फल को भीतर छिपे हुए नन्हें-से बीज के रक्षार्थ एक ओर ऐसा जटाजूटवाला कठीला कवच पहनाया गया है, जो न तो जीव-जन्तुओं द्वारा भेदा जा सकता है, न पानी में सड़ता-गलता ही है, तो दूसरी ओर इस योग्य भी बनाया गया है कि जब वह समुद्री लहरों द्वारा बहा ले जाया जाय तो अपने उस काठ के आवरण की बदौलत डूबने से बचा रहे, साथ ही तैरते-तैरते कभी न कभी किसी द्वीप-द्वीपान्तर के तट पर जा लगे, ताकि इस वंश की पौध दूर-दूर तक फैल सके ! बहुतेरे रसीले और गूदेदार फलों में, बीजों को कड़ी गुठलियों आदि की मंजूषा में लुका-छिपाकर, ऊपर मधुर रस या गूदे की लुभावनी खोल भी इसी प्रयोजन से चढ़ाई गई है कि ललचाकर पशु-पक्षी या मनुष्य उस सामग्री का जायका लें और बदले में बीजों को दूर-दूर तक बखेरकर सम्बन्धित पौधों के वंश-विस्तार में मदद दें !

जातीय गुणभेदानुसार फलों का वर्गीकरण

यदि यह पूछा जाय कि वनस्पति-संसार में कितने प्रकार के फल हैं, तो सबसे सरल और स्वाभाविक जवाब यही होगा कि जितने प्रकार के फलदार पौधे हैं, उतने ही प्रकार के फल भी हैं । चूँकि एक-एक जाति के फल का अलग-अलग बखान करना आसान काम नहीं, अतः सुविधा के लिए सभी फलों को कतिपय महासमूहों, वर्गों और उपवर्गों में बाँट दिया गया है । यह वर्गीकरण संक्षेप में नीचे लिखे अनुसार है:——

१. **एकिफल या सरल फल**——इस महासमूह के फल केवल एक स्त्रीकेसरवाले या युक्ताण्डपी स्त्रीकेसरवाले फूलों से ही पैदा होते हैं । इनके दो वर्ग हैं——(क) **'सरस फल'** (जिनका फलावरण रसीला एवं गूदेदार होता है;) और (ख) **'सूखे फल'** (जिनमें फलावरण कड़ा और सूखा हुआ करता है) । सरस फलों के **'बेरी'** (टमाटर, अंगूर, संतरा, तरबूज आदि), **'गुठलीदार'** (आम, आड़ू, आलूचा आदि), और **'सेबिया'** (सेब, नाशपती, बिही आदि) ये तीन उपवर्ग हैं । सूखे फलों को भी **'स्फोटशील'** और **'अस्फोटशील'** (या एकीनिपल) नामक दो उपवर्गों में बाँट दिया गया है । स्फोटशील फल वे हैं, जिनके आवरण बीजों के पकने पर तड़ककर फट जाते हैं और फलतः बीज झटके के साथ निकलकर बाहर बिखर जाते हैं । अस्फोटशील फलों में आवरण बीजांकुरण से पहले नहीं फटा करता । कतिपय भेदों के कारण, स्फोटशील फलों को पुनः **'शिंब'**, **'कूटपटीक'** (सिलिका), **'पुटिका'** (फॉलिकल) तथा **'संपुटिका'** (कैप्स्यूल) नामक चार विभागों में बाँट दिया गया है । इसी प्रकार से अस्फोटशील

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

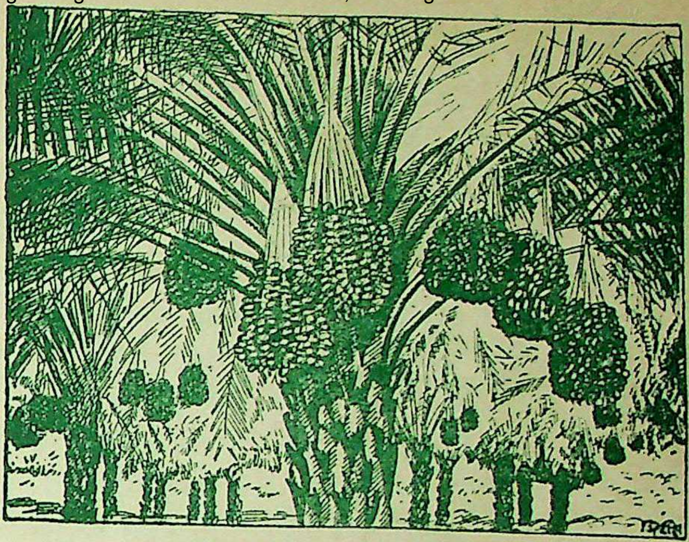

जिन्हें कभी झूमरों की तरह लटकते हुए खजूर के फलों का अद्भुत नजारा देखने को न मिला हो, वे भला कैसे इस बात की कल्पना कर सकते हैं कि 'पिंडखजूर' एवं 'छुहारे' के रूप में उपलब्ध मीठे मेवे कैसे पैदा होते हैं ! यह इराक के एक खजूरों के निकुंज की झाँकी है ।

फलों के भी **'एकीन'**, **'धान्य'**, **'सपक्ष'** (समारा) तथा **'नट'** नामक चार विभाग कर दिए गए हैं । 'शिंब' में वे स्फोटशील सूखे फल शरीक हैं, जिनके आवरण पकने पर दोनों किनारों से फटा करते हैं (जैसा कि मटर, सेम, लोबिया, मूँग, अरहर आदि में पाया जाता है) । 'कूटपटीक' में फलावरण की जुदा होनेवाली भित्तियों के बीच एक कूटपट लगा रहता है (जैसा कि सरसों, राई आदि में होता है) । 'पुटिका' के फलावरण केवल एक ओर से ही फटा करते हैं (जैसा कि मदार, गुलकबूतर, लार्कस्पर आदि में देखने को मिलता है) । 'संपुटिका' में बीज के बाहर निकलने के लिए छिद्रों आदि की विविध तदबीरें की गई होती हैं (जैसा कि पोस्ता, लिली, स्नेपड्रेगन और ऑर्किडों में पाया जाता है) । उधर अस्फोटशील समुदाय के 'एकीन' विभाग के अन्तर्गत सूरजमुखी में पाए जानेवाले पतले चीमड़ फलावरण का; 'धान्य' में गेहूँ, जौ, चावल आदि अनाजों की-सी फलावरण और बीजावरण की अभिन्नता का; 'सपक्ष' में मेपल, एल्म आदि वृक्षों जैसे चपटे पंखों से युक्त फलावरण का; तथा 'नट' में बंजु, चेस्टनट जैसे वृक्षों के काष्ठफलों के कठीले फलावरण का बोलबाला मिलता है । यह उल्लेखनीय है कि वनस्पति-संसार के अधिकतर फल एकिफल-समूह में ही जुटे हुए हैं ।

२. पुंजफल—देखने में एक जान पड़ने पर भी, वास्तव में अनेक छोटे-छोटे फलों के गुच्छे जैसे ये फल ऐसे पुष्पों से बनते हैं, जिनमें से प्रत्येक कई स्त्रीकेसरों से सुसज्जित होता है । इनमें से हर एक स्त्रीकेसर एक-एक फल की सृष्टि करता है, जो मिलकर पुंजीकृत हो जाते हैं । इस समूह के प्रतिनिधि उदाहरण रास्पबेरी, ब्लेकबेरी, शरीफा और स्ट्रॉबेरी हैं ।

३. अनेकिफल—कई एक फूलों के सम्मिलित पुष्प-व्यूह द्वारा उत्पन्न इन फलों में बाह्यदलों के परस्पर जुड़े रहने के कारण एक संग्रथित समूह-सा निर्मित हो जाता है । इनके प्रमुख उदाहरण कटहल, अनन्नास, शहतूत और अंजीर हैं । अंजीर के गूदेदार आशय की भीतरी दीवार पर नन्हीं-नन्हीं ढिबरियों की शक्ल के अगणित सूक्ष्म बीजों का मानो जमघट-सा लगा पाया जाता है ।

आओ, अब फलों के इस बृहत् समाज में से कतिपय उदाहरण चुनकर यह देखें कि फूलों की तरह फलों की दुनिया भी कैसे-कैसे विचित्र कौतुकों से भरी पड़ी है । यहाँ हमें यह नहीं भुला देना चाहिए कि प्रकृति की अन्य करतूतों की भाँति फलों का भी प्रत्येक नमूना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

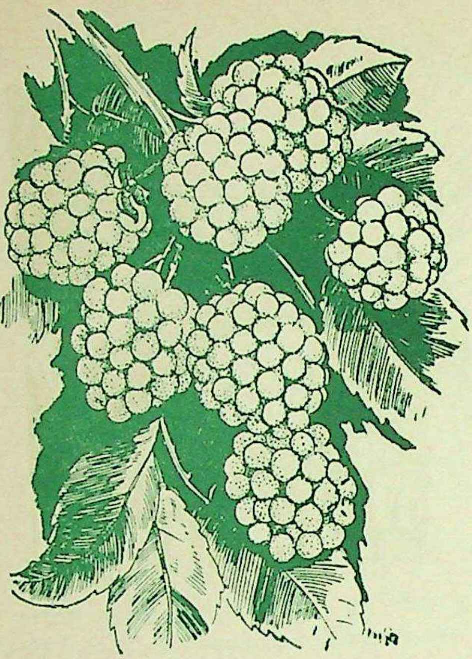

सौन्दर्य के लिहाज से, हरी लताओं पर मोतियों के गुच्छों की तरह चमचमाते हुए अंगूरों की शोभा की बराबरी कौन फल कर सकता है ?

अपने लिहाज से एक अचरजभरी करामात जैसा है—फिर चाहे वह अनाज का एक नन्हा-सा दाना ही क्यों न हो !

ताड़-परिवार के विलक्षण फल

लगभग डेढ़ हजार बिरादरियों में बँटा हुआ ताड़-परिवार अपने फलों की विलक्षणता की दृष्टि से वनस्पति-जगत् का एक महाधनी कुटुम्ब है। तुम्हें यह जानकर कुतूहल होगा कि दुनिया में सबसे बड़े डीलडौल के बीजों को उपजाने का गौरव भी इसी परिवार के एक सदस्य को प्राप्त है। यह ताड़-वृक्ष हिन्द-महासागर के सिचिलीज द्वीप-पुंज में पाया जाता है। इस अनोखे ताड़ का प्रत्येक फल तौल में अठारह किलोग्राम (लगभग आधा मन) होता है और वह दो युग्म फलों की जुड़वाँ शक्ल में अपने भीतर एक भीमकाय बीज को बसाए रहता है। उक्त बीज का परिमाण साधारण नारियल के फल के बराबर हुआ करता है। वनस्पति-जगत् में इससे बड़ा बीज नहीं पाया जाता। कहते हैं, इन दैत्याकार फलों के परिपक्व होने में पूरे पाँच वर्ष का समय लगा करता है। प्रकृति की कैसी करामात हैं ये ?

'रोटी के वृक्ष' और 'तैलवाले ताड़'—ताड़-परिवार के कुछ सदस्य अपने असाधारण स्टार्च-भंडार की बदौलत 'रोटी के वृक्ष' कहलाने का भी गौरव पाए हुए हैं। मिस्र में पाए जानेवाले ऐसे एक ताड़ का फल एक किस्म की विलायती रोटी का हूबहू जायका देता है। इसी कारण से वह 'जिंजरब्रेड ट्री' के नाम से मशहूर है। स्टार्च-निर्माण की अपनी इस अनूठी योग्यता के बूते पर ही इस वनस्पति-कुटुम्ब के कुछ सदस्य 'सागूदाना' (या साबूदाना) नामक प्रसिद्ध खाद्य पदार्थ की उपज के मूल्यवान् स्रोत बन गए हैं। इस जाति के ताड़ के तने में माँड़ का प्रचुर भंडार जमा होता रहता है। उसी से सागूदाना के मोतियों जैसे गोल-गोल दाने तैयार किए जाते हैं। एक जाति के ताड़ से साबुन, टुथपेस्ट, प्रसाधन-सामग्री आदि के निर्माण में काम आनेवाला उपयोगी तैल प्रचुरता से प्राप्त किया जाता है। यह वृक्ष पश्चिमी अफ्रीका में होता है। अपनी इस तैल-उत्पादन-शक्ति के कारण ही वह 'तैलवाला ताड़' कहलाता है। इसके छोटे-छोटे फलों के गूदे में सत्तर प्रतिशत तक तैल की मात्रा होती है। अन्य एक प्रकार का तैल उसके बीजों की गरी से भी निकाला जाता है।

ताड़-परिवार का सरदार 'नारियल'—ताड़-कुटुम्ब का सबसे प्रसिद्ध और सर्वाधिक कीमती वृक्ष निस्सन्देह नारियल है। उपयोगिता की दृष्टि से उसका मुकाबला वनस्पति-समाज के गिने-चुने सदस्य ही कर सकते हैं। एक प्रसिद्ध वनस्पति-शास्त्री ने ताड़-परिवार के वृक्षों को 'वनस्पति-संसार' के राजपुरुषों की उपाधि प्रदान की है। उसी लहजे में यदि हम नारियल को ताड़-वृक्षों के राजपरिवार के सरदार का खिताब दें, तो कोई बढ़ी-चढ़ी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बात न होगी । लगभग पचास-साठ मीटर की ऊँचाई तक अपने एकाकी तने को आसमान में गर्व के साथ उठाये रहनेवाला यह वृक्ष प्रति वर्ष साढ़े चार सौ तक फल उपजाता है और आम तौर पर वह अस्सी-नब्बे वर्ष तक फलता रहता है । अपनी इस अद्भुत उत्पादन-क्षमता की बदौलत ही संसार में वनस्पति-तैल की उपज के पाँचवें भाग की पूर्ति इसी वृक्ष के फलों से हुआ करती है । फिर उसकी स्वादिष्ट गरी से कितनों का पोषण होता है तथा कवच पर के जटाजूट के रेशों से क्या-क्या सामान बनता है, इसकी अपनी अलग कहानी है !

यदि तुमने नारियल के फल को देखा हो, तो इस बात पर तुम्हारा ध्यान अवश्य गया होगा कि उसके जटाजूटयुक्त काठ के कवच को हटा देने पर भीतर से गरी का जो गोला निकला करता है, उसकी दुग्धधवल दीवार में घुंडी जैसी एक छोटी-सी रचना दुबकी रहा करती है ! यही इस फल का बीज है । कवच पर आँख जैसे तीन गड्ढे भी शायद तुमने देखे होंगे, जिन पर एक पतला परदा-सा मढ़ा रहता है । इन 'आँखों' को प्रकृति ने बेमतलब नहीं बनाया है । दरअसल, समय आने पर वह नन्हा-सा बीज गर्भमंदिर में अंकुरित होकर, इन्हीं में से किसी एक आँख की खिड़की के रास्ते अपनी शाख और जड़ों को बाहर निकालता है ! उधर गरी के गोले में संगृहीत पौष्टिक पानी से नवांकुरित पौधे की तमाम आरम्भिक आवश्यकता-पूर्ति होती रहती है । भला, स्वावलंबन की इससे बढ़िया योजना और क्या हो सकती है ? चूँकि नारियल के पेड़ अधिकतर समुद्रतट पर होते हैं, अतः अकसर उनके फल सागर की लहरों द्वारा बहा ले जाये जाते हैं । उस दशा में, काठ के आवरण की बदौलत, तैरते-तैरते वे जन्मस्थल से सैकड़ों-हजारों किलोमीटर दूर तक जा पहुँचते हैं ! अन्त में उन विदेशी भूखंडों के तट पर जड़ जमाकर वे वहाँ नारियल के पौधे उपजाने का अनोखा चमत्कार कर दिखाते हैं ! इस विधि से लम्बी समुद्र-यात्रा करके इस अजीब फल ने कई टापुओं में नारियल के ठट्ठ वन खड़े कर दिये हैं !

परन्तु इस फल की सबसे अनोखी करामात तो यह है कि कभी-कभी उसमें से मोती भी निकलते पाये गये हैं ! ये रत्न डेढ़ सेंटीमीटर व्यास तक के काफी बड़े डीलडौल के और चमक में एकदम असली मोतियों

केला यद्यपि एक सर्वाधिक जाना-पहचाना हुआ फल है, फिर भी बहुत कम लोगों को इसकी सही जानकारी होगी कि उसका पेड़ कैसा होता है और उस पर इस फल की घौद किस प्रकार से लटका करती है ! इस चित्र पर गौर करके सही जानकारी प्राप्त कीजिए ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

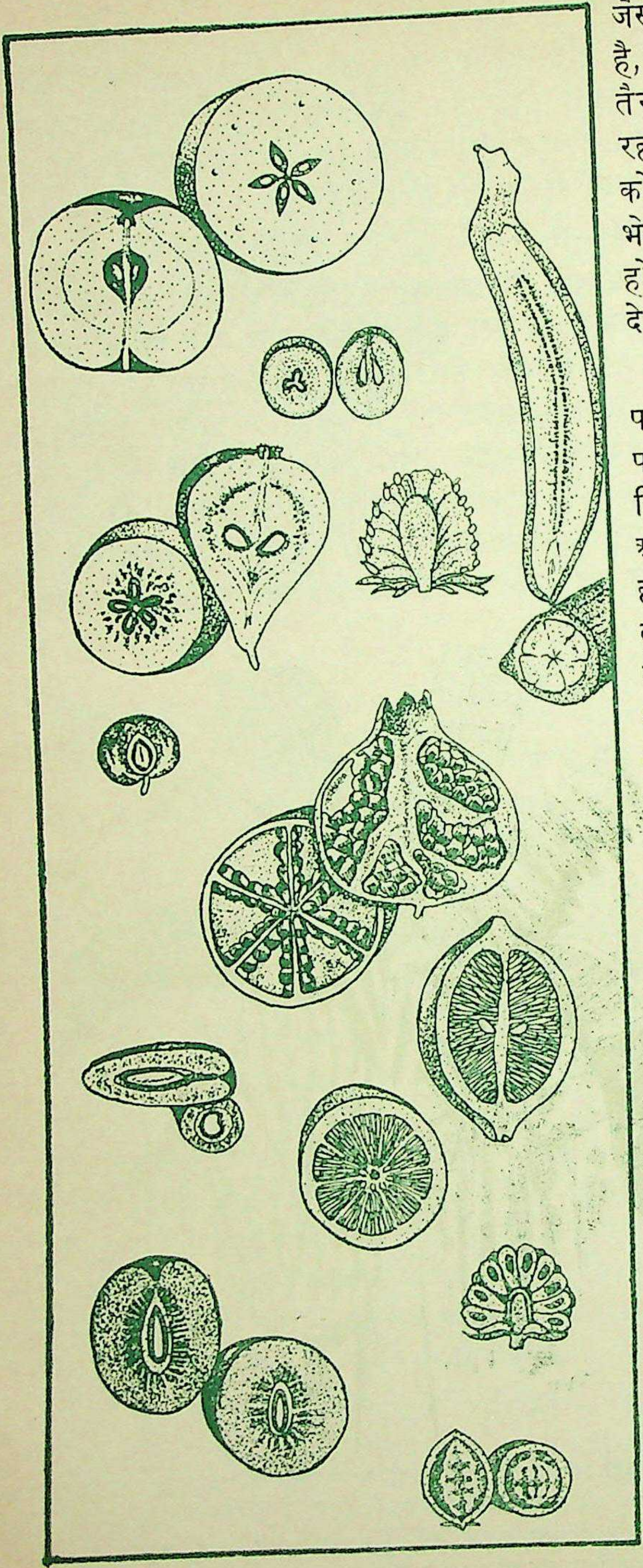

जैसे होते हैं ! यह चमत्कार क्योंकर होता है, कोई नहीं जानता ! संभव है, समुद्र में तैरते समय या तट की बालू में दबे पड़े रहने की दशा में, मोती उपजानेवाला कोई कस्तूरा कभी कदाचित् कवच को भेदकर इस फल के भीतर पहुँच जाता हो और इस प्रकार उसे इस रत्न की भेंट दे जाता हो !

खजूर––नारियल के बाद ताड़-परिवार का सबसे प्रसिद्ध और उपयोगी फल खजूर ही है । इस फल की सर्वोत्तम किस्में पश्चिमी एशिया और उत्तरी अफ्रीका के उष्ण रेगिस्तानी क्षेत्रों में पैदा होती हैं । जैसा कि पृ० ८१ के चित्र में तुम देख सकते हो, खजूर के नन्हें-नन्हें फल वृक्ष के सिरे पर छत्रीनुमा पत्रमुकुट के नीचे झुमकों में लटकते रहते हैं । उन्हें देखकर यही जान पड़ता है कि मानो लाल-लाल मूँगों की मालाओं की कई एक झूमरें लटक रही हैं ! पक जाने पर यही रसीले गूदेदार फल 'पिंडखजूर' के नाम से बाजारों में बिकने को आते हैं और सूख जाने पर इन्हीं को हम 'छुहारा' कहकर पुकारा करते ह । पिंडखजूर की मिठास गुड़-शकर और शहद से भी बाजी बद सकती है । इराक, यमन आदि देशों के लोगों का यह एक मुख्य आहार है ।

सुपारी––खजूर की भाँति सुपारी भी ताड़-परिवार का बहुत महत्वपूर्ण वृक्ष है । इसके गोल-गोल फल भी लड़ियों में लटकते देखे जाते हैं, परन्तु वे मीठे तथा रसीले न होकर स्वाद में कसैले होते हैं ।

फलों की भीतरी रचना––(१) (क्रमशः ऊपर से नीचे की ओर) सेब, अंगूर, केला, स्ट्राॅबेरी, नाशपाती, चेरी, अनार, खजूर, नीबू, आलूबुखारा, रास्पबेरी और गजबेरी । इनमें से अधिकतर फलों की क्रमशः आड़े और खड़े काट की दोहरी झाँकियाँ दिखाई गई हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उनकी उपयोगिता वस्तुतः [illegible] कड़े बीज के हेतु ही होती है, जिसे लोग सरौते से कुतरकर पान में खाते हैं। नारियल की तरह सुपारी पर भी एक रेशेदार खोल-सी चढ़ी रहती है। उसे अलग करके ही उसके मूल्यवान् बीज प्राप्त किये जाते हैं। अपने धूमिलवर्ण चिकने पतले तने पर सुशोभित पिच्छाकार पत्रमाला की छबि के कारण, सुपारी के वृक्ष अक्सर उद्यानों में लगाये जाते हैं।

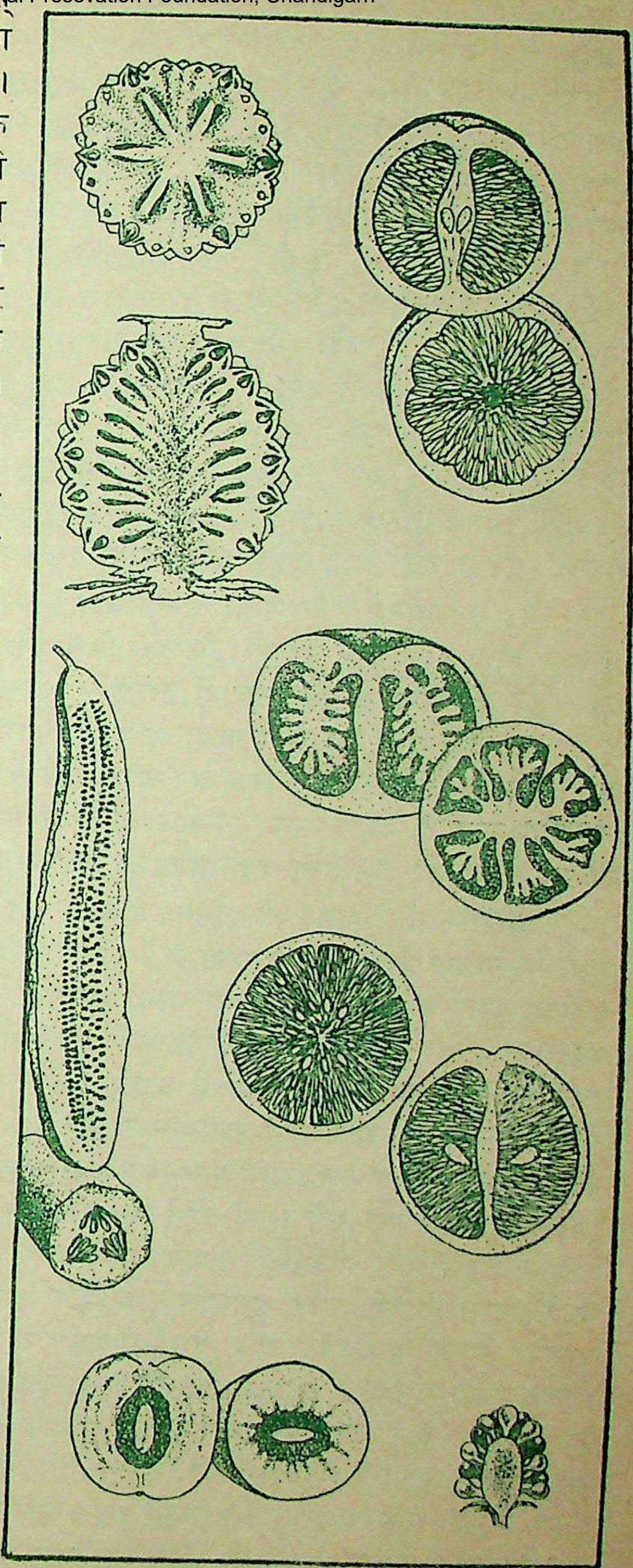

रसीले गूदेवाले स्वादिष्ट फल

खाने में सबसे अधिक रुचिकर तथा स्वादिष्ट फलों का मेला निस्सन्देह उस रसीले गूदेवाले महासमूह के प्रांगण में ही लगा हुआ है, जिसके अन्तर्गत केला, अंगूर, आम, संतरा, मौसंबी, नीबू, अनार, सेब, नाशपाती, अमरूद, बेर, जामुन, आड़ू, आलूबुखारा, तरबूज, खरबूजा, लीची, लोकाट, स्ट्रॉबेरी, चेरी, फालसा आदि आम तौर पर बाजारों में बिकनेवाले लगभग सभी लोकप्रिय फलों का समावेश है। यहाँ इतना स्थान नहीं कि इस समूह की सभी अद्भुत कृतियों का वृत्तान्त दिया जा सके, अतः उदाहरण के तौर पर संक्षेप में कुछ सुप्रसिद्ध फलों की विलक्षणता की चर्चा करके ही हमें सन्तोष करना होगा।

केला——खपत की दृष्टि से यद्यपि केला संसार में सबसे अधिक खाये जाने-वाले फलों में से एक है, फिर भी बहुत कम लोगों को इस बात की जानकारी होगी कि जिस अनोखे पेड़ पर वह उपजता है, उसकी बनावट और शक्ल-सूरत

फलों की भीतरी रचना——(२) (क्रमशः ऊपर से नीचे की ओर) अनन्नास, ग्रेप फ्रूट, टमाटर, ककड़ी, मौसंबी, आड़ू और ब्लैकबेरी। पिछले पृष्ठ की तरह इन फलों में से भी अधिकतर की आड़े और खड़े काट की दोहरी झाँकियाँ दिखाई गई हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सामान्य वृक्षों से एकदम निराली है ! यह पेड़ ऊँचाई में तो कभी-कभी बारह-तेरह मीटर तक अपनी छटा आसमान में छहराए रहता है, परन्तु तने के नाम पर उसमें केवल पर्त पर पर्त चढ़े हुए पर्णवृन्तों की बीस-पचीस सेंटीमीटर व्यास की एक चिकनी हरी पेड़ी मात्र होती है, जिसकी रग-रग पानी से सराबोर रहती है ! उक्त नरम पेड़ी के बीचोबीच एक पतला-सा धड़ रहा करता है और आसपास तथा ऊपर तीन-चार मीटर तक लम्बे एवं आधे मीटर चौड़े कतिपय बहुत बड़े चिकने हरे पत्ते फैले रहते हैं । जिस एकाकी वृन्त पर इस अनोखे पेड़ के पुष्प एवं फल लगा करते हैं, वह भार के मारे सदैव शीश झुकाए रहता है । केले का संपुटित पुष्प, जो मानो देखने में एक बहुत बड़ी कमल-कली जैसा जान पड़ता है, वास्तव में एक पुष्प-समूह होता है, जो अपने निपत्रों की पर्तों के पीछे बहुतेरे छोटे-छोटे नलिकाकार फूलों को बसाए रहता है । ज्यों-ज्यों वे निपत्र खुलकर उलटते जाते हैं, उनकी ओट से फूल उघड़ते चले जाते हैं । मधुमक्खियों द्वारा इन पुष्पों के संसेचन के उपरान्त, एक-एक फूल से एक-एक केला जनमता है । इस प्रकार वृन्त पर कई दर्जन केलों की एक पूरी घौद निर्मित हो जाती है ! एक पेड़ पर ऐसी केवल एक ही घौद लगा करती है । तुम्हें यह जानकर अचरज होगा कि एक बार की फसल ले चुकने पर केले का पेड़ काट दिया जाता है और आगामी फसल पुनः नए पौधे से प्राप्त की जाती है !

पेड़ से उतारते समय केला कच्चा और हरा होता है—वह बाद में पकाकर खाने योग्य बनाया जाता है । पकने पर हरा छिलका प्रायः पीला पड़ जाता और गूदा मुलायम, मीठा एवं एक तरह की खुशबू से सुवासित हो जाता है । केले आकार में छोटे-बड़े अनेक प्रकार के होते हैं । सबसे बड़ा केला जावा में पाया जाता है । उसका एक ही फल तीन-चार आदमी का पेट भरने को पर्याप्त होता है ! केले हरे और पीले के अलावा लाल रंग के भी मिलते हैं । इस लोकप्रिय फल के प्रधान उत्पादन-क्षेत्र भारत के अलावा दक्षिण अमेरिका और दक्षिण-पूर्वी एशिया के बहुतेरे देश तथा पूर्वी-पश्चिमी द्वीपपुंजों के टापू हैं ।

अंगूर—रसीले फलों की दुनिया में अंगूर को वही गौरव और सम्मान प्राप्त है, जो कि फूलों के समाज में गुलाब ने पाया है ! जैसा कि पृ० ८२ के चित्र में तुम देख चुके हो, यह अनोखा फल एक प्रकार की बेल पर लगा करता है । यह आकार में प्रायः गोल अथवा कुछ-कुछ लम्बा-सा होता है तथा रंग के लिहाज से हरित-पीत से लेकर जामुनिया-बैंजनी तक विविध वर्णों की छटा अपनी अलग-अलग जातियों में दरशाए रहता है । अंगूर का छिलका बहुत पतला होता है, जिसके नीचे रस से सराबोर अत्यन्त मुलायम फूला हुआ-सा खटमीठा गूदा भरा रहता है । उसमें दो-चार नन्हे-से कड़े बीज भी टके रहते हैं । कुछ ऐसी जातियाँ भी हैं, जिनमें बीज बिल्कुल नहीं होते । ऐसे अंगूर 'बेदाना' कहलाते हैं । शायद तुम्हें मालूम ही होगा कि 'किशमिश' और 'मुनक्का' नामक सुप्रसिद्ध मेवे सुखाए हुए अंगूर ही हैं । सर्वोत्तम जाति के अंगूर फ्रान्स, इटली, स्पेन, पुर्तगाल, अल्जीरिया जैसे भूमध्यसागरीय जलवायु वाले क्षेत्रों के अलावा ईरान, अफगानिस्तान, बलूचिस्तान एवं काकेशश के पर्वतीय प्रदेशों में उपजते हैं । भारत में भी काश्मीर, पंजाब, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश तथा दिल्ली के आसपास काफी अंगूर पैदा किए जाते हैं । पश्चिमी मुल्कों में अंगूर से उत्तम कोटि की मदिरा तैयार की जाती है । हम तुम्हें यह बता दें कि अंगूर की बिरादरी के पौधों की संख्या छः सौ से भी अधिक है । इनके परस्पर संकरण द्वारा वैज्ञानिकों ने इस फल की कई उत्तम नस्लें तैयार कर ली हैं । फलतः यह रसीला फल अब ऐसे क्षेत्रों में भी उपजाया जाने लगा है, जहाँ पहले केवल अमीर वर्ग के

लोग ही विदेशों से मँगाकर उसका स्वाद ले सकते थे
CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh
और सर्वसाधारण के लिए वह एक दुर्लभ फल था।

आम—हम भारतवासियों के लिए 'आम' कोई अनोखा फल नहीं है; कारण वह हमारे देश में कसरत से पैदा होता है। परन्तु संसार के अधिकतर भूभागों के लिए वह एक नितान्त दुर्लभ और अचम्भे की वस्तु है—यहाँ तक कि लाखों-करोड़ों मनुष्यों को वह शायद चखने को तो क्या, देखने को भी नहीं मिलता! यह अद्भुत् अनोखा रसीला फल केवल उष्ण जलवायु में ही पनपता है, इसीलिए भारत को उसने अपनी प्रधान आवासभूमि बना लिया है। इसका परिचय देने की भला हमारे यहाँ किसे आवश्यकता हो सकती है? वही हमारा सबसे अधिक लोकप्रिय तथा सबसे अधिक खाया जानेवाला फल है। उसकी 'कलमी' और 'तुख्मी' नामक दो बृहत् बिरादरियाँ हैं, जिनके अन्तर्गत विविध आकार-प्रकार के पचासों तरह के अलग-अलग जायके और खुशबूवाले आमों का मेला-सा लगा हुआ है। लखनऊ के 'दसहरी', 'सफेदा' और 'चौसा'; महाराष्ट्र का 'हाफुज'; बनारस का 'लँगड़ा' तथा बिहार के 'कृष्णभोग', 'रामभोग' आदि आम अपनी मिठास और खुशबू आदि के लिए विख्यात हैं। यह तो तुम्हें मालूम ही होगा कि आम का पेड़ काफी बड़ा और हरा-भरा होता है। वसन्त ऋतु में जब वह फूलकर मंजरियों से लद जाता है, तो उसकी शोभा देखते ही बनती है।

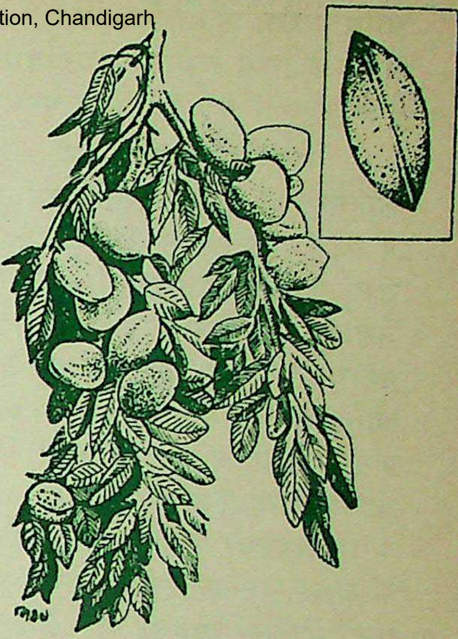

सुप्रसिद्ध मेवा 'बादाम' एक वृक्ष की डालियों पर इसी प्रकार से उपजता है। ऊपर दाहिनी ओर उसका एक फल दिग्दर्शित है।

नीबू, नारंगी, सन्तरा आदि—रसीले फलों का एक महत्वपूर्ण कुनबा 'सिट्रस-परिवार' के उन खट्टे और खटमीठे स्वास्थ्यप्रद फलों का है, जिनके अन्तर्गत नीबू, नारंगी, संतरा और मौसम्बी जैसे हमारे कई एक सुपरिचित लोकप्रिय फल सम्मिलित हैं। इस परिवार के फल विटामिन 'सी' के सर्वोत्तम स्रोत माने जाते हैं। पकी हुई नारंगी का छिलका चटक सेन्दुरिया और नीबू का हलका पीला या तुरंजी रंग का होता है। संतरा और मौसम्बी भी पकने पर पीलापन लिए हुए नारंगी रंग के हो जाते हैं। इन सभी फलों का गूदा रस से भरे हुए अगणित कोशों से बना होता है, जो पतली झिल्ली से मढ़े हुए रवों जैसे जान पड़ते हैं। नारंगी, संतरा और मौसम्बी के गूदे का पिंड कई एक समान फाँकों में बँटा हुआ रहता है, जो संतरे में बड़ी सफाई के साथ अलग-अलग की जा सकती हैं। इनमें से प्रत्येक फाँक में दो या तीन बीज होते हैं। नीबू, नारंगी और मौसम्बी आदि से आकार में छोटा होता है और उसका रस अत्यधिक खट्टा होता है। ये फल आकार में प्रायः गोल होते हैं, परन्तु कुछ नीबू लम्बोतरे भी होते हैं। पतले चिकने छिलकेवाला कागजी नीबू सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। जंबीरी और बिजौरा जाति के नीबू का छिलका मोटा और खुरदरा होता है। इसी कुनबे का 'चकोतरा' नामक खट्टा फल लगभग खरबूजे जितना बड़ा होता है। कलम या पैवंद लगाकर एक जाति के मीठे नीबू भी पैदा किए गए हैं, जिनका आकार संतरे और नारंगी के बराबर होता है। मौसम्बी, माल्टा,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आदि नारंगी के ही विकसित रूप हैं। उनका रस पतला और मीठा होने के कारण बीमार लोगों के लिए अधिकतर उपयोग में लाया जाता है। 'ग्रेप फ्रूट' की भी अनेक उत्तम नस्लें पैदा कर ली गई हैं। यह फल पश्चिमी देशों में विशेष रूप से लोकप्रिय है।

सेब, नाशपाती आदि—हम द्विबीजपत्री आवृतबीज पौधों की विभिन्न बिरादरियों की तालिका प्रस्तुत करते समय यह बात बता चुके हैं कि लगभग सवा तीन हजार उपपरिवारों में बँटे हुए महान् 'गुलाब-कुटुम्ब' ने जहाँ अनेक सुन्दर सुरभित पुष्पों की भेंट दी है, वहाँ उससे उच्च कोटि के अनेक फलों का भी उपहार हमें प्राप्त हुआ है। इनमें सेब, नाशपाती तथा बिही जैसे सुप्रसिद्ध फल भी सम्मिलित हैं। सेब और नाशपाती का परिचय देने की कोई आवश्यकता हमारे देशवासियों के लिए नहीं है; कारण, वे काश्मीर, हिमाचल प्रदेश तथा कुमायूँ, गढ़वाल, आदि उत्तर के पर्वतीय क्षेत्रों में भारी मात्रा में उपजकर भारतवर्ष के सभी शहरों के बाजारों में कसरत से बिका करते हैं। हाँ, बिही से अलबत्ता बहुत कम लोग परिचित होंगे, जो कि प्रायः मध्य एशिया में ही पैदा होता है। सेब और नाशपाती की अनेक बढ़िया किस्में संकरण-विधि से कलम लगाकर पैदा कर ली गई हैं। इस कार्य में सोवियत रूस के मिशुरिन तथा अमेरिका के लूथर बुरबैंक जैसे महान् बनस्पतिशास्त्रियों ने कमाल कर दिखाया है! सेब के पके हुए फलों की लालिमा की छटा देखते ही बनती है। नाशपाती का गूदा सेब की अपेक्षा कुछ कड़ा होता है, परन्तु अब उसकी कुछ ऐसी नस्लें भी विकसित हो चुकी हैं, जिनका गूदा पकने पर सेब से भी अधिक मुलायम एवं मीठा तथा खुशबूदार हो जाता है। बिही पकने पर सुनहले पीले रंग का हो जाता है। वह देखने में अमरूद जैसा होता है। सेब का वृक्ष मूलतः पश्चिमी एशिया का निवासी है। वहीं से कालान्तर में वह अनेक देशों में फैल गया है। आज के दिन अकेले संयुक्त राज्य (अमेरिका) में डेढ़ करोड़ टन सेब के फल पैदा किए जाते हैं! यह सारे संसार की इस फल की उपज का पाँचवाँ अंश है।

अनन्नास, शहतूत, अंजीर और कटहल—गुणभेदानुसार फलों के वर्गीकरण के सिलसिले में, 'संग्रथित' या 'मिश्रित' फलों के उदाहरण के रूप में हम इससे पहले ही अनन्नास, शहतूत, अंजीर और कटहल के नाम गिना चुके हैं। साथ ही यह भी बता चुके हैं कि इस प्रकार के फलों की सृष्टि केवल एक फूल से न होकर पुष्प-व्यूह के अनेकों फूलों की सम्मिलित प्रक्रिया से हुआ करती है। यद्यपि ये सभी फल बाजारों में आम तौर पर हमें देखने को मिला करते हैं, फिर भी उनके बारे में हमारे मन में यह खयाल उपजे बिना नहीं रहता कि अन्य फलों से ये सर्वथा निराले और असाधारण हैं। 'अनन्नास' तो अपनी विचित्र शक्ल के कारण एक फल के बजाय रामबाँस या घीकुँआर जैसे किसी पौधे की गाँठनुमा पेड़ी-सा जान पड़ता है! इसी तरह 'शहतूत' भी मानो किसी प्रकार की दंदानेदार रोमयुक्त पुष्पमंजरी अथवा हरे, लाल, बैंजनी या काले रंग के लम्बे कीड़ों की आकृति की भ्रान्ति हमारे मन में पैदा कर देता है! उधर 'कटहल' की शक्ल-सूरत अपने चमड़े जैसे चीमड़ और खुरदुरे मोटे आवरण पर उठे हुए नुकीले कँगूरों के कारण ऐसी डरावनी-सी जान पड़ती है कि जिसने उसे पहले कभी न देखा हो, वह उसे सामने पाकर चौंके बिना नहीं रह सकता! हाँ, 'अंजीर' में अलबत्ता ऊपरी तौर पर कोई अनोखापन नहीं झलकता। परन्तु जब उसकी असलियत का हाल हमें वैज्ञानिकों से ज्ञात होता है, तो उसे इन सभी फलों से अधिक आश्चर्यजनक और निराली कृति मानने को हमें विवश हो जाना पड़ता है। आओ, संक्षेप में इन चारों विचित्र फलों का कुछ हाल तुम्हें बता दें।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'अनन्नास' (जैसा कि उसके पुर्तगीज नाम से ही स्पष्ट है) हमारे देश में बाहर से आया हुआ एक विदेशी फल है। वह मूलतः मैक्सिको और दक्षिण अमेरिका का निवासी है। इस फल के सिन्नेदार छिलके के नीचे गूदे के पिंड की कोर पर कुछ अँखुए-से छिपे रहते हैं, जिन्हें अलग करके उसकी गोलाकार कत्तलें काटी जाती हैं। अनन्नास स्वाद में ख़टमीठा होता है और उससे एक सुहावनी खुशबू महकती है। आजकल सबसे बढ़िया अनन्नास हवाई द्वीप, मलाया, सिंगापुर और पूर्वीय-पश्चिमी द्वीपपुंजों में पैदा होता है।

'शहतूत' की हरी, लाल, काली और सफेद ये चार जातियाँ हैं। यह नाज़ुक रसीला फल पकने पर बहुत मीठा हो जाता है। इसकी सर्वश्रेष्ठ किस्में एशिया में ही मिलती हैं। शहतूत की पत्तियाँ रेशम पैदा करनेवाले कीड़ों का प्रिय आहार हैं। इसीलिए जहाँ रेशम-उत्पादन का कारोबार होता है, वहाँ इसके पेड़ कसरत से उगाये जाते हैं।

'अंजीर' भूमध्यसागरीय जलवायु के क्षेत्रों में पैदा होनेवाला एक मशहूर पौष्टिक फल है, जो दुनिया भर के बाजारों में सूखे मेवे के रूप में बिकने को आता है। इस फल का अनोखापन इस बात में है कि उसकी रचना पुष्पाधार के परिवर्द्धित होकर एक थैली जैसा रूप ग्रहण कर लेने के परिणामस्वरूप होती है। उसके कलेवर के नतोदर आशय में जिन असंख्य दानेनुमा बीजों का अंबार लगा रहता है, वे सब दरअसल उक्त आशय में एकत्र अगणित नन्हें-नन्हें पुष्पों से उपजा करते हैं। इन पुष्पों का संसेचन एक विशेष जाति के बर्रनुमा कीट द्वारा बड़े अनोखे ढंग से हुआ करता है।

'कटहल' को हमारे यहाँ कौन नहीं जानता? यह फल कच्ची दशा में चाव के साथ तरकारी के रूप में काम में लाया जाता और पकने पर भी अपनी मिठास के कारण आम तौर पर खाया जाता है, यद्यपि उस समय उससे एक तरह की हीक आने लगती है। कटहल का गूदा मोटे रेशों से निर्मित कोयों का संग्रथित समूह-सा होता है। इन्हीं कोयों में उसके बीज छिपे रहते हैं। इस विचित्र फल के मोटे, चीमड़, कँगूरेनुमा श्रृंगों से मढ़े हुए छिलके को काटने पर एक तरह का लसीला दूध-सा निकलता है, जो हाथों में चपकता है। शायद तुम्हें यह अद्‌भुत बात मालूम न होगी कि कटहल के फल अपने वृक्षों की न केवल डालियों पर, बल्कि तने के मोटे धड़ पर भी और कभी-कभी जमीन से बाहर निकल आनेवाली खुली जड़ों तक के ऊपर लगा करते हैं! इन विचित्र फलों का डीलडौल और वजन भी कम नहीं होता! प्रायः मन सवा मन तक के तौल के एवं हाथ डेढ़ हाथ तक लम्बे-चौड़े कटहल बाजारों में बिकने को आते हुए देखे गए हैं!

शरीफा, स्ट्रॉबेरी, रास्पबेरी आदि समूहफल––हम पहले बता चुके हैं कि कुछ फल ऐसे हैं, जिनमें अनेक नन्हें-नन्हें फलों ने पुंजीभूत होकर एक तरह के समूहफल की-सी शक्ल ले रखी है। हमारे देश के उष्ण भागों में आम तौर पर पाया जानेवाला **'शरीफा'** तथा **'स्ट्रॉबेरी'**, **'रास्पबेरी'**, **'ब्लेकबेरी'**, **'लोगनबेरी'** जैसे कतिपय विलायती फल इसी कोटि में परिगणित होते हैं। तुमने गौर किया होगा कि शरीफे के खाकी रंग के ऊबड़खाबड़ आवरण पर आँखों जैसी कुछ रचनाएँ उभरी रहती हैं। ये 'आँखें' वस्तुतः उन अनेक लघु फलों के अपने-अपने बाह्यावरणों की सूचक हैं, जिनके संयोग से इस अनूठे पुंजफल का निर्माण हुआ है। शरीफे का गूदा अनेक कोयों का समूह होता है। ये कोये, जिनमें इस फल के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चिकने काले बीज छिपे रहते हैं, छिलके पर की 'आँखों' से तरतीबवार संबद्ध रहते हैं। पका हुआ शरीफा खाने में बड़ा मीठा और खुशबूदार होता है। इस वर्ग के 'स्ट्राॅबेरी', 'रास्पबेरी' आदि जिन विलायती फलों का उल्लेख ऊपर किया गया है, उनमें भी अनेक 'अष्टिफल' (ड्रूप) परस्पर पुंजीभूत होते हैं। यह बात उनके बाह्यावरण की बनावट में साफ तौर से झलकती है। ये मधुर रसीले फल केवल शीतप्रदेशों में ही पैदा होते हैं। वहाँ कहीं-कहीं वे वन्य दशा में अपने आप उगते हुए भी पाए जाते हैं। पिछले दिनों वैज्ञानिकों ने कलम लगाकर संकरण-विधि से इन फलों की बहुत उत्तम नस्लें पैदा कर ली हैं।

आड़ू, आलूचा, चेरी, खूबानी, अनार आदि—फलों की कई एक स्वास्थ्यप्रद किस्में ठंढे पर्वतीय क्षेत्रों में ही उपजती हैं। इनमें **'आड़ू'** (जो कि अपने रोएँदार मखमली छिलके पर युवतियों के रक्तिम कपोलों की-सी लालिमा निखराये रहता है) तथा **'आलूचा'** (जिसके चटक लाल अथवा पीले रंग के पतले बाह्यावरण के नीचे अत्यन्त रसीला खटमीठा गूदा संगृहीत रहा करता है) मेवाफरोशों की दुकानों पर बरबस दर्शकों की निगाह को अपनी ओर खींच लेते हैं। इन गूदेदार फलों के भीतर एक कठीली गुठली मौजूद रहती है, जिसमें उनका बीज मींगी के रूप में सुरक्षित होता है। सूखी दशा में आलूचा **'आलूबुखारा'** के नाम से बाजारों में मिला करता है। हमारे देश में प्राय: **'आलूबालू'** या **'गिलास'** के नाम से मशहूर ठंढे मुल्कों का सुप्रसिद्ध फल **'चेरी'** तथा **'खूबानी'** (जर्दालू) भी इसी वर्ग के स्वादिष्ट मेवे हैं। 'खूबानी' की गुठली में से बादाम से मिलती-जुलती मींगी निकलती है, जिससे एक प्रकार का तैल भी निकाला जाता है।

इन शीतप्रदेशीय फलों में **'अनार'** अपनी अनूठी बनावट के लिहाज से सर्वथा निराला है। उसकी 'बेदाना' और 'कंधारी' नामक दो उत्तम किस्में अफगानिस्तान के ठंढे पठारों पर उपजती हैं और हमारे देश के बाजारों में वे ऊँची कीमत पर बिका करती हैं। अनार का छिलका कड़ा और चीमड़ होता है, जिसे अलग कर देने पर मणियों की तरह चमचमाते हुए रस से भरे गुलाबी, लाल या सफेद दाने पंक्तिबद्ध सजे देख पड़ते हैं। 'कंधारी अनार' में इन दानों में नन्हें-नन्हें कड़े बीज भी होते हैं, परन्तु 'बेदाना अनार' के दाने लगभग बीज-रहित जैसे जान पड़ते हैं। अनार के मझोले कद के छतनार वृक्ष अपने छोटे-छोटे लाल फूलों के खिलने पर बड़े ही सुन्दर लगते हैं। पश्चिमी हिमालय तथा सुलेमान की पहाड़ियों पर अनार के वृक्ष वन्य दशा में अपने आप उगा करते हैं। इस वृक्ष की 'दाड़िम' नामक एक घटिया जाति हमारे देश के मैदानी इलाकों में भी प्राय: बाग-बगीचों में देखने को मिला करती है।

लीची, फालसा, पपीता और टमाटर—क्या तुम्हें इस बात का पता है कि गरमी के महीनों में अपनी गुलाबी छटा से समस्त उत्तर भारतीय नगरों में एक अजीब समाँ बाँध देनेवाला अनोखा रसीला फल **'लीची'** यद्यपि आज के दिन बिहार और बंगाल में ढेरों उपजता है, तथापि एक समय था जबकि यहाँ किसी ने उसका नाम तक नहीं सुना था ? यह नाजुक मीठा फल मूलत: चीन देश का निवासी है, जहाँ से लाकर पिछले दिनों वह भारत में प्रचलित किया गया है। इस फल की उपमा प्राय: लोग रसगुल्ले से दिया करते हैं ! इसकी इस प्रशंसा की यथार्थता का प्रमाण सचमुच ही यह फल देता है, जबकि उसके पतले दंदानेदार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गुलाबी छिलके को उतारकर हम गोलमटोल शक्ल के शहद जैसे मीठे रस से भरे उसके श्वेत गूदे को अपने मुँह में रखते हैं। तुम्हें यह जानकर कुतूहल हुए बिना नहीं रहने का कि वनस्पति-समाज की बिरादरी के लिहाज से इस सुहावने फल का वृक्ष और सदियों से हमारे यहाँ कपड़े धोने के काम में आनेवाला 'रीठा', दोनों एक ही कुनबे के अत्यन्त निकट के रिश्तेदार हैं!

'लीची' की तरह **'फालसा'**, **'पपीता'** और **'टमाटर'** भी हमारे देश में बाहर से लाकर प्रचलित किए गए विदेशी फल हैं। 'फालसा' ईरान से आया है और 'पपीता' तथा 'टमाटर' दक्षिण अमेरिका से। **'फालसा'** ऊदे लाल रंग का एक अत्यन्त नन्हा-सा खटमीठा फल है, जो बाग-बगीचों में छड़ीनुमा सीधी खड़ी डालियोंवाले एक छोटे-से पेड़ पर लगा करता है। इस रोचक फल का गरमियों में शरबत बनाकर पिया जाता है। **'पपीता'** आकार और डीलडौल में नारियल जैसा होता है। वह एक निराले ढंग के पेड़ पर उपजता है, जिसमें डालियों का सर्वथा अभाव होता है। इस पेड़ की रेंडी की-सी पत्तियों के वृन्त भीतर से पोले होते हैं। इस फल का रंग पकने पर भीतर-बाहर केसरिया जैसा हो जाता है और उसका गूदा खरबूजे की तरह मुलायम होकर मिठास से भर जाता है। पपीते के बीज काली मिर्च की शक्ल के होते हैं और वे गूदे की मध्यवर्ती पोल में काफी संख्या में एकत्र रहते हैं। अपने पाचक गुणों के कारण यह फल बहुत महत्व का माना जाता है। इसी की भाँति **'टमाटर'** भी (जो तरकारी के रूप में आजकल आम तौर पर काम में लाया जाने लगा है) पिछले कुछ वर्षों से बड़ा लोकप्रिय फल बन गया है। यह फल पकने पर चटक लाल रंग का हो जाता है और उसका गूदा एक तरह के खट्टे रस से सराबोर हो जाता है। यह फल बैंगन की जाति के एक छोटे-से पौधे पर उपजता है, जो खेतों और बगीचों में कसरत से उगाया जाता है।

तरबूज, खरबूजा, ककड़ी, फूट आदि——गूदेदार फलों के बखान के इस सिलसिले में अंत में जमीन पर रेंगती हुई बेलों पर लगनेवाले तरबूज, खरबूजा, फूट, कद्दू, लौकी, ककड़ी आदि उन तरह-तरह के चित्र-विचित्र फलों के बारे में भी दो शब्द कहना अप्रासंगिक न होगा, जोकि गरमी और बरसात के मौसम में हमारे खेतों में कसरत से पैदा होते हैं और बड़े चाव

पिछले कुछ वर्षों में विज्ञान के बाजीगरों ने एक ही पौधे पर अलग-अलग जाति के वनस्पतियों की कलमें लगाकर विचित्र चमत्कार कर दिखाए हैं। प्रस्तुत चित्र में एक ही तने पर दो प्रकार के फलों की उत्पत्ति की ऐसी ही एक अनहोनी-सी झाँकी दिग्दर्शित है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से खाए जाते हैं। इनमें डीलडौल के लिहाज से 'तरबूज' और 'कुम्हड़ा' शायद कटहल को छोड़कर वनस्पति-जगत् के सबसे बड़े फलों का कीर्तिमान स्थापित किए हुए हैं—ये वजन में लगभग अस्सी किलोग्राम तक और लम्बाई में पौन मीटर तक पहुँचते देखे गए हैं! **'तरबूज'** का छिलका प्रायः गहरे हरे रंग का होता है और काटने पर उसके भीतर से पनीले मीठे रस से सराबोर एक तरह का झिल्लीदार लाल गूदा निकलता है। इसी गूदे के बीच-बीच में इस भीमकाय फल के छोटे-छोटे काले या लाल बीज छिपे रहते हैं। यह फल गरमियों में तरावट के लिए बड़े चाव से खाया जाता है। **'कुम्हड़े'** का गूदा रंग में पीला और काफी कड़ा होता है। इस फल का उपयोग केवल तरकारी के तौर पर ही किया जाता है। पर स्वाद, मिठास और खुशबू के लिहाज से इस बिरादरी का सबसे लोकप्रिय फल निस्संदेह **'खरबूजा'** ही है, जिसकी लखनवी और जौनपुरी किस्में अपनी उत्तमता के लिए बेजोड़ समझी जाती हैं। इस फल की एक बहुत ही बढ़िया किस्म अफगानिस्तान में होती है, जिसे **'सरदा'** कहते हैं। यह फल बहुत मीठा और खुशबूदार होता है।

बेलों पर उपजनेवाले फलों के इस बृहत् कुनबे के अन्य उल्लेखनीय सदस्य हैं—छोटे बड़े आकार की अनेक जाति की **'ककड़ियाँ'** (जिनमें लखनऊ की महीन ककड़ी तो नजाकत में अपना सानी नहीं रखती); अजगर की खाल की-सी चित्तियों से सुशोभित खटमीठे **'फूट'** (जो पकने पर अपने आप फट जाया करते हैं) तथा **'लौकी'**, **'चचीड़ा'**, **'तुरई'**, **'परवल'**, **'करेला'** आदि अनेक प्रकार की तरकारियाँ, जिनसे हम सब अच्छी तरह से सुपरिचित हैं। इन फलों के रूप-आकार तथा गुण-धर्म विषयक अनोखेपन को देखकर कलाकार कुदरत की विचित्र माया के प्रति नतमस्तक हुए बिना कौन रह सकता है?

फलों की दुनिया के अन्य चमत्कारपूर्ण उपहार

जैसा कि इस प्रकरण के आरंभ ही में बताया जा चुका है, फलों के रूप में प्रकृति ने जो अनमोल उपहार हमें दे रक्खे हैं, उन्हीं के आधार पर बहुत-कुछ हमारी आज की सभ्यता-संस्कृति की पेचीदा अर्थ-व्यवस्था तथा इस पृथ्वी पर हमारा अस्तित्व निर्भर करता है। तो फिर, इन अनोखे फलों की महिमा को कोई कहाँ तक गिनाए और किस-किस फल के गुणों एवं खूबियों का बखान किया जाय? हम अधिक से अधिक यहाँ केवल इतना ही कर सकते हैं कि बानगी के तौर पर अलग-अलग वर्गों के कुछ प्रतिनिधि नमूनों का संक्षेप में जिक्र कर दें। तो लो, कुछ और बानगियाँ देखो!

बादाम, पिस्ता, काजू, अखरोट आदि गिरीदार सूखे मेवे—यह तो तुम्हें ज्ञात हो चुका है कि किशमिश, मुनक्का, अंजीर, छुहारा, नारियल की गिरी आदि सुप्रसिद्ध लोकप्रिय मेवे कतिपय फलों के ही सूखे रूप हैं। आओ, इसी क्रम में ऐसे अन्य कुछ पौष्टिक सूखे मेवों के बारे में भी थोड़ी-सी जानकारी करा दें, जो अपनी स्वादिष्ट मींगियों की गिरी के लिए मशहूर हैं और इसी कारण 'गिरीदार सूखे मेवे' कहलाते हैं। इनमें सबसे कीमती और प्रख्यात हैं—**'बादाम'**, **'पिस्ता'**, **'अखरोट'**, **'काजू'**, **'चिरौंजी'**, **'चिलगोजा'** और **'चेस्टनट'**।

'बादाम' विशेषतया पश्चिमी एशिया में ही पैदा होता है। यह मझोले कद के एक शीतप्रदेशीय पर्वतीय वृक्ष का फल है। इस मेवे के ऊपरी कड़े छिलके को तोड़ने पर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसके भीतर से एक मींगी निकलती है, जो अत्यधिक पौष्टिक मानी जाती है। यह मींगी (जो बादाम की गिरी कहलाती है) खाने में बड़ी स्वादिष्ट होती है। यह मींगी से भी अधिक कीमती सूखा मेवा है, अफगानिस्तान से लेकर तुर्की तक के अनेक पश्चिमी एशियाई देशों तथा भूमध्यसागरीय योरपीय मुल्कों में नाटे कद के एक पेड़ का गिरीदार फल है। इसकी हरे रंग की खुशबूदार स्वादिष्ट मींगी पर चढ़ी हुई लाल बीजावरण की पतली-सी झिल्ली देखने में बड़ी खुशनुमा लगती है।

'अखरोट' भी विशेष रूप से पर्वतीय शीतप्रदेशों के एक प्रसिद्ध इमारती लकड़ीवाले ऊँचे पेड़ का मशहूर गिरीदार फल है। इसका ऊपरी छिलका काष्ठवत् कड़ा होता है तथा मींगी मनुष्य के भेजे की शक्ल की हुआ करती है। इस मेवे की गिरी में तैल की मात्रा बादाम से भी अधिक होती है। **'चिरौंजी'** हमारे देश के विंध्य-सतपुड़ा के पर्वतीय इलाकों के जंगली 'पियार वृक्ष' के फालसे जैसे गोल-गोल नन्हे फलों के मीठे गूदे के नीचे छिपी चपटी-सी गुठली में से निकलनेवाली गिरी का नाम है। यह स्वाद में बादाम-पिस्ते जैसी होती है। इसी तरह **'काजू'** भी प्रमुख रूप से हमारे ही देश में पैदा होनेवाला एक स्वादिष्ट लोकप्रिय मेवा है। इस कीमती मेवे की अँकुए की तरह मुड़ी हुई बड़ी-सी मींगी काजू-वृक्ष के नाशपाती की शक्ल के फल के सिरे से जुड़ी हुई एक गुठलीनुमा खोल में विचित्र ढंग से बाहर की ओर निकली रहती है। इस खोल के भीतरी पृष्ठ एवं मींगी के ऊपर चढ़े हुए फलावरण की मध्यवर्ती पर्त में एक विषैले तैल का स्तर रहा करता है, जिसके लगने से शरीर पर दुःखदायी छाले पड़ जाया करते हैं। इस विष की पर्त को बचाकर मींगियों का आवरण बड़ी सावधानी के साथ दूर किया जाता है। तदनंतर उन्हें विशेष रीति से आग में भूना जाता है। तब कहीं यह मेवा खाने योग्य हो पाता है।

इस बिरादरी के अन्य दो प्रतिष्ठित सदस्य **'चिलगौजा'** और **'चेस्टनट'** भी अपने उत्तम स्वाद के खातिर काफी लोकप्रिय हैं। ये मेवे केवल शीतप्रदेशों में ही उपजते हैं—'चिलगौजा' चीड़ या सनोवर की जाति के एक वृक्ष पर और 'चेस्टनट' इसी नाम के अन्य एक पेड़ पर। चिलगौजे की सूचिकाकार मींगियाँ बहुत महीन होती हैं, परन्तु 'चेस्टनट' काफी बड़ा होता है। वह आग में भूनकर खाया जाता है।

इसी सिलसिले में अपने देश के जनसाधारण-वर्ग के उस सबसे प्रिय गिरीदार मेवे **'मूँगफली'** का भी उल्लेख अप्रासंगिक न होगा, जो कि मूल्य में ऊपर गिनाये गए कीमती मेवों से अपेक्षाकृत काफी सस्ता होने के बावजूद पौष्टिक तत्व की दृष्टि से तथा जायके के लिहाज से किसी भी भाँति घटिया नहीं कहा जा सकता। इस सुपरिचित सर्वसुलभ मेवे की सबसे अनोखी विशेषता तो यह है कि वह कृषकों द्वारा वृहत् परिणाम में खेतों में उपजाया जाता है। शायद तुम्हें इतना तो मालूम ही होगा कि मूँगफली अपने पौधों पर, अन्य फलों की तरह बाहर पैदा न होकर, जमीन के अन्दर जड़ों के आसपास फैलकर उपजती है! अन्य अनेक गिरीदार मेवों की तरह इसकी मींगियों में भी तैल की मात्रा बहुत अधिक होती है, अतः हमारे खाद्य तैल की पूर्ति का एक बहुत बड़ा स्रोत यही सस्ता मेवा है!

काली मिर्च, इलायची, जायफल आदि मसाले भी फलों की दुनिया की ही देन हैं—तुम्हें यह जानकर अचंभा होगा कि फलों की दुनिया से हमें केवल मीठे पौष्टिक मेवे ही नहीं मिलते, बल्कि हमारे भोजन को चटपटा और सुगंधित बनानेवाले बहुतेरे मसाले

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भी उसी के भंडार से हमें प्राप्त होते हैं। उदाहरण के लिए, लाल एवं काली मिर्च, सफेद और स्याह जीरा, धनिया और सौंफ, मेथी और अजवायन, छोटी और बड़ी इलायची, जायफल और जावित्री जैसे सभी प्रमुख मसाले फलों के रूप में पौधों पर ही पैदा होते हैं।

'काली मिर्च' (जो हमारे देश में केरल प्रदेश में बहुत अधिक पैदा होती है) एक प्रकार की छोटी-सी लता पर नन्हें-नन्हें गोल फलों के रूप में उपजती है। ये फल वैसे तो लाल रंग के होते हैं, परन्तु सूखने पर काले पड़ जाते हैं। अपने अत्यन्त तिक्त चरपरेपन के कारण ही काली मिर्च व्यंजनों को चटपटा बनाने के लिए मसाले के तौर पर काम में लायी जाती है। **'इलायची'** भी केरल, मैसूर, कुर्ग आदि दक्षिण भारतीय क्षेत्रों में कसरत से उपजती है। इस मूल्यवान् सुगंधित फल की दो किस्में हैं—'सफेद' (या छोटी) इलायची और 'काली' (या बड़ी) इलायची। छोटी इलायची का उपयोग मिठाइयों आदि को खुशबूदार बनाने तथा पान, सुपारी आदि के साथ खाने के लिए होता है। बड़ी इलायची तरकारियों और नमकीन व्यंजनों के लिए मसाले के रूप में प्रयुक्त होती है। इलायची एक तरह की ढेंढियों के रूप में गुच्छों में लगा करती है। इसके छोटे-छोटे पौधे नीलगिरि-क्षेत्र के वनों में अपने आप भी उगा करते हैं। **'जायफल'** प्रायः दक्षिणी-पूर्वी एशिया के जावा, मलाका आदि द्वीपों में ही पैदा होता है। इसके वृक्ष काफी ऊँचे होते हैं और उनकी एक खास विशेषता यह होती है कि उनके पुंकेसर और स्त्रीकेसर नर और मादा रूपी दो अलग-अलग तरह के वृक्षों पर रहा करते हैं। अतः जब नर वृक्ष से उड़कर पराग मादा वृक्ष के पुष्पों को संसेचित करता है, तभी उनमें फल लग पाता है। जायफल के ऊपर एक छिलका चढ़ा रहता है। वही **'जावित्री'** के रूप में बाजारों में मिला करता है। उक्त छिलके के उतार देने के बाद मध्यवर्ती बीज पर पुनः एक खोल चढ़ी हुई मिलती है। इस खोल को हटा देने पर ही जायफल का वह खुशबूदार बीज उपलब्ध होता है, जिसे सुपारी की तरह काटकर या कुतरकर व्यंजनों एवं औषधियों आदि में काम में लाया जाता है।

वह अनोखा फल, जो हमारा तन ढकने में मदद देता है—अंत में, फलों की दुनिया के इस चमत्कार पर भी जरा गौर करो कि उससे हमें न केवल तरह-तरह के स्वादिष्ट मेवों, पौष्टिक अनाजों, बेशकीमती दवाइयों, सुगंधित मसालों, भाँति-भाँति की तरकारियों आदि की ही भेंट मिली है, बल्कि हमारा तन ढकने का भी सबसे कारगर इंतजाम प्रकृति ने एक फल के द्वारा ही पूरा किया है! यह व्यवस्था कुदरत ने **'कपास'** का अनोखा फल उपजाकर की है, जिससे हमें 'रुई' जैसी अद्भुत अनोखी वस्तु प्राप्त होती है। अपने देश में कृषि द्वारा कसरत से पैदा किये जानेवाले इस मूल्यवान् पदार्थ का परिचय देने की भी क्या किसी के लिए यहाँ आवश्यकता हो सकती है? हम सभी जानते हैं कि किस प्रकार वर्षाकाल के आरंभ में खेतों में 'बिनौले' नामक कपास के बीजों को बोकर सैकड़ों-हजारों एकड़ भूमि में उसके पौधे कतारबन्द उगाए जाते और बरसात के बाद सुन्दर लाल-पीले फूलों की दर्शनीय झाँकी दरसाकर जब उक्त पौधे विचित्र प्रकार के ढेंढ़ों रूपी फलों से लद जाते हैं, तो उत्सुकतापूर्वक यह प्रतीक्षा की जाती है कि कब वे ढेंढ़े पककर फटें और उनमें जमा सफेद मुलायम रुई चुन-चुनकर बटोर ली जाय? जरा सोचो कि यदि यह फल न होता, तो आज हमारे चरखे और करघे तथा सूती कपड़े बनाने के कारखाने कहाँ होते एवं हमारे तन ढकने की समस्या कितनी विकट हो जाती?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकृति के बगीचे के अचरजभरे चमत्कारों का परिचय प्राप्त करते समय, पिछले प्रकरणों में सरसरी तौर पर संपूर्ण वनस्पति-संसार पर एक विहंगम दृष्टि हम डाल चुके हैं। आओ, अब पौधे को तनिक नजदीक से देखा जाय और यह पता लगाया जाय कि अपनी इस विलक्षण कृति को कुदरत ने किस प्रकार के साँचे में ढाला है तथा जन्म से लेकर जीवन के अंतिम क्षण तक यह करामात किन क्रियाओं में अनवरत लीन रहती है! इस अध्ययन के क्रम में, हम अपने सन्मुख वनस्पति-समाज के ऐसे समुन्नत स्तर के पौधे का आदर्श रखकर ही जाँच-परख करेंगे, जिसमें 'जड़', 'तना', 'पत्ती', 'फूल', 'फल', 'बीज' आदि अवयवों का समुचित विकास हो चुका है तथा जिसकी प्रजनन-व्यवस्था उस मंजिल पर पहुँच चुकी है, जहाँ सरल कोशिका-विभाजन द्वारा वंश-विस्तार की आदिम प्रणाली को पीछे छोड़कर पौधा फूल से फल एवं बीज उपजाने की प्रगतिशील विधि से काम लेने लगा है। अगले पृष्ठ पर दिग्दर्शित चित्र में इसी कोटि के पौधे की एक परिकल्पना सरल रूप में प्रस्तुत की गई है। उसी को आधार बनाकर पहले हम पौधे की बनावट का अध्ययन करेंगे, तदनंतर उसकी क्रियाओं की भी जानकारी प्राप्त करेंगे।

पौधे का शरीर-विधान—उसके विभिन्न अंग और उनका कार्य

जिस प्रकार प्राणियों के शरीर, बाहरी दिखावे में मात्र एकांगी रचना जान पड़ने पर भी, अपने अंचल में अलग-अलग कार्य करनेवाली कई एक इन्द्रियों को बसाये रहते हैं, उसी तरह से वनस्पतियों के कलेवर भी, ऊपरी तौर से विभिन्न अंगों से सुसज्जित होने का स्पष्ट आभास न देते हुए भी, यथार्थतः अनेक अवयवों के समवाय के रूप में ही गठित हैं। चूँकि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

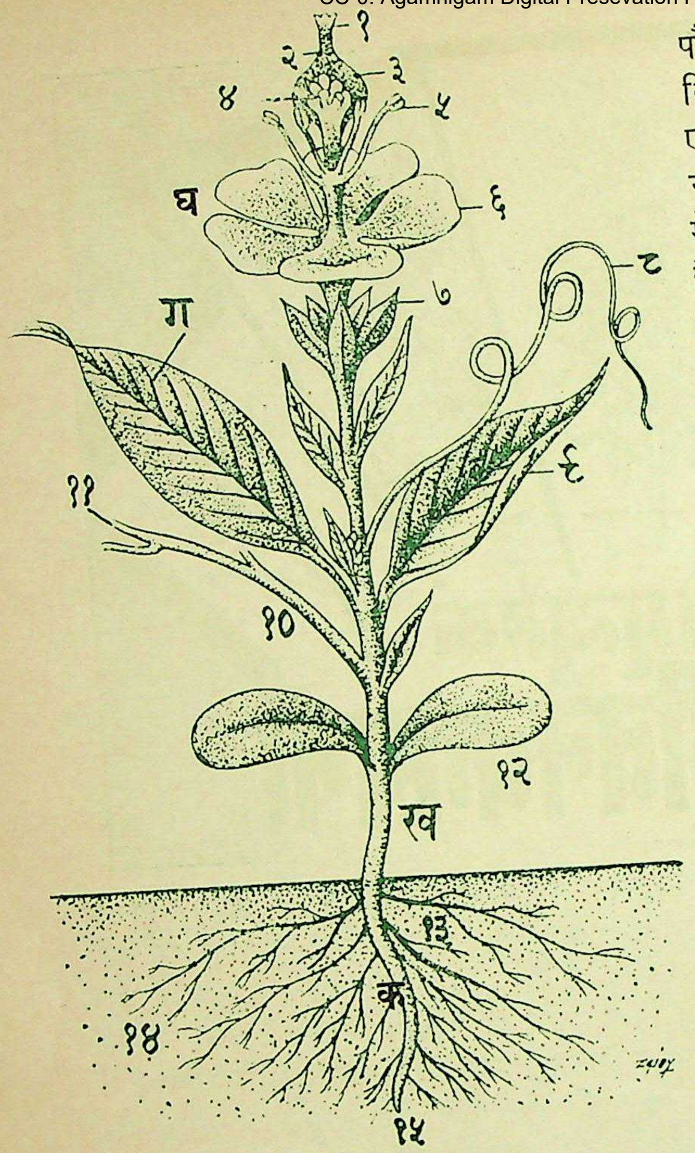

पौधे का अंग-विधान :: क–'जड़'; ख–'तना'; ग–'पत्ती'; घ–'फूल' [१. वर्तिकाग्र; २. वर्तिका; ३. अंडप; ४. बीजाण्ड; ५. परागकोश; ६. दलपुंज या पंखुड़ी; ७. बाह्य दल; ८. प्रतान; ९. पत्रदल; १०. शाखा; ११. कंटक; १२. बीजपत्र; १३. प्रधान मूल; १४. तन्तुक; १५. मूल छद ।] यह किसी वास्तविक पौधे की यथार्थ छबि नहीं, अपितु केवल एक परिकल्पित आदर्श चित्र है, जिसमें पौधे के प्रधान अंग–उपांग सूचित किए गए हैं ।

पौधे ज्यादातर भूमि में रोपे हुए ही दिखाई देते हैं, अतः उनके कलेवर का एक अंश सदैव जमीन के भीतर छिपा रहता है। यह भूमिगत भाग अपने दायरे में एक महत्वपूर्ण अंग को लिये रहता है। यह अंग कहलाता है **'जड़'**, जिसके द्वारा पौधा धरती से न केवल अपना आहार प्राप्त करता, अपितु उसकी मिट्टी में अपने आपको दृढ़ता से रोपे रहने में भी अनमोल सहायता पाता है। उधर उसके कलेवर का जो भाग जमीन से बाहर निकला रहता है, वह अपने भुजप्रसार में **'पत्ती'**, **'फूल'**, **'फल'** आदि अन्य अनेक महत्वपूर्ण अवयवों को बसाये रहता है, जिनके कि बूते पर पौधा हरा-भरा एवं सजीव जान पड़ता है। इस बाह्य अंश के शाखा-प्रशाखा-युक्त दृढ़ भाग को ही वैज्ञानिकों की बोली में **'तना'** कहकर पुकारा जाता है।

इस प्रकार शरीर-रचना के लिहाज से हर सामान्य पौधे के कलेवर को निम्न पाँच प्रधान अवयवों द्वारा संघटित माना जा सकता है:—

१. **'जड़'**—जोकि भूमि से आहार उपलब्ध करने के साथ-साथ पौधे को दृढ़तापूर्वक जमीन में रोपे रहने में भी मददगार है।

२. **'तना'**—जिसे हम पौधे के अन्य अंगों को धारण करनेवाला प्रमुख आधारस्तंभ या 'धड़' मान सकते हैं।

३. **'पत्ती'**—जो पौधे की वह महान् रसायनशाला है, जिसके बूते पर वह हरा-भरा रहता, श्वास-प्रश्वास द्वारा कार्बन तथा ऑक्सिजन की अपनी आवश्यकता-पूर्ति करता एवं अपने खाद्य रसों का निर्माण करता है।

४. **'फूल'**—जिसे पौधे की जननेन्द्रिय कहा जा सकता है। इसकी चित्र-विचित्र छटा तथा गंधों से लुभाकर कीट-पतिंगे पौधे का एक अति महत्वपूर्ण कार्य साधा करते हैं।

५. **'फल'**—जिसमें पौधे की नस्ल को बनाये रखने एवं उसका वंश-विस्तार करने के मूल्यवान् साधन 'बीज' का भंडार रहा करता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इन सभी अंगों के प्रकृति द्वारा अपने-अपने विशिष्ट कर्त्तव्य निर्धारित कर दिए गए हैं, अतः उन कर्त्तव्य-कर्मों के अनुरूप ही अलग-अलग ढंग से इनकी रचना की गई है। तदनुसार ही आजीवन उनकी अपनी-अपनी क्रियाएँ संपन्न हुआ करती हैं। आओ, अब इन विशिष्ट अंगों को जुदा-जुदा लेकर उनकी बनावट तथा कारगुजारी के बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त की जाय!

जड़ें—क्या और क्यों?

तुम्हें यह तो मालूम ही है कि जीव-जन्तुओं की तरह पौधों को भी अपने गुजर-बसर के लिए 'आहार' की निरन्तर जरूरत पड़ा करती है। उक्त आहार में कार्बन, नाइट्रोजन, ऑक्सिजन, हाइड्रोजन, गंधक, फास्फोरस, सोडियम, पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, क्लोरीन, लोहा, मैंगनीज, अल्यूमीनियम, सिलिकन आदि विविध रासायनिक तत्त्वों का समावेश होता है। इनमें से कुछ तत्त्वों को तो पौधे सीधे वायुमंडल से ही प्राप्त कर लेते हैं, परन्तु उनका अधिकांश उन्हें उस जमीन की मिट्टी से ही उपलब्ध हो पाता है, जिसमें कि वे अपने पैर गड़ाये खड़े रहते हैं। इस कार्य में जो अंग उनकी मदद करते हैं, वही **'जड़'** या **'मूल'** हैं। ये महत्वपूर्ण अंग उन्नत श्रेणी के सभी पौधों में जमीन के अंदर विद्यमान पाए जाते हैं।

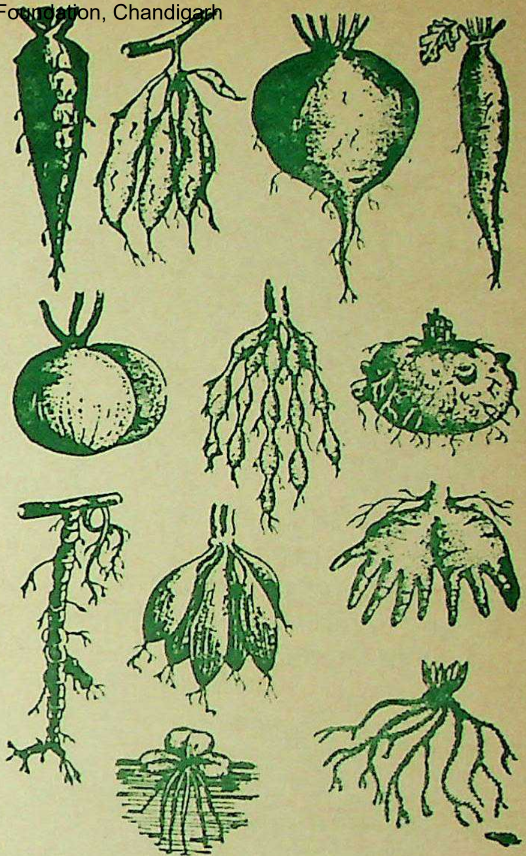

विभिन्न पौधों में परिस्थितियों की मजबूरी से जड़ों ने तरह-तरह के रूप धारण कर लिए हैं। यहाँ कतिपय उदाहरण दिग्दर्शित किए जा रहे हैं। सबसे ऊपर की पंक्ति में प्रथम है गाजर, तृतीय शलजम और चतुर्थ मूली की जड़। अन्य नमूनों में दिग्दर्शित कंदुकाकार, पंजे जैसी, मनकों जैसी तथा रेशदार जड़ों पर भी गौर करो!

यद्यपि जड़ें कुछ अन्य कार्य भी करती हैं, परंतु मुख्य रूप से उनके दो कर्त्तव्य माने गए हैं—१. पौधे को भूमि पर टिकाए रहना, अर्थात् **'रोपण'**; और २. मिट्टी में से जल एवं खाद्य रसों को खींचकर पौधे के कलेवर में पहुँचाना, अर्थात् **'शोषण'**। इन कर्त्तव्यों की पूर्ति के हेतु प्रकृति ने विभिन्न परिस्थितियों के अनुरूप पौधों को कई प्रकार की जड़ें प्रदान की हैं। इनमें से कुछ तो मात्र कतिपय सेंटीमीटर नीचे तक भूमि में प्रवेश पाकर ही ऊपर-ऊपर छितराए रहा करती हैं, पर अन्य ऐसी भी हैं, जो कई मीटर की गहराई तक जमीन में पैठकर दूरी तक अपनी ताँतें फैलातीं तथा लंबे-चौड़े क्षेत्र को अपनी लपेट में ले लिया करती हैं। प्रथम वर्ग की जड़ें, जो प्रायः ज्वार, मक्का, गेहूँ, धान आदि के पौधों में देखने को मिलती हैं, **'झखड़ा'** कहलाती हैं। दूसरे प्रकार की जड़ें, जो अधिकतर बड़े वृक्षों में ही पाई जाती हैं, मोटी होने के कारण **'मूसला'** कहकर पुकारी जाती हैं।

इस प्रकार, पौधे के नीचे जड़ों का एक गोरखधन्दा-सा फैला रहता है, जो एक ओर तो मिट्टी में से दूर-दूर तक के जलकणों एवं पोषक खाद्य रसों के जर्रों को बटोरकर उसके

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

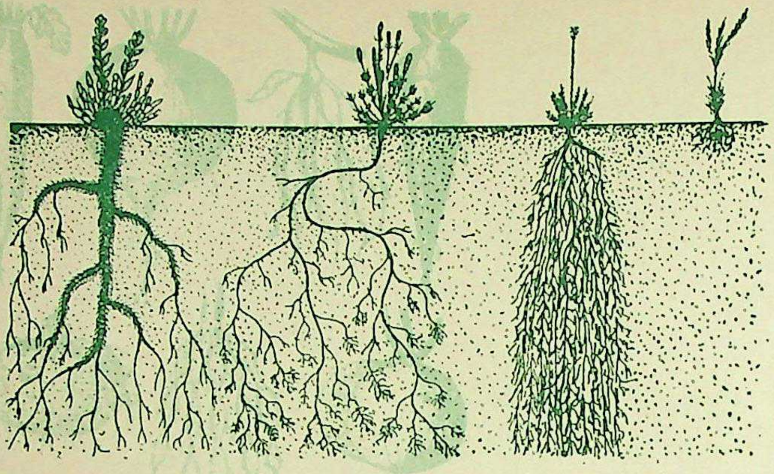

किस पौधे की जड़ें कितनी गहराई तक जमीन में पैठती हैं तथा उनका चारों ओर का फैलाव कितना होता है, यह जहाँ अलग-अलग वनस्पतियों की अपनी-अपनी जातीय विशेषता पर निर्भर करता है, वहाँ उस भूमि की परिस्थिति का भी इस विषय में कम हाथ नहीं हुआ करता, जिसमें कि पौधा उपजा है। प्रस्तुत चित्र में समान भूमि में, अलग-अलग जाति के इन चार प्रकार के पौधों की जड़ों के फैलाव का ढंग देखो !

भरण-पोषण की गहन-गंभीर जिम्मेदारी लिये रहता है; दूसरी ओर उसे तंबू की तरह तानकर आजीवन मजबूती के साथ धरती पर थामे रखने में भी अनमोल योग देता है। कहना आवश्यक है कि यदि ये जड़ें न हों तो पौधा क्षण भर के लिए भी अपना अस्तित्व नहीं बनाये रख सकता। इसीलिए आम बोलचाल में यह कहावत कही जाती है कि 'जड़ मजबूत, तो पौधा भी मजबूत !'

जड़ों के विस्तार का दारोमदार पौधे की जातीय खूबी के साथ-साथ उस भूमि की परिस्थिति पर भी रहा करता है, जिसमें कि वह उपजता है। जैसा कि इसी पृष्ठ के निचले चित्र में प्रदर्शित प्रयोग से स्पष्ट है, जड़ें उसी दिशा में जमीन के अंदर अपना विस्तार करती हैं, जिस ओर कि उन्हें नमी मिलती है। यदि परिस्थितिवश उक्त सुविधा के बहुत गहराई पर अथवा अत्यधिक दूरी पर मिल पाने की संभावना होती है, तो वे काफी दूरी तक अपनी ताँत फैलाने का भी जतन किया करती हैं ! इस प्रयत्न में कभी-कभी उनकी लंबान पौधे के कलेवर से दूनी-तिगुनी या इससे भी ज्यादा हो जाया करती है, जैसा कि इस पृष्ठ के ऊपरी चित्र से सुस्पष्ट है। जड़ों का यह फैलाव प्रायः बड़े वृक्षों में सबसे अधिक पाया जाता है। उन्हें अपने विशाल कलेवर के पोषण के लिए जल एवं खाद्य रसों की बृहत् परिणाम में आवश्यकता रहा करती है। फलतः वे आसपास की भूमि के लंबे-चौड़े क्षेत्र में अपना हाथ पसारते रहते हैं। कहते हैं, 'शाहबलूत वृक्ष' की जड़ें पाँच मीटर की गहराई तक जमीन को भेदा करती हैं ! उधर 'एल्म' नामक अन्य एक सुप्रसिद्ध पेड़ की जड़ों का जाल तने से ठेठ बीस-पचीस मीटर की दूरी तक चहुँ ओर अप[illegible] ताँ[illegible] फैलाये रहता है !

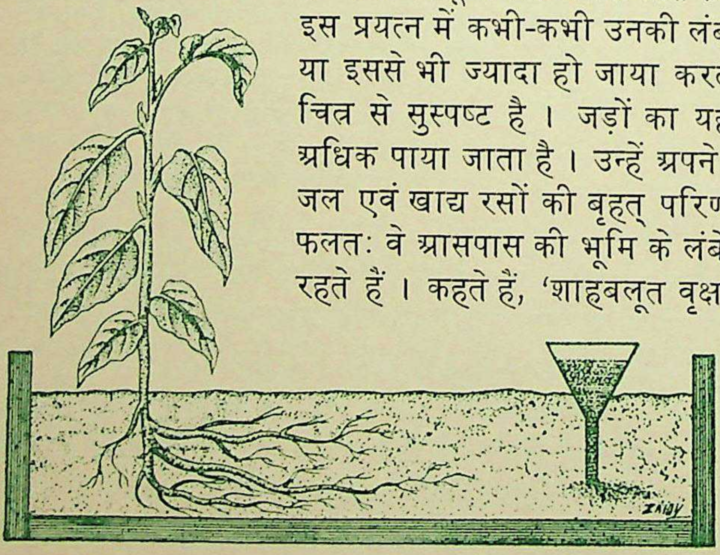

यदि हम किसी पौधे को सूखी मिट्टी से भरे हुए खुले बक्से में एक ओर को रोप दें और तब दूसरी ओर कुछ दूरी पर एक कीप लगाकर सिर्फ एक बाजू से ही पानी दें, तो हम देखेंगे कि पौधे की जड़ें उस दिशा में ही बढ़ती चली जा रही हैं, जिधर से पानी दिया जा रहा है।

कभी-कभी छोटे पौधों की जड़ें भी आसपास की भूमि में असाधारणतया लंबे व गहरे डग

भरते देखी गई हैं। उदाहरण के लिए, केवल पौन मीटर ऊँचा 'आईपोमिया लेप्टोफिला' नामक एक बूट करीब दो मीटर की गहराई एवं सोलह मीटर व्यास के घेराव में अपनी जड़ों की माया फैलाये रहता है! तुम्हें यह जानकर कुतूहल होगा कि बैंगन, ककड़ी, गाजर, मटर, शलजम, कुम्हड़ा, टमाटर आदि तरकारियों की जड़ें भी एक से दो मीटर तक की गहराई की नमीं को खींचने का सामर्थ्य रखती हैं!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

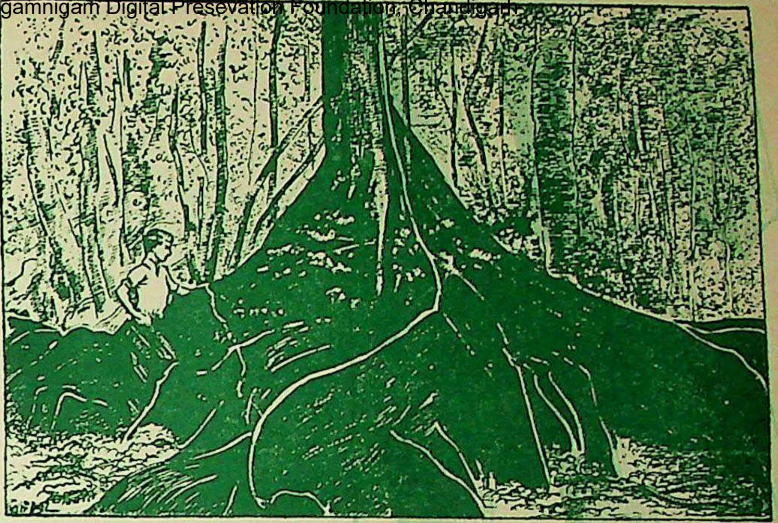

पेड़-पौधों के तनों को मजबूती से थामे रहने के लिए आयोजित 'अस्थानिक जड़ें' कतिपय बड़े वृक्षों में इस तरह के पुश्तों में बदलकर तने का ही अंग बन गई हैं। ये पुश्तवान् जड़ें जमीन में से खाद्य रस खींचने में भी मदद देती रहती हैं।

'मूलछद' और 'मूलरोम'

किसी भी सामान्य पौधे की कोई एक जड़ खोदकर उसका ध्यानपूर्वक निरीक्षण करो! तुम्हें उसके नाजुक श्वेतवर्णीय सिरे पर एक तरह की टोपी जैसी रचना मौजूद मिलेगी। विज्ञान की भाषा में इस रचना को **'मूलछद'** (रूट कैप) के नाम से पुकारा जाता है। इस रक्षा-टोपी का आयोजन प्रकृति ने इसलिए किया है, ताकि जड़ की नाजुक नोक को मिट्टी में प्रवेश करते समय चोट या रगड़ से किसी प्रकार की हानि न पहुँचे। इसी तरह, जड़ की त्वचा पर एक तरह के अति सूक्ष्म रोम भी तुम्हें देखने को मिलेंगे, जिन्हें **'मूलरोम'** कहकर सूचित किया जाता है। ये रोम चूँकि जड़ की त्वचा की कोशिकाओं के उभरे हुए अंश जैसे होते हैं, अतएव वे **'जीव-द्रव्य'** (प्रोटोप्लाज्म) के कोशिका-रस से पूर्णतया संपृक्त रहा करते हैं। अपनी इस खूबी

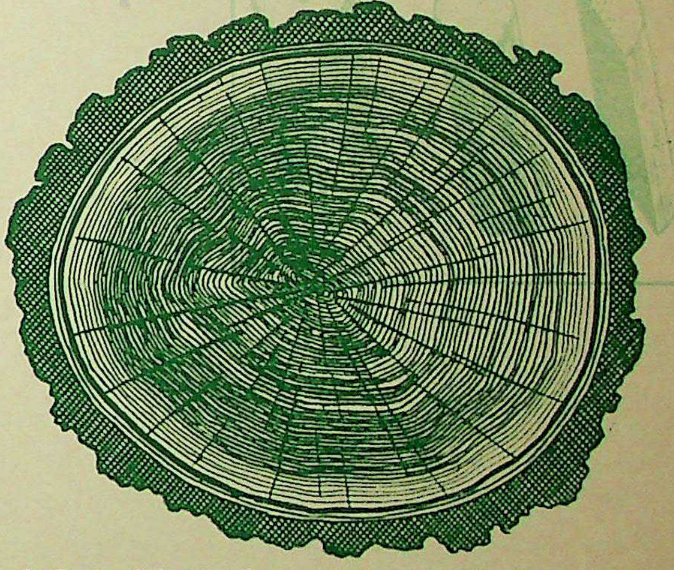

यदि किसी बड़े पेड़ के तने को आरे से आड़ा चीर दिया जाय, तो उसके अनुप्रस्थ काट की झांकी हमें ऐसी ही कुछ देखने को मिलेगी। इस रेखाचित्र की कोर पर का ऊबड़खाबड़ बाह्यावरण उस काग (कॉर्क) की तह को सूचित करता है, जिसने बाह्य त्वचा (एपिडर्मिस) का स्थान ले लिया है। इसके नीचे की पर्त कैम्बियम की तह है। भीतरी काष्ठ-क्षेत्र की वलयाकार रेखाएँ पेड़ की प्रति वर्ष की वृद्धि की सूचक हैं। इन वलयों की गणना करके ही वृक्षों की आयु का सही निर्धारण किया जा सकता है। केन्द्र से विकीरित 'हीर की किरणों' पर भी ध्यान दो। ये वस्तुतः मज्जा के केन्द्रीय खाद्य-संग्रहालय से रसद के आगमन की परिवहन-प्रणालियाँ हैं। यह खाद्य-भंडार संकटकाल में पेड़ के काम आता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

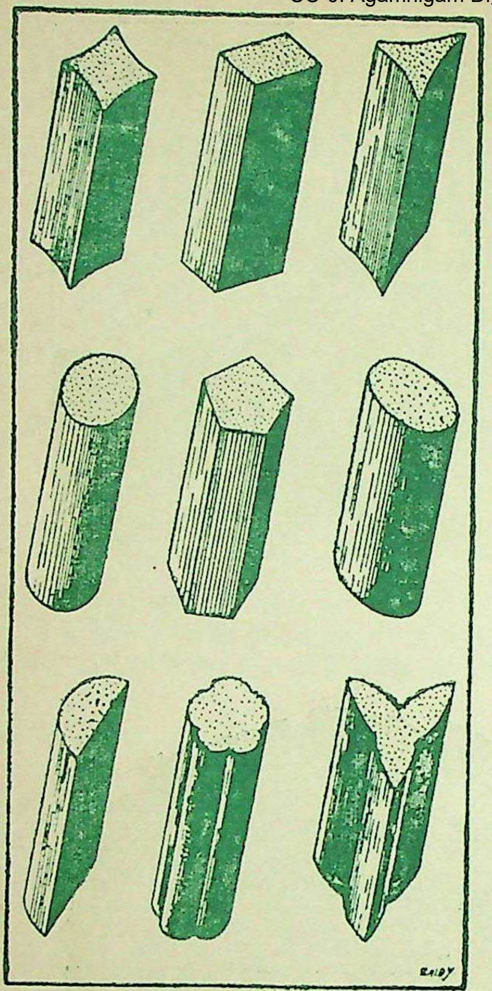

कलाकार प्रकृति ने विभिन्न प्रकार के पेड़-पौधों के तनों के निर्माण में अपनी ज्यामितीय ज्ञान-प्रतिभा का जी खोलकर उपयोग किया है। इन तनों के अनुप्रस्थ काट से प्रकट होनेवाले चौकोर, तिपहल, वर्तुलाकार, अर्द्धवर्तुलाकार, पंचपहल, और अंडाकार डिजाइनों पर गौर करो।

की बदौलत ये रचनाएँ जल-संपृक्त मिट्टी के कणों के संपर्क में आते ही, **'अन्तःकर्षण'** (एंडोस्मोसिस) की नैसर्गिक रासायनिक क्रिया द्वारा, खाद्य रसों को सहज ही सोख लेती हैं। यह प्रक्रिया ठीक उसी प्रकार से होती है, जिस तरह कि शकर के घोल के एक बरतन को, मुँह पर निस्सारक झिल्ली बाँधकर, यदि सादे पानी से भरे हुए अन्य एक पात्र में औंधा दिया जाय, तो सारा का सारा सादा जल क्रमशः घुलमिलकर शरबत बन जाता है! प्रस्तुत प्रक्रिया में निस्सारक झिल्ली का काम मूलरोमों की कोशिकाभित्ति की रस-संपृक्त झिल्ली किया करती है। इस शोषण-क्रिया की सबसे बड़ी खूबी यह है कि जड़ों में बाहर से तो खाद्य रस अंदर आते रहते हैं, पर भीतर से शक्कर आदि संचित द्रव्य बाहर नहीं जा पाते!

जड़ों के अनियमित एवं निराले रूप

हम बता चुके हैं कि जड़ों के दो प्रमुख कार्य हैं—'रोपण' और 'शोषण'। परन्तु विशेष परिस्थितियों में कतिपय पौधों में जड़ों ने अनेक प्रकार से रूपान्तरित होकर अन्य कुछ कर्त्तव्य भी ग्रहण कर लिए हैं। उदाहरणार्थ, एक ओर यदि मूली, गाजर, चुकन्दर, शलजम, शकरकंद जैसे कंद-मूलों की जड़ों ने बेहद मुटाकर स्टार्च, शर्करा आदि द्रव्यों का संचय करनेवाले गोदामों का रूप धारण कर लिया है, तो दूसरी ओर ज्वार, गन्ना, केवड़ा जैसे पौधों की कुछ जड़ों को (तने को अधिक सहारा देने के उद्देश्य से) धड़ के निचले भाग से फूटकर तंबू की रस्सियों की भाँति जमीन तक तन जाते हुए भी हम देखते हैं! ये जड़ें, जोकि **'अस्थानिक मूल'** कहलाती हैं, सेमर की जाति के कुछ वृक्षों में तने के विस्तार से निर्मित एक प्रकार के तख्तेनुमा पुश्तों का भी रूप ग्रहण कर लेती हैं। पृ० ९९ के ऊपरी चित्र में इस प्रकार की विचित्र जड़ों की दिलचस्प झाँकी दिग्दर्शित है।

इन अनियमित जड़ों की और भी कई मिसालें मिलती हैं। उदाहरणार्थ, वृक्षों की शाखाओं आदि पर उगकर अधर में टँगे रहनेवाले 'ऑर्किडों' की उन अनोखी वायवीय जड़ों को ही लो, जो भूमि से कोई भी वास्ता न रखकर सीधे वायुमंडल से ही जल एवं खाद्य द्रव्यों की पूर्ति कर लेने का अद्भुत चमत्कार कर दिखाती हैं! उधर गँठवा, अमरबेल आदि परोपजीवियों की वे गिरहकट जड़ें भी इसी श्रेणी में आती हैं, जिनकी मदद से ये ठग चुपके से अन्य वनस्पतियों का माल चुरा लिया करते हैं! वायवीय जड़ें अपना शोषण-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

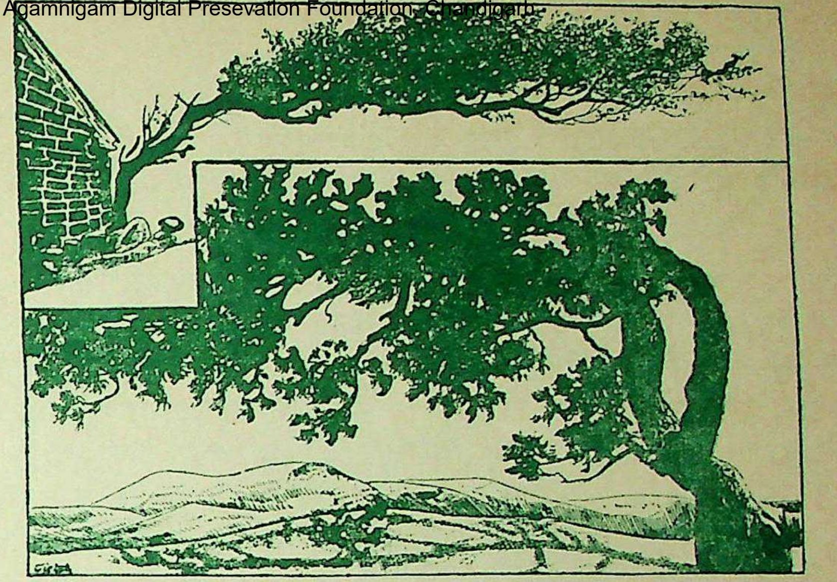

कार्य 'विलामेन' नामक विशिष्ट जलशोषक तन्तु की बदौलत किया करती हैं। हमारे देश के बरगद व पाकर जैसे जटाधारी वृक्षों में लटकनेवाली बरोहियाँ भी एक प्रकार की वायवीय जड़ें ही हैं। ये जटाएँ जमीन को छूने पर जब मिट्टी के संपर्क में आ जाती हैं, तो सामान्य जड़ों की भाँति भूमि से खाद्य-शोषण का भी काम करती हैं। कुछ पौधों में जड़ें 'पर्णहरिम' (क्लोरोफिल) के उत्पादन में योग देकर पत्तियों का भी काम करने लगती हैं। इसी तरह कुछ ऑक्सिजन की पूर्ति करने में सहायक होकर पौधे की श्वसन-क्रिया में भी मदद देती हैं। अन्य कुछ जड़ें लताओं को दीवारों आदि पर चढ़ने में सहायता दिया करती हैं। ये सभी जड़ें अनियमित श्रेणी की हैं।

शाखा-प्रशाखाओं सहित वृक्षों के तने का फैलाव किस ढंग का होगा, इसका बहुत-कुछ दारोमदार उनकी जातीय विशेषताओं के साथ-साथ परिस्थितिजन्य कारणों पर भी रहा करता है। मिसाल के लिए, इन दो वृक्षों के कलेवरों के एक-दूसरे से बिल्कुल विपरीत दिशा के एकतरफा झुकाव पर गौर करो। यह इनके द्वारा दिशा विशेष से लगातार हवा के प्रचंड झोंके सहते रहने के कारण ही हुआ है!

पौधे का धड़ या आधारस्तंभ--'तना'

जिस प्रकार हमारे शरीर में विभिन्न अंगों और इन्द्रियों को धारण करने के लिए प्रकृति ने 'धड़' की व्यवस्था की है, उसी तरह से पेड़-पौधों में भी पत्ती, फूल, फल आदि अवयवों को टिकाये रखने के लिए एक सुदृढ़ साधन उसने आयोजित किया है। यह साधन है **'तना'**, जिसे हम बखूबी पौधे के धड़ की संज्ञा प्रदान कर सकते हैं। इस महत्वपूर्ण रचना के अनेकानेक रूप देखने को मिलते हैं। यदि एक ओर एक नन्हें-से बूट का नाजुक डंठल इसकी कोटि में आता है, तो दूसरी ओर आसमान से बातें करनेवाले विशाल वृक्षों के सौ मीटर से भी अधिक घेराव के दैत्याकार तने भी इसके दायरे में सम्मिलित हैं! सबसे उल्लेखनीय बात तो यह है कि ज्यों-ज्यों पौधे का वृद्धि-विकास होता जाता है, त्यों-त्यों धड़-रूपी उसका आधारस्तंभ अधिकाधिक दृढ़ एवं पुष्ट बनकर अपना अधिकाधिक विकास करता चला जाता है। उसमें जो नई-नई डालियाँ एवं शाखा-प्रशाखाएँ फूटती रहती हैं, उन्हीं की बदौलत अंततोगत्वा एक नन्हा-सा बीजांकुर बढ़कर विशाल वृक्ष में परिणत हो जाता है।

यहाँ तुम्हें एक महत्वपूर्ण बात हम यह भी बता दें कि अक्सर एक ही जाति-बिरादरी के पेड़-पौधे देखने में एक जैसी शक्ल-सूरत के जो नहीं होते और प्रत्येक का जो अपना-अपना निराला व्यक्तित्व हुआ करता है, इसका बहुत-कुछ श्रेय उनके तनों को ही मिलना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वस्तुतः तने अपनी चित्र-विचित्र आकृति, फैलाव के ढंग, डील की मरोड़ एवं शाखाओं के विस्तार आदि विशेषताओं से पौधों को ऐसी अद्वितीयता का बाना पहना देते हैं कि इसी बूते पर वे अपने अन्य भाई-बन्धुओं से सहज ही पृथक् दिखाई देने लगते हैं। जैसा कि पृष्ठ १०१ के चित्र में दिग्दर्शित दो वृक्षों के अलग-अलग ढंग के एक-दूसरे से विपरीत फैलाव की झाँकियों से सुस्पष्ट है, हर पौधे के स्वरूप-निर्धारण के पीछे परिस्थितिजन्य कारणों का गहरा हाथ होता है।

तने की आन्तरिक बनावट

पृ० ९९ की निचली बाजू के चित्र में दिग्दर्शित रेखाकृति पर ध्यान दो ! यह एक बहुत बड़े वृक्ष के तने का अनुप्रस्थ (या आड़े) काट का मानचित्र है। इस तस्वीर से तुम्हें तने की आन्तरिक बनावट का स्थूल अनुमान करने में बहुत-कुछ सहायता मिल सकती है। इस प्रकार के तनों को (जिनमें काष्ठ-भाग की अधिकता होती है और जो प्रायः आवृत-बीज वनस्पतियों के द्विबीजपत्री समूह के पौधों में ही पाए जाते हैं) बनावट के लिहाज से निम्न तीन बड़े विभागों में बाँटा जा सकता है—१. **छाल या बाह्यावरण**; २. **आन्तरिक काष्ठ-भाग**; एवं ३. **केन्द्रीय मज्जा या हीर**। इनमें छाल या बाह्यावरण के पुनः निम्न-लिखित तीन उपविभाग निर्धारित किए गए हैं :—

(क) **'एपिडर्मिस' (या बाह्य त्वचा)**—इसकी तह केवल एक कोशिका की मोटान भर की होती है। फलतः कठीले तनों में यह शीघ्र ही नष्ट हो जाया करती है। बाद में उसकी जगह पर 'काग' (कॉर्क) नामक पदार्थ की वे कोशिकाएँ आ जमती हैं, जो एपिडर्मिस के नीचे विद्यमान रहती हैं।

(ख) **'कॉर्टेक्स' (या वल्क)**—इसके अंतर्गत अनेक प्रकार के ऊतकों (तंतुओं) में से कई एक पर्तें पाई जाती हैं। इनमें की सबसे भीतरी पर्त 'एंडोडर्मिस' (या अंतस्त्वचा) कहलाती है। इस विभाग की कोशिकाओं में स्टार्च का विशेष रूप से संचय हुआ करता है।

(ग) **'आन्तरिक तान्तव स्तर'**—इस तह की रचना करनेवाले ऊतकों में 'पेरीसाइकिल' (या मध्य परिचक्र) और 'पेरेनकाइमा' (मृदूतक) नामक दो विशेष प्रकार के तन्तु बड़े महत्व के होते हैं। 'पेरेनकाइमा' की कोशिकाएँ जब रस से भर जाती हैं, तो वे फूलकर तन जाती हैं। इस दबाव से उनमें दृढ़ता आ जाती है।

छाल या बाह्यावरण की सीमा को पार करके, जब हम तने के 'आन्तरिक काष्ठ-भाग' में प्रवेश करते हैं, तो यहाँ अपेक्षाकृत अधिक कठीले और चीमड़ द्रव्य से हमारा साक्षात्कार होता है। इस कठीले द्रव्य की रचना ऐसे रेशों तथा लंबी सँकड़ी रिक्त कोशिकाओं की अनवरत शृंखलाओं द्वारा हुआ करती है, जिनकी भित्तियाँ 'सेल्यूलोज़' और 'लिग्निन' नामक मज़बूत बनानेवाले पदार्थों से विशेष रूप से दृढ़ बना दी गई होती हैं। उपर्युक्त कोशिकाओं की लड़ियाँ मिलकर कतिपय नालियों की रचना कर देती हैं, जिनमें से होकर खाद्य रस एवं जल निरन्तर प्रवाहित होता रहता है। इस 'काष्ठमय' क्षेत्र को 'जाइलेम' के नाम से पुकारा जाता है और जो रस-प्रणालियाँ उसमें से निकलती हैं, उन्हें 'नसें' कहते हैं। 'जाइलेम' और बाह्यावरण के बीच 'फ्लोएम' नामक आंतरिक छाल होती है और इन दोनों की मध्यवर्ती तह में 'कैम्बियम' नामक पदार्थ की पर्त विद्यमान होती है। यह पदार्थ तने की रचना में महत्वपूर्ण हाथ बँटाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अंत में, 'मज्जा' (या हीर) के नाम से पहचाने जानेवाले उस केन्द्रीय नरम पदार्थ के इलाके में हम आ पहुँचते हैं, जो कि संकटकाल के लिए सुरक्षित भंडार के रूप में नियोजित पौधे के खाद्य एवं जल की रसद का एक गुप्त कोश-सा जान पड़ता है। इस भाग की मध्यवर्ती खोखली जगह में कोशिकाएँ बहुत ढीले भाव से बेतरतीब भरी रहती हैं। इस क्षेत्र की एक उल्लेखनीय विशेषता केन्द्रबिन्दु से चारों ओर विकीर्ण होनेवाली हीर की वे 'किरणें' हैं, जो वास्तव में इस रसद-भंडार में संगृहीत खाद्य पदार्थ के परिवहन की प्रणालियाँ हैं।

पौधे के कलेवर का वृद्धि-विकास किस प्रकार से हुआ करता है--'जीव-द्रव्य' की रहस्यलीला

आओ, अब थोड़े में यह भी जान लो कि अपनी शाखा-प्रशाखाओं सहित पौधा निरन्तर विकसित क्योंकर होता रहता है! इस संबंध में पहले तो इस बात को अपने दिमाग में बैठाना आवश्यक है कि 'सजीव सृष्टि' के दायरे में आनेवाली सभी रचनाएँ --चाहे वे जानवर हों या वनस्पति--एक ही आधारभूत मूल द्रव्य से बनी हैं, जिसे विज्ञान की भाषा में **'प्रोटोप्लाज्म'** या **'जीव-द्रव्य'** के नाम से पुकारा जाता है। यह द्रव्य न केवल जीवन का मूल आधार ही है एवं उसमें सजीव पदार्थों के समस्त गुण सूक्ष्म रूप में मौजूद हैं प्रत्युत वह अपने कलेवर का निरंतर वृद्धि-विकास भी कर सकता है! जल एवं खाद्य रसों का शोषण करके, उक्त पदार्थों से नूतन जैव द्रव्य का निर्माण करने की उसमें अद्भुत क्षमता होती है और उचित प्रेरकों के प्रभाव से उत्तेजित होकर तरह-तरह की सांवेदनिक प्रतिक्रयाएँ भी दरसाते वह पाया जाता है। सारांश यह है कि विविध स्तरों पर वह उन सभी गुण-धर्मों एवं किया-प्रक्रियाओं की भूमिका का निर्वाह किया करता है, जो कि 'जीव-सृष्टि' को निर्जीव जगत् से जुदा करके उसे अपनी निजी विशिष्टता प्रदान करती हैं।

यह अद्भुत अनोखा पदार्थ एक प्रकार की सूक्ष्मातिसूक्ष्म मंजूषाकार कोठरियों में

इस तस्वीर में दिखाई पड़नेवाली आकृति को तुम कहीं किसी मोटे तने का वृक्ष न मान बैठना! यह है वस्तुतः एक पुरानी मीनार पर चढ़ी हुई एक जाति की लता की झाँकी, जिसने ठेठ सिरे पर अपनी पत्रावली की छतरी छहराकर दर्शकों के लिए एक पेड़ की आकृति का-सा भ्रम पैदा कर दिया है। हम तुम्हें बता दें कि यह इस लता के बौंडों रूपी विशेष प्रकार के लचीले तनों का ही अद्भुत चमत्कार है, जिन्होंने मीनार के ऊपर चढ़कर उसे अपना यह पत्र-मुकुट पहना दिया है!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बँटकर वनस्पतियों एवं प्राणियों के कलेवर में रहा करता है। उक्त कोशों को वैज्ञानिक गण **'सेल'** या **'कोशिका'** के नाम से पुकारते हैं। ऐसी प्रत्येक कोशिका के केन्द्र में एक गाढ़ा-सा अंश होता है। यही उसका **'न्यूक्लिअस'** या **'नाभिक'** है। यह नाभिक मानो कोशिका का राजा होता है! उसी के तत्त्वावधान में कोशिका की समस्त क्रिया-प्रक्रियाएँ संपन्न होती हैं। इन क्रियाओं में सबसे महत्वपूर्ण होती हैं—एक तो जल, वायु तथा भाँति-भाँति के लवणों जैसे अजैव पदार्थों को जैव द्रव्य में परिवर्तित करके कोशिकाओं के काम में आने योग्य बनाने की क्रिया; दूसरे, 'कोशिका-विभाजन' की विधि से अलग-अलग कार्यों के लिए अलग-अलग प्रकार की अनेकानेक कोशिकाओं का बेशुमार निर्माण करके संबंधित जैव रचना की अनवरत अभिवृद्धि करते रहने की प्रक्रिया! हम तुम्हें बता दें कि पौधे के कलेवर के वृद्धि-विकास के पीछे कोशिकाओं की इन्हीं जादुई करतूतों का ही हाथ है। कैसे? आओ देखें!

कोशिका-विभाजन का चमत्कार

विज्ञान की प्रगति के फलस्वरूप पिछले दिनों अन्वेषकों को जब इस परम सत्य का पता चला कि हर एक जैव कलेवर का श्रीगणेश वस्तुतः जीव-द्रव्य की मात्र एक ही कोशिका से हुआ करता है और वही एकमात्र कोशिका कालान्तर में एक से अनेक बनकर अपनी नन्हीं सी बुनियाद पर एक बृहत् रचना खड़ी कर देती है, तो जीव-जन्तुओं एवं वनस्पतियों के वृद्धि-विकास की पुरानी अनबूझी पहेली पलक मारते ही अपने आप हल हो गई! कारण, इस महान् तथ्य के प्रकाशन के साथ ही वैज्ञानिकों को यह जानते देर न लगी कि जैव कलेवरों की बढ़ोतरी का सारा खेल वस्तुतः उत्तरोत्तर विभाजन द्वारा अपनी संख्या बढ़ाते रहने के कोशिकाओं के विचित्र ढंग पर ही निर्भर है। इसी विधि से कोई एक सूक्ष्म एककोशिक बीजाणु, अपनी जातीय विशेषता के अनुसार, अंततोगत्वा किसी विशिष्ट प्राणी अथवा वनस्पति का चोला धारण कर लेने में समर्थ हो पाता है!

होता यह है कि किसी भी उत्प्रेरणा के फलस्वरूप जब कोशिका-द्रव्य में परिवर्तन की एक हलचल-सी शुरू होती है, तो उसके बीचोबीच स्थित नाभिक एकाएक सक्रिय बनकर क्रमशः बड़ा होने लगता है और उसका जालनुमा अंश लिपट-लिपटाकर और भी अधिक गुम्फित-सा हो जाता है। अंत में, उक्त नाभिकजाल के अलग-अलग कई एक टुकड़े हो जाते हैं, जिन्हें **'क्रोमोसोम'** या **'गणसूत्र'** कहते हैं। इन गणसूत्रों की संख्या प्रत्येक जाति के जीव या वनस्पति के लिए निश्चित होती है और इन्हीं में हर जैव रचना के अपने-अपने वंशपरंपरागत पैतृक गुणों के मूलबीज संचित रहते हैं! अब एक अनूठी लीला आरंभ होती है, जिसके अधीन प्रत्येक गणसूत्र की दो फाँकें हो जाती हैं और एक विचित्र योजनानुसार एक अर्द्धभाग कोशिका के एक सिरे पर तथा दूसरा उसके विपरीत सिरे पर पहुँचकर क्रमशः अपने-अपने स्वतंत्र नाभिकों का निर्माण कर लेता है! इस प्रकार एक कोशिका विभाजित होकर दो स्वतंत्र सर्वाङ्ग-संपूर्ण कोशिकाओं में परिणत हो जाती है! यह सिलसिला लगातार बढ़ता ही चला जाता है! फलतः उस एक प्रारंभिक कोशिका से बढ़ते-बढ़ते क्रमशः असंख्य नवीन कोशिकाएँ निर्मित हो जाती हैं। इन्हीं की बदौलत तरह-तरह के जैव कलेवरों का निरंतर वृद्धि-विकास होता रहता है तथा पुरानी पड़ जाने पर नष्ट हो जानेवाली कोशिकाओं का स्थान नई-नई कोशिकाएँ ग्रहण करती चली जाती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तने का काष्ठ-भाग दृढ़ और कठीला कैसे बनता है ?

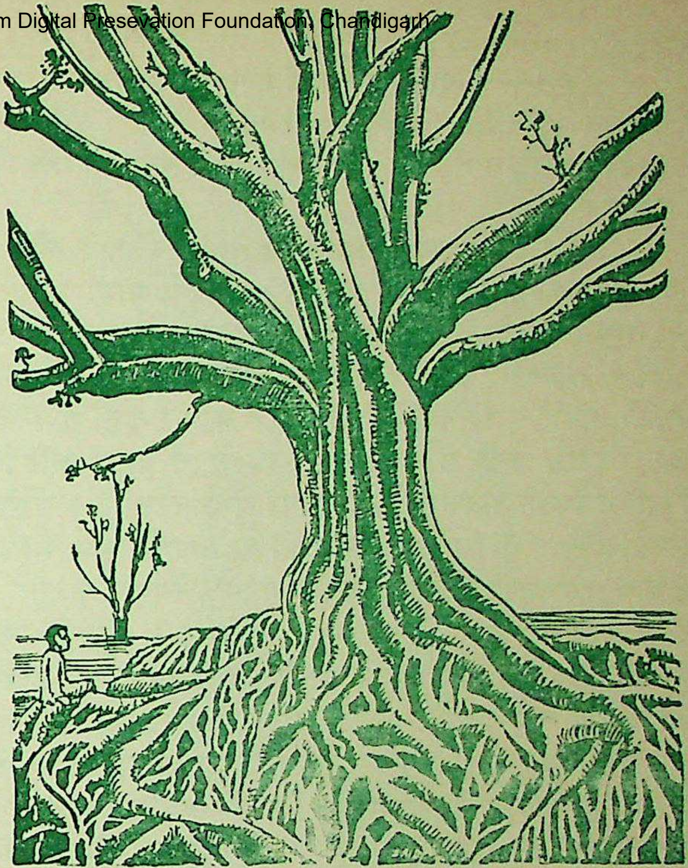

जानवरों की तरह पेड़-पौधे भी तभी तक हरे-भरे और सजीव रहा करते हैं, जब तक कि उनकी जड़ें पृथ्वी से समुचित आहार का शोषण करती रहती हैं और उनके कलेवर में प्राणवाही जीव-द्रव्य का संचार बना रहता है। उक्त व्यवस्था के समाप्त होने पर, चाहे छोटे पौधे हों, चाहे विशाल वृक्ष, सभी को जीवन से हाथ धोकर मृत्यु का सामना करना पड़ता है, जैसे कि जड़ों की मिट्टी के घुलकर बह जाने के फलस्वरूप संकट में पड़ जाने वाले बेचारे इस मरणासन्न प्राचीन वृक्ष के पत्रविहीन कंकाल से स्पष्ट जाहिर हो रहा है !

जीव-द्रव्य तो वस्तुतः अपनी स्वाभाविक दशा में केवल एक लसलसा-सा अर्द्ध-द्रव पदार्थ होता है। तो फिर, भला ऐसे रसमय तरल कोमल पदार्थ की कोशिकाएँ पौधों के तने को अपना सुदृढ़ काष्ठवत् कड़ा रूप कैसे दे पाती हैं? इस प्रश्न का समाधान प्रकृति की उस अद्भुत व्यवस्था में निहित है, जिसके अनुसार आरंभ में आकार-प्रकार एवं गुण-धर्म में एक-दूसरे के बिल्कुल समान होने पर भी, कोशिकाएँ जब अलग-अलग प्रकार के कार्यों में नियोजित होती हैं, तो आवश्यकतानुसार अपने कलेवर में यथेष्ट परिवर्तन भी कर लेती हैं। अपनी इसी अनूठी क्षमता के बल पर वे तने एवं शाखा-प्रशाखाओं को (जिन्हें पौधे के अन्य अंगों का भार दृढ़तापूर्वक वहन करना पड़ता है) अपेक्षाकृत अधिक मजबूत तंतुओं से संपन्न कर देती हैं। इस कार्य में **'लिग्निन'**, **'सुबेरिन'** और **'क्यूटिन'** नामक तीन दृढ़कारी पदार्थ खास तौर से सहायक होते हैं। 'लिग्निन' छल्लेनुमा चूड़ियों के रूप में कोशिका-भित्ति पर जमता रहता है। ये चूड़ियाँ ज्यों-ज्यों कोशिकाएँ पुरानी पड़ती जाती हैं, त्यों-त्यों सटकर घनी होती जाती हैं। इस प्रकार जो जालीदार तह बन जाती है, उसमें बीच-बीच में कुछ नन्हें-नन्हें गर्त-से बने रहते हैं। उक्त गर्तों के छिद्रों से जीव-द्रव्य के रेशे एक से दूसरी कोशिका में फैले रहते हैं। इस अद्भुत व्यवस्था की बदौलत एक ओर जहाँ कोशिका-भित्ति दृढ़ होकर तने को मजबूत बनाने में योग देती है, वहाँ दूसरी ओर उसमें पोषक रसों के आवागमन का प्रवाह भी अबाध रूप से जारी बना रहता है। जिस प्रकार 'लिग्निन' तने को कठीला और दृढ़ बनाने में सहायक होता है, उसी तरह 'सुबेरिन' और 'क्यूटिन', जल के लिए अभेद्य होने की क्षमता के बल पर, पौधे में संचित पानी को बाहर निकलकर नष्ट होने से बचाते हैं। शीशियों के डाट के रूप में प्रयुक्त 'कॉर्क' इन्हीं द्रव्यों से निर्मित एक वृक्ष की छाल मात्र होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

असाधारण तने

कुछ पौधों में तनों ने, विशेष परिस्थितियों के कारण, असामान्य रूप धारण करके निराले कर्तव्यों का दायित्व ग्रहण कर लिया है। अतः उन्हें साधारण तनों से पृथक् कोटि में रखना आवश्यक हो जाता है। ऐसे असाधारण तनों को वैज्ञानिकों ने निम्न चार समुदायों में बाँट रक्खा है :—

१. लिपटने तथा बौंडनेवाले तने—लताओं और बेलों में पाये जाने वाले ये तने डोरी की तरह पतले और लम्बे होते हैं। अतः वे प्रायः उतने मजबूत नहीं होते, जितने कि वृक्षों के साधारण मोटे तने। अधिक मोटा न होने के कारण उन्हें उतने खाद्य की भी आवश्यकता नहीं रहा करती, अतः उनकी बाढ़ तेजी से होती है। तुमने प्रायः गौर किया होगा कि तुरई, लौकी, कद्दू आदि की बेलें रातोंरात बढ़कर कहाँ से कहाँ जा पहुँचती हैं! कहने की जरूरत नहीं कि इस तरह के पतले तने स्वयं अपने सहारे नहीं टिके रह पाते—उन्हें बढ़ने के लिए किसी न किसी अवलम्ब का सहारा लेना पड़ता है। उक्त अवलम्ब किसी अन्य पेड़ का तना, शाखें, दीवार, शिलापृष्ठ, बाँस की टट्टी आदि कुछ भी हो सकता है! और कोई सहारा न पाने पर बहुतेरी लताएँ जमीन पर ही रेंगकर फैलती रहती हैं। अपने आधार को पकड़े रहने के इनके ढंग कई प्रकार के होते हैं। बहुतेरी अवलंब के आसपास सर्प की तरह लिपट जाती हैं। अन्य अपने काँटों, रोमों आदि की सहायता से उसे पकड़े रहती हैं। दूसरी कई लताएँ एक तरह के विशेष अंगों से इस कार्य में मदद लेती हैं, जिन्हें 'बौंडे' कहा जाता है। पतले सूत जैसे ये अंग पुखपत्रों या टहनियों के रूपान्तर से उपजते हैं और इनमें बड़ी अनोखी संवेदन-शक्ति होती है, जिसकी बदौलत अवलंब का स्पर्श पाते ही वे उसके आस-पास अपने आप लिपट जाते हैं! तुमने अंगूर, कुँदरू, परवल, लौकी आदि की बेलों को ऐसे सूत्रवत् बौंडों के नाजुक पाश में आधार को जकड़कर अपना विस्तार करते प्रायः देखा होगा। इन लिपटने वाले पौधों की जकड़ से कभी-कभी आश्रयदाता पेड़-पौधों की शामत भी आ जाती है! कारण, चारों ओर इन लताओं की पत्रावली के छा जाने पर स्वयं उन्हें यथेष्ट प्रकाश नहीं मिल पाता और वे पीले पड़ने लगते हैं! उधर आश्रय देने वाले पेड़ का पतन होने पर उसका अवलंब ग्रहण करने वाली लता को भी विनाश के गर्त का मुँह देखना पड़ता है। कभी-कभी आश्रयदाता पेड़ के तने अधिक मोटे हो जाने पर आस-पास लिपटी बेल के पाश को अपने तनाव के जोर से तोड़ देते हैं। उधर ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं, जब कि किसी लता के दारुण पाश के शिकंजे में कसकर आश्रयदाता पेड़ अपना दम तोड़ बैठता है और उसकी जीवनलीला समाप्त हो जाती है!

२. जड़ का काम करने वाले तने—ऐसे तने भाँति-भाँति की घासों एवं कैना जैसे पौधों में पाये जाते हैं। ये जमीन के भीतर ही भीतर फैलकर, जड़ की भाँति पौधे के रोपण एवं खाद्य रसों के शोषण का काम करने लगते हैं। अनेक जल पौधों में भी इस प्रकार के तने मिला करते हैं!

३. खाद्य-भंडार तथा बीज का काम देने वाले तने—बहुतेरे लोग आलू और अदरक को जमीन के अन्दर पैदा होने के कारण जड़ों का रूपान्तर समझने की भूल करते हैं, जबकि वास्तव में ये विशेष प्रकार के तने ही हैं। इस प्रकार के तनों का विकास प्रकृति ने इस उद्देश्य से किया है कि एक तो स्टार्च आदि खाद्य पदार्थों का संग्रह करके वे आड़े दिनों काम

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आने वाले आहार-द्रव्यों के भंडार या कोठार का काम दें, दूसरे अगली पौध की नस्ल पैदा करने के हेतु बीज का भी मतलब वे साधें। इस प्रकार के तनों की अनेक किस्में हैं। इनमें का एक प्रकार अदरक, हल्दी और भसीड़ (कमल की डंडी) जैसे जमीन के नीचे ही नीचे फैलने वाले तनों का है, जो **'प्रकन्द'** (ह्राइजोम) कहलाते हैं और दूसरा प्याज, हायसिंथ, ट्यूलिप और नरगिस के तनों का, जो **'कन्द'** (बल्ब) के नाम से पुकारे जाते हैं! हमारे सुपरिचित 'आलू' की गणना इन असामान्य तनों के **'ग्रंथिकंद'** (ट्यूबर) नामक वर्ग में होती है, जिसके अंतर्गत 'रतालू' और 'जेरूसलम आर्टिचोक' भी परिगणित हैं। उधर 'सूरन' (जमींकन्द) और 'बंडा' अपने-अपने असाधारण मांसल गठन तथा वल्कपत्रों की बहुलता के कारण **'घनकंद'** (कॉर्म) कहलाते हैं। दूसरे कुछ कंद, जिनमें पार्श्विक कलिकाएँ होती हैं, **'पत्रकंद'** (बल्बिल्स) के नाम से अभिहित किए जाते हैं। इनके प्रमुख उदाहरण 'रामबाँस' या 'हाथीचिंग्घार' के कंद हैं। इन सभी असामान्य तनों की एक प्रधान विशेषता यह है कि उनमें खाद्य पदार्थों का प्रचुर मात्रा में संचय होता है, साथ ही उनमें से अधिकतर अपनी गाँठों (नोड्स) एवं पर्वों (इंटरनोड्स) से नवीन पौधे उपजाने की भी क्षमता रखते हैं!

४. पर्णायित तने—विशेष परिस्थितियों में कुछ पौधों के तनों ने रूपान्तरित होकर चपटी मोटी पत्तियों का-सा रूप धारण कर लिया है, जिनमें

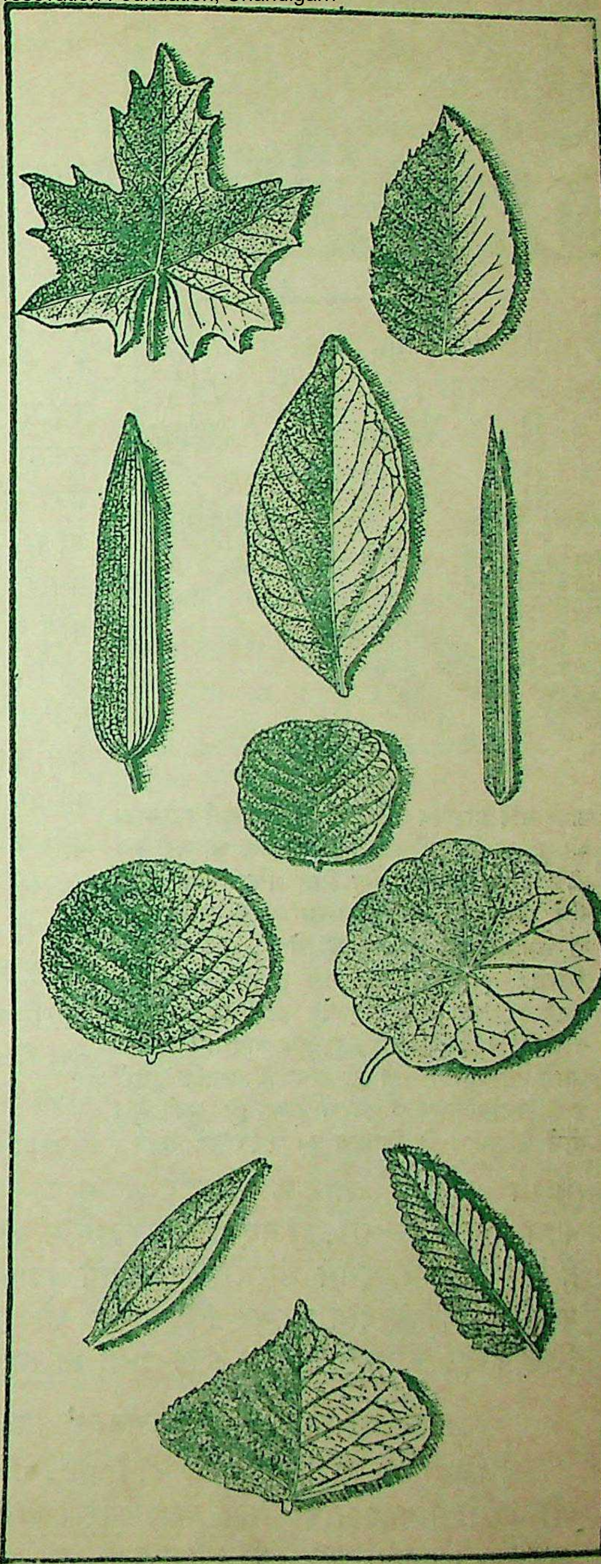

यदि हम विभिन्न जाति के पेड़-पौधों की पत्तियों को बटोरकर उनकी आकृतियों का अध्ययन करें, तो हमें उनकी विविधताओं की झाँकी देखकर दंग रह जाना पड़ेगा। दाहिनी ओर के चित्र में कुछ नमूने दिए गए हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

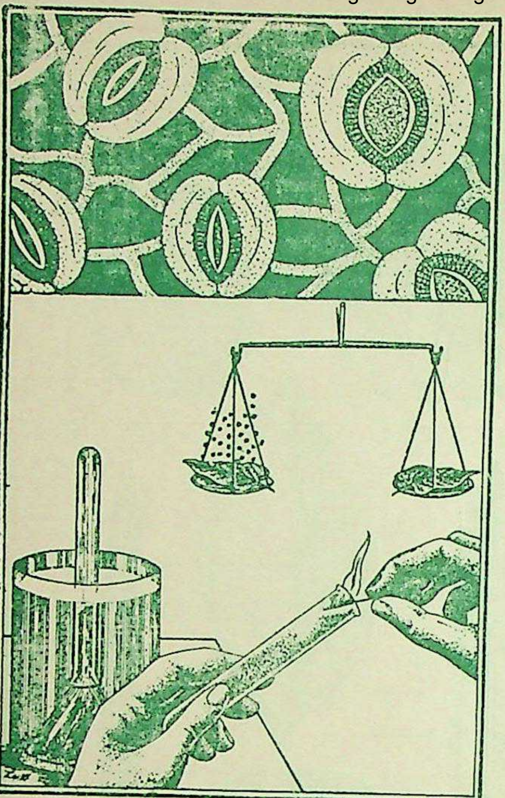

ऊपर बाईं ओर बंद तथा दाहिनी ओर खुले स्टोमाटा की सूक्ष्मदर्शीय परिवर्द्धित झाँकी पेश की गई है। नीचे के प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध किया गया है कि पौधे जल तथा ऑक्सिजन का त्याग करते हैं। दो समान वजन की पत्तियाँ लेकर, एक पर खूब वैसलीन चुपड़ दो। तब उन्हें तराजू के एक-एक पलड़े पर रख दो। कुछ देर बाद वैसलीनवाली पत्ती का पलड़ा भारी पड़कर झुक जायगा! क्योंकि उससे वाष्पत्याग नहीं हो पाया है, जबकि दूसरी पत्ती जलनिस्सरण के कारण हल्की हो चुकी है। नीचे के प्रयोग का विवरण पृ० ११४ पर पढ़िए।

जल एवं खाद्य द्रव्यों के संचय के साथ-साथ स्टार्च-संश्लेषण का कार्य भी होता है। ऐसे असामान्य तने नागफनी और रस्कस में मिलते हैं। वैज्ञानिकों ने इन्हें **'पर्णायित तने'** (फाइलोक्लेड) का नाम दे रक्खा है।

पौधों की महान् रसायनशाला--'पत्ती'

वैसे तो पौधे के जीवन-यापन के लिए उसके सभी अंग अपनी-अपनी जगह पर विशेष महत्व रखते हैं, परन्तु उनमें भी 'पत्ती' को कुल मिलाकर वनस्पतियों का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग माना जा सकता है। कारण, इसी की बदौलत पौधा हरा-भरा और सजीव रहता है। इसी की गुप्त रसायन-शाला में वे रहस्यमयी पेचीदा क्रिया-प्रक्रियाएँ संपन्न होती हैं, जिनके जादू से पौधे एक ओर तो वायु की कार्बन डाइऑक्साइड से स्टार्च एवं अन्य कार्बोहाइड्रेटों की रचना करते हैं; दूसरी ओर श्वसन एवं वाष्पोत्सर्जन द्वारा अनावश्यक ऑक्सीजन तथा जल का त्याग करके जीवन-चक्र को बनाये रखने की प्रकृति की महान् व्यवस्था में योग दिया करते हैं। यहीं जड़ों द्वारा शोषित जल एवं नमकों पर सूर्य-किरणों की क्रिया से वे खाद्य द्रव्य तैयार होते हैं, जिनसे न केवल स्वयं वनस्पति ही, प्रत्युत पशु-पक्षी आदि जीवों का भी भरण-पोषण होता है। फिर विशेष परिस्थितियों में तो किन्हीं-किन्हीं पौधों में पत्तियाँ ऐसे निराले काम-काज भी करते पाई जाती हैं, जोकि उनके नियमित कार्य कदापि नहीं कहे जा सकते! उदाहरणार्थ, कुछ पौधों में यदि वे तने के कर्त्तव्यों का पालन करती हैं, तो कुछ में जड़ों का भी काम देती हैं। कहीं खाद्य-भंडार या गोदामों का काम साधती हैं, तो कहीं नए पौधे उपजाने में बीजों का-सा कर्त्तव्य-पालन करते भी देखी जाती हैं! यही नहीं, इससे भी दो कदम आगे बढ़ाकर, कतिपय पौधों में तो संसेचनार्थ फूल की पंखुड़ियों जैसा स्वांग धरकर कीट-पतिंगों को आकर्षित करने अथवा पौधे की क्षुधा-निवृत्ति के लिए कीड़ों को फँसाने वाले कपट-पात्रों का रूप ग्रहण करने से भी वे नहीं चूकी हैं!

पत्ती का बाह्य रूप--'पर्णवृन्त', 'पत्रदल', 'पत्रसंगठन' और 'पत्रवेष्ठन'

किसी भी साधारण पत्ती को लेकर, यदि हम सरसरी तौर पर उसका निरीक्षण करें, तो पहली निगाह में ही उसके बाह्य स्वरूप की निम्न विशेषताओं पर फौरन् हमारा ध्यान जा अटकेगा। एक तो यह कि प्रत्येक पत्ती एक डंठल के द्वारा तने की शाखा या टहनी पर जुड़ी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहती है। यह डंठल '**पर्णवृन्त**' कहलाता है। कुछ पौधों की पत्तियों में ऐसे वृन्त या डंठल होते ही नहीं--वे 'अवृन्त पत्तियाँ' कहलाती हैं। वृन्त पर पत्ती के कलेवर का जो मुख्य भाग सधा रहता है, वही '**पत्रदल**' कहलाता है। इसकी वनस्पति-जगत् में अनेक प्रकार की शक्लें पाई जाती हैं। उदाहरणार्थ, किसी पत्ती में वह यदि लट्टू की-सी शक्ल अपनाये दिखाई देता है, तो किसी में ताम्बूल, करतल (हथेली), अंडा, छत्री, बल्लम, तलवार, छुरी, पंख जैसी आकृति दरसाते भी पाया जाता है। अपनी इन्हीं विविध आकृतियों के अनुसार पत्तियाँ शंखाकार, दीर्घवृत्ताकार, अंडाकार, छत्राकार, ताम्बूलाकार, भल्लाकार, पिच्छाकार आदि-आदि अनेक नामों से पुकारी जाती हैं।

इस सम्बन्ध में एक और गौर करने की बात यह है कि सभी जाति की पत्तियों की धार या कोर एवं शिखर तथा पृष्ठतल एक समान नहीं होते। यदि किसी की धार सिलसिलेवार, बिना कटी-पिटी, 'पूर्ण' या समान होती है, तो बहुतेरी ऐसी पत्तियाँ भी हैं, जिनकी कोर काफी कटावदार अथवा आरा, कंघी आदि की भाँति 'दंतुर' होती है। इसी प्रकार से किसी के 'शिखर' नोकदार होते हैं, तो किसी के कुंठित! किसी का पृष्ठदल अर्थात् ऊपरी एवं पीठ पर का धरातल चिकना होता है, तो किसी का मखमली, रोमों से युक्त, दंदानेदार, खुरदरा अथवा काँटों से सजा हुआ भी! इस रचना-भेद का स्पष्ट अनुभव तुम ढाक, बरगद, पीपल, आम, अमरूद आदि वृक्षों की एक-एक पत्ती लेकर नीम, गुलाब, टिकोमा, पुदीना, सरसों, टमाटर, शाहबलूत, भोजपत्र आदि की पत्तियों के साथ मिलान करके प्राप्त कर सकते हो। फिर यह बात भी ध्यान में रखना जरूरी है कि जहाँ अलग-अलग वृक्षों की पत्तियों की आकृतियों में अनेकानेक भेद पाये जाते हैं, वहाँ जिस क्रम से वे सब शाखा-प्रशाखाओं पर सजी रहती हैं, उसके भी अनेक ढंग देखने को मिलते हैं। यह '**पत्रसंगठन**' मुख्यत: 'प्रत्यावर्ती', 'अभिमुखी' एवं 'चक्राकार आवर्त' इन तीन क्रमों में व्यवस्थित हुआ करता है। अभिमुख पत्तियाँ प्राय: दो या चार कतारों में सजी रहती हैं। प्रत्यावर्ती क्रम में वे पाँच, सात या इससे कम-ज्यादा कतारों में घुमाव के साथ घेरे में सज्जित देख पड़ती हैं। यह भी याद रखना चाहिए कि पत्तियाँ 'सरल' या एकदली भी होती हैं (जैसी कि आम में) और 'संयोजित' या बहुदली भी (जैसी कि अरंड या चौपतिया के पौधे में)। तुमने शायद गौर किया होगा कि प्रत्येक जाति की पत्तियों का आरंभावस्था में प्रकट होते समय मुड़े रहने का अपना विशेष ढंग होता है। इसे वनस्पति-विज्ञान की बोली में '**पत्रवेष्ठन**' के नाम से पुकारा जाता है।

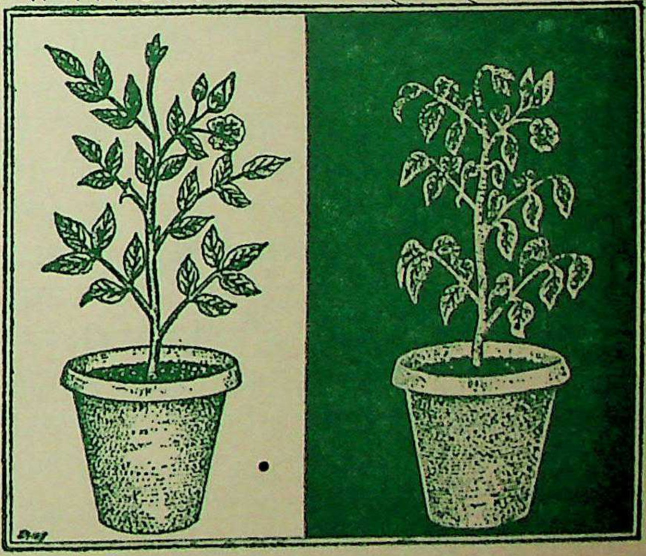

पौधों के लिए सूर्यकिरणों का कितना अधिक महत्व है, यह इन दो चित्रों से स्पष्ट हो जाता है। बाईं ओर, इस पौधे के प्रकाश में रहते समय का तथा दाहिनी ओर उसी को पर्याप्त समय तक अँधेरे में रखने पर लिया गया फोटो है। देखिये, प्रकाश से वंचित होकर पत्तियाँ किस प्रकार मुरझा गई हैं!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पत्ती का शिराजाल तथा उसके फैलने का ढंग

यदि किसी सूखी हुई पत्ती को लेकर उसे ध्यानपूर्वक देखा जाय, तो हमें उसके कलेवर में तह से नीचे स्पष्टत: मानो नसों और नाड़ियों का एक बुना हुआ जाल-सा दिखाई देगा ! इन नसों या शिराओं का कुछ-कुछ आभास गौर से देखने पर हरी-भरी पत्ती में भी हम बखूबी पा सकते हैं। कारण, प्राय: सभी पत्तियों पर उनकी शाखा-प्रशाखाएँ स्पष्टतया उभरी रहती हैं। इन नसों के फैलाव के मुख्यत: दो ढंग हैं--**'समान्तर शिराविन्यास'** (जैसा कि तरह-तरह की घासों, अनाजों और केला, बाँस, आदि एकबीजपत्री पौधों की पत्तियों में देखने को मिलता है); २. **'जालीदार नाड़ीक्रम'** (जो पीपल, आम, जामुन, मटर, गुलाब आदि द्विबीजपत्री पौधों की विशेषता है)। कहना न होगा कि शिराओं के इस जंजाल के बूते पर ही दृढ़ बनी रहकर पत्ती तनी हुई-सी देख पड़ती है; अन्यथा लूली होकर वह मात्र लटकी-लटकी-सी जान पड़ती ! फिर, उक्त नसों के चमत्कार से ही मनों पानी जड़ों से पत्तियों तक पहुँचकर पौधे के कलेवर को निरंतर सींचता रहता है ! सच तो यह है कि नाड़ियों के इस जाल का पौधे के लिए वही महत्व है, जोकि हम जीवधारियों के कलेवर में रक्तवाहिनी धमनियों का है।

पत्ती की आन्तरिक बनावट

पत्ती की बाहरी रूपरेखा का परिचय पाने के बाद, आओ, अब पौधे के इस महत्वपूर्ण अंग की आन्तरिक बनावट की भी जानकारी पाने का प्रयत्न करें, जिसके बिना इस अद्‌भुत रचना की गूढ़ प्रक्रियाओं का भेद पाना संभव नहीं है। इस कार्य के लिए सूक्ष्मदर्शी यंत्र (माइक्रोस्कोप) की मदद अनिवार्य रूप से आवश्यक है; क्योंकि वही एक साधन है, जोकि सूक्ष्मातिसूक्ष्म कोशिकाओं की हजारों गुना बड़ी तस्वीरों को चित्रपट की भाँति हमारी निगाह के आगे उद्‌घाटित करके हमें उनकी गुप्त हलचल का साक्षात्कार करने में समर्थ बनाता है।

इस प्रकार की जाँच-परख से पता चला है कि यद्यपि पत्तियाँ देखने में पतली होती हैं, तथापि उनका कलेवर वास्तव में एक-दूसरे पर छाये हुए अनेक तन्तु-स्तरों की पर्तों द्वारा रचित होता है। इनमें से सबसे बाहरी पर्त (जोकि पत्ती के ऊपर-नीचे दोनों बाजू में पाई जाती है) **'एपिडर्मिस' (बाह्य त्वचा)** कहलाती है। अत्यन्त महीन झिल्ली जैसी इस पर्त की मोटान मात्र एक कोशिका भर की होती है। उसमें दो प्रकार की कोशिकाएँ पाई जाती हैं--१. **'अधिचर्म कोशिकाएँ' (एपिडर्मल सेल्स)**, जो पारदर्शक होती हैं; २. **'रक्षक कोशिकाएँ' (गार्ड सेल्स)**, जो हरितवर्ण होती हैं। इन दोनों कोशिकाओं पर **'क्यूटिन'** नामक मोमनुमा द्रव्य चढ़ा रहता है, जो उन्हें क्षतिग्रस्त होने से बचाता, साथ ही जल के अत्यधिक निष्कासन को भी रोकता है। एपिडर्मिस की सबसे उल्लेखनीय विशेषता है उसमें छलनी के छिद्रों की तरह के **'स्टोमाटा'** नामक उन अनोखे छिद्रों का बाहुल्य, जो कि पत्ती द्वारा 'वाष्पत्याग' (जल-निस्सरण), कार्बन डाइऑक्साइड के ग्रहण एवं ऑक्सिजन के निष्कासन के महत्वपूर्ण साधन हैं। इन रन्ध्रों की संख्या प्रति वर्गसेंटीमीटर क्षेत्र में साढ़े बासठ हजार तक आँकी गई है, जिसका अर्थ यह हुआ कि सूरजमुखी जैसे पौधे की एक पत्ती में ही लगभग सवा करोड़ स्टोमाटा के रन्ध्र हुआ करते हैं ! कुछ पौधों में ये रन्ध्र पत्ती की केवल एक ही बाजू में होते हैं और कुछ में ऊपर-नीचे दोनों ही बाजू में पाये जाते हैं। कहते हैं, एपिडर्मिस में जो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

'गार्ड सेल्स' (**रक्षक कोशिकाएँ**) पाई जाती हैं, उनका एकमात्र कर्त्तव्य यही है कि **'स्टोमाटा'** के रन्ध्रों को आवश्यकतानुसार खोलें और बन्द करें !

'एपिडर्मिस' की तह के नीचे नसों या शिराओं के जंजाल के अतिरिक्त पत्ती के कलेवर में **'मेसोफिल'** (**पर्णमध्यक**) नामक खाद्य-द्रव्योत्पादक कोशिकाओं का जबर्दस्त जमघट लगा रहता है। इन कोशिकाओं की भित्ति बहुत पतली होती है और उनमें **'क्लोरोप्लास्ट'** नामक हरिताणुओं की प्रचुरता पाई जाती है। अनेक पौधों की पत्तियों की मेसोफिल कोशिकाएँ ऊपरी सतह की ओर बेलनाकार आकृति की तथा निचली बाजू में वर्तुलाकार शक्ल की मिलती हैं। इनमें प्रथम **'पैलीसेड सेल्स'** (**लंब-ऊतक कोशिकाएँ**) तथा द्वितीय **'स्पंजी सेल्स'** (**स्पंजाभ कोशिकाएँ**) कहलाती हैं। मेसोफिल कोशिकाओं के एक दूसरे के बीच का अंतर-तांतविक स्थान कार्बन डाइऑक्साइड गैस के विसरण में मदद किया करता है। मैसोफिल कोशिकाएँ किस प्रकार **'फोटोसिंथेसिस'** की महत्वपूर्ण खाद्य-निर्माण-क्रिया में योग देती हैं; यह हम आगे चलकर बताएँगे।

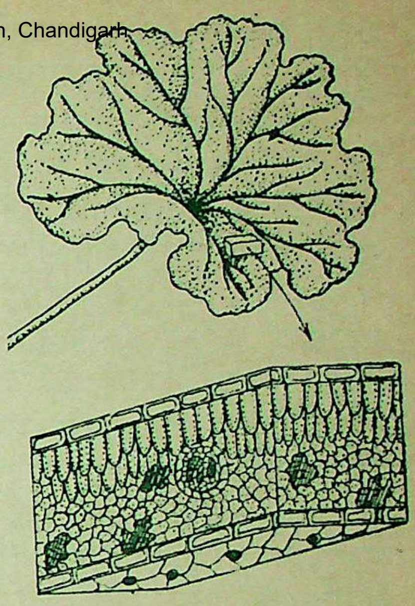

यदि किसी पत्ती के एक अत्यन्त लघु अंश की आड़ी कत्तल काटकर, सूक्ष्मदर्शी यंत्र द्वारा उसका निरीक्षण किया जाय, तो सबसे ऊपर और नीचे 'एपिडर्मिस' की तह, तदनंतर 'मेसोफिल' कोशिकाओं की 'पैलीसेड' एवं 'स्पंजी सेल्स' दिखाई देंगी। चित्र में बीच के काले धब्बे अंतर-तांतविक स्थानों के सूचक हैं एवं गोलाकार चिह्न एक नस है।

पत्तीरूपी रसायनशाला की अद्भुत क्रिया-प्रक्रियाएँ

वैज्ञानिकों ने पत्ती को पौधे का सबसे महत्वपूर्ण अंग मानकर, उसे जो एक अद्भुत रसायनशाला कहा है, सो कोई अर्थहीन थोथी प्रशंसा नहीं है। कारण, इस अनूठे अंग में सचमुच ही किसी उन्नत रासायनिक प्रयोगशाला से कम गूढ़ और पेचीदा कारगुजारी नहीं होती। क्या है वह कारगुजारी, आओ, संक्षेप में उसका लेखा यहाँ प्रस्तुत करें :—

१. **जलसंचार एवं वाष्पत्याग**—पौधों के लिए जल का कितना अधिक महत्व है, इस बात को किसी को जताने की आवश्यकता नहीं। क्योंकि सभी यह बखूबी जानते हैं कि पानी से ही पौधा पनपता है और उसका अभाव होते ही वह मुरझाने या सूखने लगता है। भला, जबकि जड़ें भूमि से निरन्तर पानी की बृहत् राशि को शोषित करके सदैव पौधे के कलेवर में पहुँचाती रहती हैं, उस पर भी पौधे की इस संबंधी माँग जब-तब बनी ही क्यों रहा करती है? इसका कारण यह है कि जहाँ जड़ें इतना पानी पौधे में पहुँचातीं, वहाँ पत्तियाँ उसे **'वाष्पत्याग'** की क्रिया द्वारा निरन्तर बाहर निकालती रहती हैं (दे० पृ० १०८ का चित्र)। इस जल-निस्सरण के परिमाण का कुछ अन्दाज इस बात से तुम लगा सकते हो कि केवल एक एकड़ क्षेत्र के गेहूँ के पौधों से प्रतिदिन लगभग ढाई सौ टन पानी निकलकर वायुमंडल में पहुँचा करता है! वास्तव में, जड़ों द्वारा शोषित कुल जल का केवल ५ प्रतिशत या इससे भी कम अंश ही पौधे में काम आकर खर्च हुआ करता है—शेष ९५ प्रतिशत वाष्पत्याग द्वारा बाहर निकल जाता है। हम तुम्हें बता दें कि जल का यह संचरण पौधे के लिए एक अति महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। वही उसकी रसद-सामग्री को हर हिस्से में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पहुँचाने का सबसे कारगर साधन है। वह उसके भीतरी ताप को संतुलित बनाये रखने का भी नैसर्गिक उपकरण है। फिर, 'फोटोसिंथेसिस' की महत्वपूर्ण क्रिया को संपन्न करने में भी उसकी अनिवार्य आवश्यकता रहती है; क्योंकि इस प्रक्रिया के लिए 'मेसोफिल' नामक कोशिकाओं की भित्तियों का तर रहना तथा 'स्टोमाटा' का नियमानुसार खुलना बन्द होना जरूरी होता है। यह तभी संभव हो पाता है, जब कि **'जलसंचार'** और **'वाष्पत्याग'** की युगल क्रियाओं द्वारा पौधे में जलप्रवाह का सिलसिला बना रहे। होता यह है कि जब पत्ती में जल की मात्रा बढ़ जाती है, तो 'रक्षक कोशिकाएँ' फूल जाती हैं, जिसके फलस्वरूप 'स्टोमाटा' के छिद्र खुल जाते हैं। तदनन्तर जब भी जल कम हो जाता है, तो उक्त कोशिकाएँ पिचक जाती हैं, जिसके कारण 'स्टोमाटा' बंद हो जाते हैं।

पौधे में जल का संचार नसों के विस्तृत जाल के द्वारा संपन्न हुआ करता है। ये नसें ही जड़ से ठेठ पत्ती तक, कभी-कभी सैकड़ों मीटर की ऊँचाई तक, टनों पानी निरन्तर पहुँचाती रहती हैं! इस तरह अपने आप पानी के उठते चले जाने के पीछे प्रकृति की **'रसाकर्षण' (ऑस्मासिस)** तथा **'अंतःशोषण' (इम्बिबिशन)** नामक भौतिक-रासायनिक क्रियाओं का प्रमुख हाथ होता है। इन शक्तियों के प्रभाव से ही जल बड़े दबाव के साथ पौधे के कलेवर में चढ़ता और उसी दबाव के वेग से 'स्टोमाटा' के रन्ध्रों से वाष्प-रूप में बाहर निकल जाया करता है। कभी-कभी पौधे के हित में प्रकृति इस बात की भी आवश्यकता अनुभव करती है कि यह जल-निस्सरण अधिक न हो। तब वह इस उद्देश्य से अनेकानेक उपाय करती है, जिनमें से एक है समय-समय पर पत्तियों का झड़ना अर्थात् **'पतझड़'**। इस कारगर उपाय से, 'न रहे बाँस न बसे बाँसुरी' की कहावत को सार्थक बनाते हुए, कुदरत पौधों से उनके वाष्पत्याग का प्रमुख उपकरण ही कुछ समय के लिए मानो छीन लेती है। इसके अतिरिक्त भी प्रकृति भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में आवश्यकतानुसार जल की छीज रोकने के विविध उपाय करते पाई जाती है। उदाहरणार्थ, कई पौधों में पत्तियाँ शीत के प्रभाव से एवं रात के वक्त मुड़कर परस्पर मिल जाती अथवा सिमट सी जाती हैं (दे० पृ० ११३ का चित्र)। इस विधि से उनका वाष्पत्याग बहुत कम हो जाता है। उधर नागफनी, थूहड़ जैसे मरुभूमि के पौधों ने तो पत्तियों को तिलांजलि देकर अपने तनों को ही ऐसा विकसित कर लिया है कि वे पत्तियों का-सा काम देते हैं, साथ ही जल एवं खाद्य द्रव्य के संग्रह-भंडारों का भी। किसी हद तक गोंद, लोबान, मोम जैसे द्रव्य तथा रोम, शल्क आदि की उपस्थिति भी पत्तियों से वाष्पत्याग को कम करने में सहायक होते हैं।

२. प्रकाश-संश्लेषण (फोटोसिंथेसिस) एवं स्टार्च-निर्माण––वनस्पतियों की जीवन-लीला को बनाये रखने के लिए **'कार्बन'** तत्व की बहुत बड़ी मात्रा में जरूरत रहा करती है। इसकी संपूर्ति के लिए प्रकृति ने भूमि के रसद-भंडार का मोहताज न रखकर पौधों को सीधे वायुमंडल से इस तत्व को प्राप्त कर लेने की अद्भुत क्षमता प्रदान कर दी है। यह कार्य 'प्रकाश-संश्लेषण' (फोटोसिंथेसिस) नामक एक अत्यन्त अनोखी भौतिक-रासायनिक क्रिया द्वारा पत्तियों की रसायनशाला में ही संपन्न होता है। तुम्हें यह तो ज्ञात होगा ही कि वायुमंडल में ऑक्सिजन, नाइट्रोजन आदि के साथ-साथ **'कार्बन डाइऑक्साइड'** गैस भी किसी मात्रा में विद्यमान है। इस गैस में दो भाग ऑक्सिजन के तथा एक भाग कार्बन का होता है। यह गैस जीव-जन्तुओं के लिए तो घातक और अवांछनीय होती है, इसीलिए वे अपनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

श्वसन-क्रिया के दौरान ऑक्सिजन को ग्रहण करके उसको त्यागते रहते हैं। परन्तु पौधे इससे अपना एक अति महत्वपूर्ण कार्य साधते हैं—वे उससे **'स्टार्च'** नामक अपने मूल्यवान् खाद्य द्रव्य का निर्माण करते हैं! होता यह है कि पत्ती द्वारा ग्रहण की जाकर जब यह गैस उसके अन्तर-तान्तविक स्थान में पहुँचती है, तो वहाँ विद्यमान जल से संपृक्त हो वह तुरन्त ही पूर्वोक्त **'मेसोफिल'** नामक अनूठी कोशिकाओं द्वारा जज्ब कर ली जाती है। अब एक अद्‌भुत रासायनिक क्रिया आरंभ होती है। कहते हैं, कार्बन डाइऑक्साइड के छः अणु (जो जल के उतने ही अणुओं के साथ संयुक्त हो चुके होते हैं) अब **'ग्लुकोज'** नामक शर्करा के एक अणु तथा ऑक्सिजन के छः अणुओं में परिणत हो जाते हैं! इस क्रिया के संपन्न होने में सूर्य-रश्मियों का प्रमुख हाथ होता है, इसीसे इसे **'फोटोसिंथेसिस'** (**प्रकाश-संश्लेषण**) के नाम से अभिहित किया जाता है। इसे सफल बनाने में **'क्लोरोफिल'** (**पर्णहरिम**) नामक हरित द्रव्य का कारगर हाथ रहा करता है। उसके **'क्लोरोप्लास्ट'** नामक हरिताणु इस क्रिया में उत्प्रेरक का काम करते हैं।

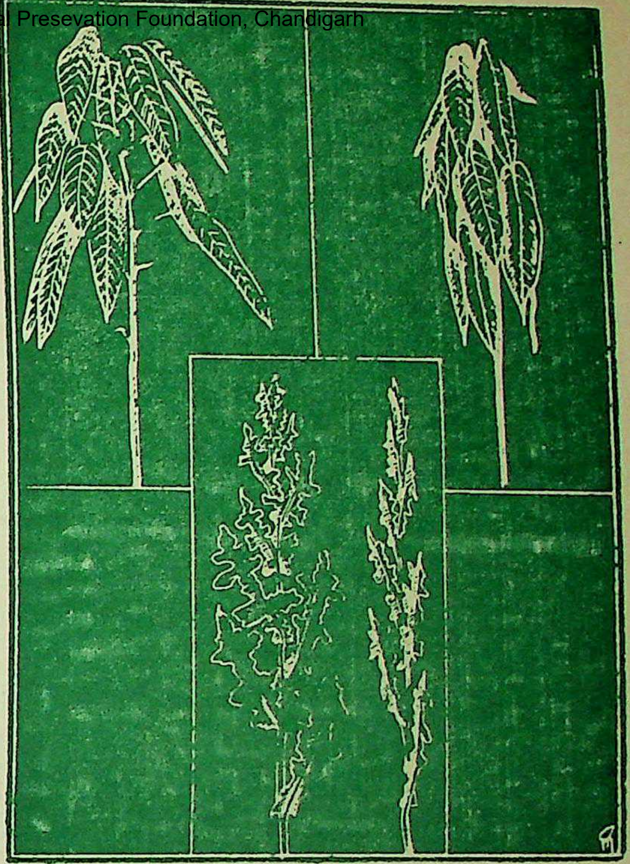

कई पौधे दिन की रोशनी में अपनी पत्तियों को फैलाये रहते और रात के अंधेरे में उन्हें इस तरह समेट लेते हैं मानो सो रहे हों! यथार्थ में यह प्रकृति द्वारा नियोजित पौधों से जल की छीज को रोकने का एक कारगर उपाय मात्र है। ऊपर 'डेस्मोडियम गायरेन्स' नामक पौधे की जाग्रत और सुप्तावस्था की ऐसी ही दो छवियाँ दिग्दर्शित हैं। नीचे 'जंगली सलाद' नामक पौधे की दो आकृतियाँ हैं। इस पौधे के पत्रदल सदैव पूर्व-पश्चिम तथा उनके किनारे उत्तर-दक्षिण दिशा की ओर घूमे रहते हैं!

हम तुम्हें बता दें कि इस पृथ्वी पर के तमाम वनस्पति मिलकर कुल जितनी शर्करा प्रति वर्ष तैयार करते हैं, उसका परिमाण ३,७५० खरब टन से भी अधिक आँका गया है! इस शर्करा को पौधे अधिकतर **'स्टार्च' (माँड़ी या श्वेतसार)** में बदलकर अपने कलेवर में भाँति-भाँति से संगृहीत किया करते हैं, जिसे उपलब्ध करके मनुष्य और अन्य जीवधारी अपना भरण-पोषण करते हैं। उधर फोटोसिंथेसिस की इस भौतिक-रासायनिक प्रक्रिया के दर्मियान जो ऑक्सिजन मुक्त होती है, वह पुनः लौटकर वायुमंडल में जा मिलती है। इससे भी जीवधारियों का महान् हित होता है, क्योंकि वायुमंडल में ऑक्सिजन का भंडार बरकरार बना रहता है, जोकि प्राणियों के जीवन-निर्वाह के लिए अत्यावश्यक है। फोटोसिंथेसिस के दौरान पौधे ऑक्सिजन मुक्त करते हैं, यह बात पृ० १०८ के चित्र के निचले भाग में दिग्दर्शित प्रयोग द्वारा तुम सहज ही सिद्ध कर सकते हो। इसके लिए हाइड्रेला जैसे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किसी जलपौधे को एक पात्र में जल के अंदर एक कीप से ढककर रख दो, जिसकी नली पर पानी से भरी एक टेस्टट्यूब उल्टी रखी हो । अब इस समूचे उपकरण को सूर्यप्रकाश दो । कुछ ही घंटों में तुम देखोगे कि बुलबुले उठ-उठकर कोई गैस ट्यूब में जमा हो गई है । दियासलाई जलाकर यह सहज ही पता लगाया जा सकता है कि यह गैस ऑक्सिजन है ! हम तुम्हें बता दें कि इस प्रकार वायुमंडल की कार्बन डाइऑक्साइड को ग्रहण करके तथा ऑक्सिजन को मुक्त करके पौधे हमारे आसपास के वातावरण को शुद्ध बनाये रखने में अनमोल योग दिया करते हैं । परन्तु यह क्रिया केवल हरे पेड़-पौधे ही कर पाते हैं और सो भी सूर्य की रोशनी में ही, अँधेरे में नहीं !

३. नाइट्रोजन-एसिमिलेशन या प्रोटीन-संश्लेषण—'कार्बन' की भाँति पौधों के जीवन-निर्वाह के लिए **'नाइट्रोजन'** भी एक अत्यावश्यक तत्त्व है; क्योंकि 'जीव-द्रव्य' (प्रोटोप्लाज्म) का वह एक महत्वपूर्ण अवयव है । यद्यपि यह मूल तत्त्व वायुमंडल में ७९ प्रतिशत मात्रा में विद्यमान है, तथापि (बैक्टीरिया जैसे कतिपय एककोशीय प्राणियों को छोड़कर) न तो जानवर न वनस्पति ही वायु से उसे सीधे प्राप्त करने में सर्वथा समर्थ हैं । इस मूल्यवान् तत्त्व की संपूर्ति पेड़-पौधे भूमि से नाइट्रेटों या अमोनिया के लवणों के रूप में ग्रहण करके ही किया करते हैं । इन्हीं से वे अंततोगत्वा **'प्रोटीन'** नामक उन आधारभूत खाद्यों का निर्माण करते हैं, जो कि जीवधारियों की शरीर-रचना के लिए अत्यावश्यक होते हैं । जिस रासायनिक क्रिया द्वारा यह कठिन कार्य वे साधा करते हैं, वही विज्ञान की बोली में **'नाइट्रोजन-एसिमिलेशन'** या **'प्रोटीन-संश्लेषण'** के नाम से पुकारी जाती है । यह महत्वपूर्ण क्रिया भी पत्तियों की रसायनशाला में ही संपन्न होती है । इस क्रम में पहले नाइट्रेट पौधे के कलेवर में पहुँचकर नाइट्राइट या अमोनियम के नमकों में परिवर्तित होते हैं । तदनन्तर फार्मेल्डीहाइड के सहयोग से वे **'अमीनो ऐसिड'** नामक अम्लों का निर्माण करते हैं । यही अमीनो ऐसिड अंत में **'प्रोटीड'** नामक द्रव्यों की रचना करते हैं, जो कि **'प्रोटीन'** के मूल पदार्थ हैं । प्रोटीनों की उत्पत्ति पौधे द्वारा निर्मित कार्बोहाइड्रेटों (स्टार्च, शर्करा आदि) के साथ पूर्वोक्त नाइट्रेट लवणों के संयोग से हुआ करती है । इस क्रिया में गंधक, फास्फोरस आदि का भी महत्वपूर्ण हाथ रहा करता है ।

४. श्वसन-क्रिया (रेस्पिरेशन)—तुम्हें यह जानकर अचंभा हुए बिना नहीं रहेगा कि जीव-जंतुओं की भाँति पौधों में भी एक प्रकार की **'श्वसन-क्रिया' (रेस्पिरेशन)** हुआ करती है, जिसमें वे ऑक्सिजन को ग्रहण करते तथा उतनी ही मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड को बाहर निकाल दिया करते हैं । यह श्वसन वस्तुतः एक ऑक्सीकरण-क्रिया है, जो **'ऑक्सीडेज', 'ऑक्सीजनेज'** तथा **'जाइमेज'** नामक प्रवर्तकों की मदद से हुआ करती है । वाष्पत्याग तथा फोटोसिंथेसिस की भाँति इस क्रिया में भी गैसों का आयात-निर्यात स्टोमाटा के छिद्रों के ही रास्ते से होता है । कुछ पौधों में इस कार्य के हेतु विशेष प्रकार की जड़ें भी पाई जाती हैं, जो **'श्वसन-जड़ें'** कहलाती हैं । बैक्टीरिया तथा फफूँदवर्गीय पौधों में श्वसन का एक ऐसा प्रकार भी देखने को मिलता है, जिसमें बाह्य ऑक्सिजन को न ग्रहण करते हुए, कार्बन डाइऑक्साइड का त्याग किया जाता है । इस प्रकार के श्वसन को **'एनएरोबिक या इन्ट्रामालिक्यूलर रेस्पिरेशन'** की संज्ञा प्रदान की गई है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विशेष परिस्थितियों में, कुछ पौधों की पत्तियों ने अपने साधारण कर्त्तव्यों की सीमा लाँघकर बहुतेरे अनोखे और असामान्य कार्यों का भी दायित्व ग्रहण कर लिया है। इसीसे इस प्रकार की पत्तियाँ निराली या असाधारण कहलाती हैं। उदाहरणार्थ, मटर, मोरबेल, ट्रोफोलियम जैसी लताओं में कुछ पत्तियाँ बौंडों का रूप धारण कर आधार से लिपटने का कार्य करते देख पड़ती हैं, तो बेंत जैसे अन्य आरोहियों में उन्होंने कटिया जैसे मुड़े हुए काँटों में परिणत होकर पौधे को सहारा देने की जिम्मेदारी अपना ली है! इधर सिंघाड़े, जलकुंभी जैसे पानी में उगनेवाले कुछ वनस्पतियों की पत्तियाँ तूँबी या मशक की तरह फूलकर उन्हें जल पर तैरने में मदद देती हैं! उधर सेल्वीनिया नामक अन्य एक जलपौधे में वे सूत्रवत् डोरों जैसा आकार ग्रहण कर जड़ों का काम करते हुए भी दिखाई देती हैं! यहाँ बुगनवीलिया में पतिंगों को आकर्षित करने के लिए कुछ वृन्तपत्रों ने ही रंगीन पंखुड़ियों का-सा बाना पहन रक्खा है! वहाँ अजूबा और बिगोनिया जैसे पौधों की पत्तियों ने अपनी कोर पर ऐसी सूक्ष्म कलियाँ अंकुरित कर रक्खी हैं, जो बीज का काम देकर नई पौध उगाने का सामर्थ्य रखती हैं! फिर प्याज और लहसुन जैसे अपने उन सुपरिचित पौधों पर भी जरा गौर करो, जिनकी पत्तियों ने एक तरह की गाँठों (या बल्ब) में परिणत होकर खाद्य-संग्रह करने के महत्वपूर्ण कोठार या गोदाम का रूप धारण कर लिया है। साथ ही भटकटैया, रसौत, करुआ, हाथीचिंघार जैसे उन कँटीले वनस्पतियों पर भी ध्यान दो, जिनकी पत्तियों ने अपने कोमल अंगों पर तीक्ष्ण शूल एवं काँटे सजाकर उक्त पौधों की दुश्मनों से रक्षा करने की गहन जिम्मेदारी ले रक्खी है!

परन्तु पत्तियों की सबसे विचित्र और असाधारण करतूत तो **'लाजवन्ती'** या **'छुईमुई' (माइमोसा प्यूडीका)** नामक अद्‌भुत पौधे के असामान्य बर्त्ताव में देखने को मिलती है। इस पौधे की पत्तियाँ किसी भी वस्तु का स्पर्श पाते ही तत्काल सिमटकर इकट्ठी-सी हो जाती हैं (दे० इसी पृष्ठ का चित्र)! इस पौधे की उक्त हरकत से वैज्ञानिक जगत् विस्मयविमुग्ध और चकित है! इसकी उस अद्‌भुत अनोखी प्रक्रिया का स्वनिर्मित सूक्ष्म यंत्रों से गहने अध्ययन करके ही स्व० विज्ञानाचार्य डॉ० जगदीशचन्द्र वसु ने यह प्रस्थापना प्रस्तुत की थी कि जीव-जन्तुओं की तरह वनस्पतियों में भी एक प्रकार की संवेदनशील वात-व्यवस्था या **'तंत्रिका-तंत्र' (नर्वस सिस्टम)** विद्यमान है, जिसकी बदौलत वे भी सुख-दुःख, आनन्द-पीड़ा, ताप-संताप आदि का अनुभव करते हैं! तो तुमने देखा कि पत्ती पौधे का कितना आश्चर्यजनक और रहस्यमय अंग है? वह पौधे के श्वसन, खाद्य-

वनस्पति-जगत् के आश्चर्यों में से एक है हमारे सुपरिचित 'लाजवन्ती' या 'छुईमुई' नामक पौधे की वह रहस्यमय प्रतिक्रिया, जिसके अधीन प्रायः उंगली से छूते ही उसकी पत्तियाँ मानो लजाकर अपने आपको समेट लेती हैं! क्या इससे यह संकेत नहीं मिलता कि जानवरों की तरह पेड़-पौधे भी तरह-तरह की संवेदनाओं का अनुभव करते हैं?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निर्माण, आदि की रसायनशाला ही नहीं, प्रत्युत उसकी रहस्यमय वात-व्यवस्था का भी कारगर उपकरण है! फिर, उसकी महिमा का बखान कोई क्या करे ?

फूल--पौधे की अद्‌भुत जननेन्द्रिय :: रचना और अंग-विधान

यदि हम किसी साधारण पुष्प को गौर से देखें, तो पहली निगाह में ही तत्काल हमें यह बात जाहिर हो जायगी कि हर पुष्प के मोटे तौर पर दो भाग होते हैं--एक निचला डंठलवाला हिस्सा, जिसे **'पुष्पवृन्त' (स्टाक)** कहते हैं; दूसरा पंखुड़ियोंवाला ऊपरी दर्शनीय भाग, जो **'परिदलपुंज' (पेरियंथ)** कहलाता है तथा देखने में एक जान पड़ने पर भी यथार्थ में चार चक्रों का पुंज होता है। ये चार पुंज हैं--१. **'बाह्य दलपुंज' (कैलिक्स)**, जो सबसे बाहर होता है तथा जिसके **'सैपल'** नामक दल प्रायः हरी पत्तियों जैसे होते हैं; २. **'दलपुंज' (कॉरोला)**, जो सबसे अधिक तड़कीला-भड़कीला एवं सुगंध से युक्त होता है, तथा जिसकी **'पंखुड़ियाँ' (पेटल्स)** कीट-पतिंगों को लुभाने के लिए अपने तल भाग में प्रायः मीठे **'मधुरस' (नेक्टार)** उपजाने वाली **'मकरन्द-कोश' (नेक्टेरी)** नामक ग्रंथियों को छिपाये रहती हैं; ३. **'पुमंग'** या **'लिंगचक्र'**, जो एक या अनेक पुंकेसर (**स्टेमेन्स**) अपने आशय में लिये रहता है; तथा ४. **'जायांग'** या **'योनिचक्र'** जो **'स्त्रीकेसर' (पिस्टिल)** नामक नारी-इन्द्रिय का संस्थान होता है। यहाँ हम तुम्हें सावधान कर देना चाहते हैं कि जहाँ तक पुष्प के मुख्य प्रयोजन--**'प्रजनन'**--का प्रश्न है, अंतिम दो चक्र अर्थात् 'लिंगचक्र' और 'योनिचक्र' ही आवश्यक उपकरण हैं। इसीलिए वे फूल के **'आवश्यक अंग'** कहलाते हैं। शेष दो चक्रों का आशय संसेचनार्थ कीट-पतिंगों को फूल तक आकर्षित करना मात्र होता है। इसी से उन्हें पुष्प के **'सहायक या अतिरिक्त अंग'** की संज्ञा प्रदान की जाती है।

'पुंकेसर' की रचना एक पतले सूत्र जैसी होती है। इस सूत्र को **'पुंतन्तु' (फाइलामेंट)** के नाम से पुकारा जाता है। 'पुंतन्तु' के सिरे पर **'परागकोश' (एन्थर)** नामक एक उपांग होता है, जो **'पराग' (पोलेन)** का उत्पादन करता है। जब पराग पककर तैयार हो जाते हैं, तब यह उपांग खुल जाता है। इस प्रकार मुक्त हुए परिपक्व परागकण यदि धूलि जैसे हुए, तो वायु द्वारा उड़ाकर स्त्रीकेसर तक पहुँचा दिए जाते हैं, और यदि वे चिपचिपे हों, तो मधु की टोह में आनेवाले कीट-पतिंगों के पैरों, परों आदि में लिपटाकर पुष्प के जायांग तक उन्हें ले जाने का आयोजन प्रकृति ने रच रक्खा है! 'स्त्रीकेसर' फूल के मध्यवर्ती केन्द्रीय क्षेत्र में अवस्थित होते हैं। इस उपांग के तीन भाग होते हैं--१. **'वर्तिकाग्र' (स्टिग्मा)**; २. **'वर्तिका' (स्टाइल)**; तथा ३. **'अंडाशय' (ओवरी)**। 'वर्तिकाग्र' सबसे ऊपरी हिस्सा होता है। उसका काम है--वायु अथवा कीट-पतिंगों द्वारा लाए गए परागकणों को ग्रहण करना तथा उनमें जो उत्तम हों उन्हें मध्यवर्ती भाग 'वर्तिका' के रास्ते 'अंडाशय' तक पहुँचाना, जो कि स्त्रीकेसर के तल भाग में अवस्थित होता है। वर्तिका 'अंडाशय' और 'वर्तिकाग्र' को जोड़नेवाली रचना है। 'अंडाशय' भीतर से खोखला होता है, जिसमें एक या अधिक **'बीजाण्ड' (ओव्यूल)** एकत्र रहते हैं। 'परागण' एवं 'संसेचन' की प्रक्रिया के संपन्न हो जाने पर प्रत्येक 'बीजाण्ड' विकसित होकर बीज में परिणत हो जाता है।

जैसा कि 'फूलों की दुनिया' शीर्षक प्रकरण में हम सूचित कर चुके हैं, रूप-रंग, आकृति, पंखुड़ियों की संख्या आदि-आदि के लिहाज से पुष्पों के अनेकानेक भेद होते हैं। 'पुंकेसर' एवं 'स्त्रीकेसर' के अंग-उपांगों के रचनाभेदों को लेकर उनकी विविधता का यह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ताँता और भी अधिक लंबा एवं विस्तृत होता चला गया है। उधर पुष्पों की **'मुकुलरचना'**, **'पर्णसंवलन'**, **'पुष्पपत्रक्रम'**, **'पुष्पव्यूह'** **(इन्फ्लोरेसेन्स)** आदि के लिहाज से भी उनके अनेकानेक भेद-विभेद पाये जाते हैं। परन्तु यहाँ इतना स्थान नहीं कि तत्संबंधी विवरण दिया जा सके।

'परागण' और 'संसेचन'--फूल के दो मुख्य कार्य

'फूल' की सृष्टि प्रकृति ने केवल एक ही प्रयोजन से की है। वह उद्देश्य है--नस्ल को कायम रखने तथा भावी पौध को उगाने के लिए **'प्रजनन' (रिप्रोडक्शन)**, अर्थात् बीज का उत्पादन करना। इसी की संपूर्ति के लिए रह-रहकर फूलों की बहार आती रहती है, जो **'परागण' (पोलिनेशन)** और **'संसेचन' (फर्टिलाइजेशन)** नामक क्रियाओं को संपन्न करके अपने-अपने बीजों से पौधों की गोद भरकर उन्हें निहाल करते रहते हैं। इसमें 'परागण', जैसा कि उसके नाम ही से प्रकट है, पुंकेसर में उत्पन्न परागकणों को स्त्रीकेसर के वर्तिकाग्र तक पहुँचाने की क्रिया है। इस क्रिया के दो प्रकार-भेद पाये जाते हैं--

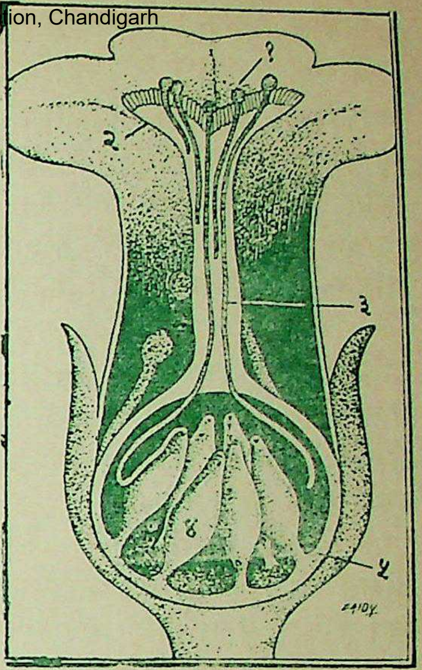

पुष्प के प्रजनन-अंग :: १. परागकण; २. वर्तिकाग्र; ३. अंडाशय को जा रही परागनलिका; ४. बीजाण्डों में से एक में परागनलिका प्रविष्ट हो रही है; ५. अंडाशय, जिसमें बीजाण्ड संगृहीत रहते हैं।

१. **'स्वयं-परागण'**--इसके अंतर्गत परागकण उसी फूल के वर्तिकाग्र अथवा उसी पौधे के अन्य पुष्प के वर्तिकाग्र पर जा स्थापित होते हैं।

२. **'पर-परागण'**--इस विधि में एक पौधे के परागकण उसी जाति के अन्य पौधे के पुष्प के वर्तिकाग्र पर पहुँचाए जाते हैं। स्वयं-परागणवाले पुष्प प्रायः अनाकर्षक होते हैं। परन्तु पर-परागणवाले फूलों को कीट-पतिंगों जैसे माध्यमों द्वारा अपना काम साधने के हेतु तड़कीले-भड़कीले रंगीन वेश धारण कर, तरह-तरह की गंध महकाने तथा मीठे मकरन्द का भंडार खोलने की लीला रचनी पड़ती है। पर-परागण द्वारा पैदा होनेवाले बीज प्रायः स्वयं-परागित पौधों की अपेक्षा अधिक उत्तम एवं प्रचुर होते हैं।

पर-परागण की क्रिया न केवल कीट-पतिंगों के द्वारा संपन्न होती है, प्रत्युत वायु, जल तथा जीव-जन्तु भी किन्हीं परिस्थितियों में इस क्रिया में मदद दिया करते हैं। गेहूँ, जौ, मक्का जैसे अनाजों का परागण वायु द्वारा परागकणों के उड़ाये जाने से ही होता है। चीड़ जैसे कुछ वृक्षों के परागकण इसी कारण से पंखयुक्त होते हैं कि हवा उन्हें सरलता से उड़ाकर स्त्रीकेसरों तक पहुँचा सके। जल-परागण के उदाहरण 'वैलेसेनरिया' जैसे एकलिंगी जल-पौधों में देखने को मिलते हैं। जीव-जन्तुओं द्वारा परागण की क्रिया में गिलहरी तथा कौए, बुलबुल, लाल मुनिया, शकरखोर जैसे पक्षी विशेष हाथ बँटाते हैं। ये अपने मुँह, ओष्ठ, गलमुच्छे, चोंच आदि में चिपक जानेवाले परागकणों को अनजाने ही एक से दूसरे पुष्प तक पहुँचाने में योग देते हैं।

पर-परागण की क्रिया के सबसे महत्वपूर्ण माध्यम वस्तुतः तितलियाँ, भौंरे, मधुमक्खियाँ चींटियाँ आदि तरह-तरह के मधु के लोभी कीट-पतिंगे होते हैं। ये प्राणी फूलों के रंग-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बिरंगे वेश तथा सुगंध से लुभाकर, मकरन्द की खोज में जब पुष्प के दल-चक्र में प्रवेश करते हैं, तो उनके अंगों में अनजाने ही बहुत-से परागकण चिपक जाते हैं। उक्त परागकणों को चिपकाए हुए ये कीट जब इसी जाति के अन्य पुष्पों पर पहुँचते हैं, तो उनके वर्तिकाग्रों पर अनायास पराग स्थापित हो जाता है। इस प्रकार से परागण की अद्‌भुत क्रिया संपन्न होकर प्रकृति का एक विशिष्ट प्रयोजन सिद्ध हो जाता है। अंजीर, साल्विया (तुख्मे मालंगा) जैसे कई पौधों के पुष्पों की रचना इस प्रकार की होती है कि उनमें परागण कुछ विशेष जाति के कीट-पतिंगों द्वारा ही हो पाता है।

'परागण' के उपरान्त **'गर्भाधान'** या **'संसेचन'** की क्रिया संपन्न होती है। इस प्रक्रिया का आरंभ वर्तिकाग्र पर एकत्र परागकणों के अंकुरण से होता है, जिसके फलस्वरूप उनका आवरण फट जाता और **'परागनलिका'** नामक एक रचना उभरकर वर्तिका के मार्ग से **'बीजाण्ड'** तक जा पहुँचती है। 'परागनलिका' में **'जनन-नाभिक'** के विभाजन से उत्पन्न दो **'नर-युग्मक'** विद्यमान होते हैं। इनमें से एक तो 'बीजाण्ड' के **'मादा-युग्मक'** से जा मिलता है और दूसरा **'नाभिक'** से ! चूँकि 'गर्भाधान' के उपरान्त पुष्प के बाह्यदल, दलपत्र, पुंकेसर, स्त्रीकेसर आदि अंगों की कोई उपयोगिता शेष नहीं रह जाती, अतः वे मुरझाकर सूखने लगते हैं और अंततोगत्वा गिरकर नष्ट हो जाते हैं।

बीज की सृष्टि एवं फल का उत्पादन

'गर्भाधान' की क्रिया हो चुकने पर बीजाण्ड का तेजी से विकास होने लगता है और उसकी कोशिकाएँ विभाजित होकर **'भ्रूण-कोशिका'** एवं **'भ्रूण-बन्धनी'** नामक दो भागों में बँट जाती हैं। **'भ्रूण'** की उत्पत्ति 'भ्रूण-कोशिका' से ही हुआ करती है। वही **'बीज'** का आदि रूप होता है। कोशिका-विभाजन की बदौलत भ्रूण की निरन्तर वृद्धि होती चली जाती है, जिसमें पूर्ण विकसित हो जाने पर निम्न चार आदि अवयव दिखाई देने लगते हैं— १. **'प्रांकुर'** (जिससे तना एवं पत्तियों का निर्माण होता है); २. **'मूलांकुर'** (जिससे जड़ों का विकास होता है); ३. **'बीजपत्र'** (जो कुछ पौधों में प्रारंभिक पत्तियों को जन्म देते और कुछ में खाद्य-सामग्री संगृहीत किये रहते हैं); और ४. **'बीजोधर'** (जो 'प्रांकुर' और 'मूलांकुर' के मध्य-भाग की रचना करता है)। चना, मटर, सेम, इमली, आम, आदि पौधों के भ्रूण में दो 'बीजपत्र' होते हैं। इसीलिए ऐसे पौधे **'द्विबीजपत्री' (डाइकोटाइलेडान)** कहलाते हैं। उधर मक्का जैसे कतिपय पौधों के भ्रूण में एक बीजपत्र होता है, अतएव उन्हें **'एकबीजपत्री' (मानोकोटाइलेडान)** कहा जाता है।

अपने वृद्धि-विकास की पूर्णावस्था पर पहुँचकर 'भ्रूण' निश्चेष्ट बन जाता है और वह एक प्रकार की सुषुप्ति में लीन हो जाता है। उधर बीजाण्ड भी जल की मात्रा के कम पड़ जाने के कारण पहले जैसा स्निग्ध या मुलायम नहीं रह जाता। यही परिपक्व बीजाण्ड **'बीज'** के नाम से पुकारा जाता है। परिपक्व बीज के अंतराल में विद्यमान भ्रूण अपनी उस सुषुप्त निश्चेष्टावस्था में भी पौधे की भावी सन्तान को जन्म देने की सजीव सामग्री सुरक्षित किये रहता है। वस्तुतः यही 'बीज' को उपजाने का प्रकृति का मूल प्रयोजन भी है !

'बीज' की तरह उसे अपने आशय में बसाये रहनेवाले **'फल'** की भी सृष्टि 'अंडाशय' ही से हुआ करती है। वस्तुतः अंडाशय-भित्ति ही विकसित होकर उस 'फल-भित्ति' में परिणत हो जाती है, जिसे हम **'फलावरण'** के रूप में पहचानते हैं। फलों की चित्र-विचित्र दुनिया

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के बारे में इससे पूर्व एक संपूर्ण पृथक् अध्याय हम नियोजित कर चुके हैं। अतः फिर से उनका विवरण दोहराने की यहाँ आवश्यकता नहीं है। केवल इतना भर बता देना पर्याप्त होगा कि प्रकृति ने भाँति-भाँति की विशेषताओं को लिये हुए जो हजारों-लाखों प्रकार के फल उपजाये हैं, उनका एकाकी प्रयोजन—जहाँ तक कि पौधों के निजी हितसाधन का प्रश्न है—केवल बीजों की सुरक्षा तथा अनुकूल परिस्थिति में वायु, जल, पशु-पक्षी, मनुष्य आदि के माध्यम द्वारा दूर-दूर तक उनका विकिरण करना मात्र है—ताकि पौधों के वंशविस्तार का लक्ष्य सफलतापूर्वक प्राप्त किया जा सके! कहना न होगा कि इस उद्देश्य-पूर्ति में प्रकृति ने कमाल की सफलता प्राप्त की है।

अपनी जीवन-लीला समाप्त करके भी पौधा मिटता नहीं, वह पुनः-पुनः नई-नई पीढ़ियों का प्रादुर्भाव करके फिर से मानो नया जन्म धारण करता रहता है!

तुमने गौर किया होगा कि जीव-जन्तुओं की तरह पौधों की भी अपनी-अपनी सुनिश्चित आयु निर्धारित है। यदि गेहूँ, चना, मटर, लौकी, कद्दू जैसे छोटे-छोटे पौधे, अल्प समय तक लहलहाकर तथा अपने-अपने फलों की फसलें उपजाकर, कुछ मास की जीवन-यात्रा के बाद ही मृत्यु-मुख में विलीन होते देखे जाते हैं, तो सिक्वोइवा, कैल, बरगद जैसे विशाल वृक्षों को भी सैकड़ों-हजारों वर्षों तक फूलने-फलने के बाद एक न एक दिन आखिर अपनी जीवन-लीला समाप्त करना ही पड़ती है! परन्तु इस प्रकार मरकर भी ये सब धरती पर से सर्वथा मिटते नहीं! इस चमत्कार का श्रेय उनकी वंशविस्तार-व्यवस्था को है, जिसके अधीन अपने-अपने बीजों से पुनः-पुनः नई पीढ़ियों का प्रादुर्भाव करके वे मानो फिर से नया जन्म धारण करते रहते हैं! उनके ये 'बीज', अपनी जाति-बिरादरी की समस्त लाक्षणिक विशेषताओं सहित पिछली पीढ़ी के समान पुनः नई पीढ़ियाँ उपजाने की जादुई क्षमता लिये हुए, किस प्रकार लंबे अरसे तक एकदम प्रसुप्त और निश्चेष्ट बने रहते तथा अनुकूल परिस्थिति प्रस्तुत होते ही किस प्रकार एकाएक सक्रिय बन अंकुरित होते, इसकी अद्‌भुत अनोखी लीला प्रति दिन हमें अपने खेतों, बाग-बगीचों और वन-उपवनों में देखने को मिलती है! उदाहरणार्थ, सेंम के बीज को ही उगाकर तनिक प्रयोग कर देखो! किस प्रकार उसका द्विदली कलेवर अनुकूल स्थिति में पर्याप्त नमी मिलने पर फूलकर फट जाता और कुछ ही समयोपरान्त बाहर निकलकर उसका 'मूलांकुर' नीचे की ओर बढ़ना प्रारंभ कर देता है! तदुपरांत मिट्टी से बाहर एक मेहराब-सी बनाते हुए 'बीजोधर' किस प्रकार 'प्रांकुर' सहित बीजपत्रों को खींचकर सीधे खड़ा कर देता है (दे० इसी पृष्ठ का चित्र)! कहना न होगा कि बीज के इस 'अंकुरण' के साथ ही पौधे के पुनर्जन्म का प्रथम चरण आरंभ हो जाता है और इस प्रकार वनस्पति-संसार की उस अद्‌भुत अनोखी जीवन-

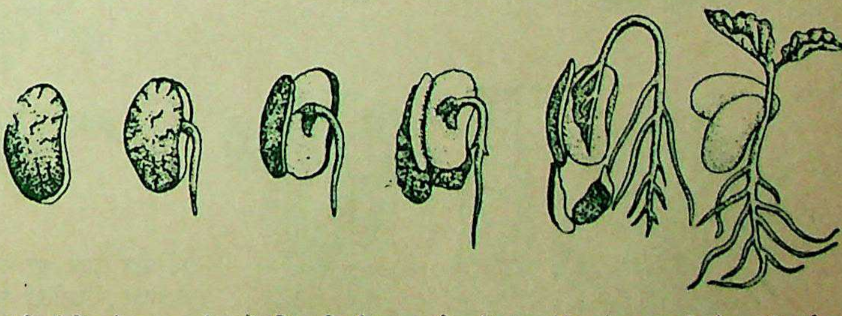

'बीज' के अंकुरण एवं नवोद्‌भिज के विकास की क्रमिक झाँकियाँ :: यह द्विबीजपत्री वर्ग के सुपरिचित सेम के बीज के अंकुरण एवं विकास का सिलसिलेवार चित्रपट है। जड़ों, पत्तियों एवं बीजपत्रों सहित इनके अंतिम विकसित रूप पर ध्यान दो!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लीला की फिर से नई शुरूआत हो जाती है, जिसके अधीन वे निर्धारित समय पर पत्तियों, पुष्पों एवं फलों की बहार लाते तथा आयु की समाप्ति पर मृत्यु के गाल में समा जाते हैं।

विज्ञान की करामात से आज के दिन पौधों की एकदम नई नस्लें पैदा की जा रही हैं

विगत कुछ वर्षों से मनुष्य के हस्तक्षेप से वनस्पतियों की दुनिया में क्रांतिकारी फेरबदल होने लगा है। इसका ज्वलन्त परिचय हमें कृषि और बागवानी के क्षेत्र में देखने को मिलता है। वैज्ञानिकों ने विभिन्न बिरादरियों के पौधों के परस्पर 'संकरण' की विधि से नई-नई किस्मों के बीजों के उत्पादन की जो जादुई कुंजी आज प्राप्त कर ली है, उसी का सुपरिणाम है कि बहुतेरे खट्टे और कड़े गूदेवाले फल एकदम मीठे और मुलायम बना दिए गए हैं! किसानों को अनेकानेक प्रकार के अधिक उपजवाले अनाजों के बीज उपलब्ध होने लगे हैं! बाग-बगीचों में हजारों प्रकार के रंग-बिरंगे नए आकर्षक पुष्पों की छटा छहराने लगी है! यहाँ तक कि प्रयोग के तौर पर कपास के पौधों पर मनमाने वर्ण की रंगीन रुई उपजाने तक का करिश्मा सामने आ चुका है! शायद तुममें से किसी को भी यह ज्ञात न होगा कि आज के दिन जो हमारी सब से लोकप्रिय तरकारियों में स्थान पाये हुए हैं, वे 'गोभी' और 'करमकल्ला' कुदरत के बगीचे में अपने आप विकसित प्राकृतिक उपज नहीं, प्रत्युत 'जंगली गोभी' नामक एक वन्य पौधे के निरन्तर संकरण द्वारा उत्पादित मनुष्यकृत चमत्कार हैं! इसी तरह से 'ब्रोकोली', 'ब्रसेल्स स्प्राउट' तथा 'कर्ली केल' नामक योरपीयन तरकारियाँ भी उक्त जंगली गोभी की ही वंशज हैं--उसको निरंतर संकरित कर-करके ही इन स्वादिष्ट तरकारियों की सृष्टि करने में मनुष्य ने कामयाबी पा ली है। कौन जानता है, इस प्रकार वनस्पतियों के निरन्तर सुधार तथा नई-नई नस्लों की सृष्टि करके वैज्ञानिक गण भविष्य में किस-किस तरह के मनमाने पेड़-पौधे उपजाने का चमत्कार कर दिखाएँगे?

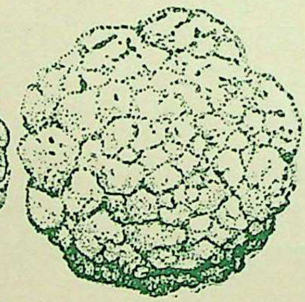

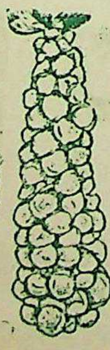

बाईं ओर ऊपर 'करमकल्ला' और 'गोभी' तथा नीचे 'ब्रोकोली', 'ब्रसेल्स स्प्राउट' तथा 'कर्ली केल' नामक प्रसिद्ध तरकारियाँ दिग्दर्शित हैं। ये सब तरकारियाँ दाहिनी ओर प्रदर्शित 'जंगली गोभी' नामक एक सीधे-सादे वन्य पौधे के निरन्तर संकरण द्वारा पैदा की गई हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh